विद्याभास्कर–ग्रन्थ–मरीचिमाला ।

द्वितीय मरीचि ।

अर्थशास्त्र ।

लेखिका–

श्रीमती एम्. फौसेट एल् एल्. डी

सम्पादक–

श्रीगिरिधरशर्म्मा "नवरत्नसरस्वतीभवन"

झालरापाटन.

प्रकाशक–

एस. पी. ब्रदर्स एण्ड कम्पनी झालरापाटन शहर ।

बम्बईके

" निर्णयसागर " छापाखानेमें छपा ।

सन् १९१५. वि० सं. १९७२.

प्रथमावृत्ति १,०००.

मूल्य सादी जिल्दका १) पक्की जिल्दका १॥).

श्रीहरिः

समर्पण ।

जिनका जन्म इस पवित्र भारतभूमिमें हुआ है, जो भारतभूमिका सब प्रकारसे अभ्युदय देखनेके प्रयासी हैं, जिन्होंने भारतीयजातिका संगठन करनेके लिये सत्य संकल्प धार कर्मक्षेत्रमें पैर बढ़ाया है, जिन्हें हिन्दी, हिन्दुस्थान और हिन्दवासियोंसे, ख़ासतोरपर–विश्वप्रवासियोंसे आमतोरपर-प्रेम है, और जो रातदिन निजपरिश्रमसे संसारकी भलाई करते हैं, उन्हीं मेरे भारतीय आत्मबन्धुओंके करमें यह-अर्थशास्त्रका प्रेमोपहार सादर समर्पित है।

गिरिधर।

प्रस्तावना।

अर्थशास्त्र कहनेसे संस्कृत साहित्यमें राजनीति और धनशास्त्र दोनोंका बोध होता है। इन दोनोंका है भी निकटका सम्बन्ध। हमारा इस पुस्तकमें अर्थशास्त्रसे मतलब सम्पत्तिशास्त्र-धनविज्ञान Political Economy से है। बहुतसे मनुष्योंका यह कहना है कि यह शास्त्र सर्वथा नया है-पुराना नहीं-यूरोपमें पैदा हुआ है; परन्तु हमारी सम्मति ऐसी नहीं। संस्कृत साहित्यको सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेवाले ऐसा नहीं मान सकते। उनके मन्तव्यमें आर्यावर्तमें इस विषयमें खूब छान बीन हुई प्रतीत होती है। कालक्रमसे उनके ग्रन्थ लुप्त हो गये वे अब नहीं मिलते। अर्थका लक्षण हमारे प्राचीन ग्रन्थोंमें मिलता है-**यतः प्रयोजनसिद्धिः सोऽर्थः**—यह लक्षण जैसा राजनीतिविज्ञानपर घट सकता है वैसा ही धनविज्ञानपर भी। सम्पत्तिका लक्षण करते हुए प्रोफेसर **जेवनने** अपनी पुस्तकमें अन्यान्य लक्षणोंके साथ ही यह भी लिखा है कि Wealth is useful (useful things are those which directly or indirectly produce pleasure or prevent pain) इसका संस्कृतके लक्षणके साथ कितना सादृश्य है। संस्कृत अर्थशास्त्री उत्साहपूर्वक काम करनेको कहते हैं और वह भी बुद्धिसहित समझदारीके साथ। समयपर काम करनेका उन्होंने विधान किया है। अनुत्साह सब तकलीफोंका कारण बतलाया है, बिचारे बिना कुछ करनेको नहीं कहा और कहा है कि तन मन और इन्द्रियाँ जिसके आधीन नहीं हैं उसके किसी कामकी सिद्धि नहीं होती। **धीपूर्वक एव उत्साहः सेव्यो न केवलः—अकार्यसहं कार्यं यशस्वी न विलम्बेन कुर्यात्-अनुत्साहः सर्वव्यसनानामागमनद्वारम्-नाविचार्यं किमपि कार्यं कुर्यात्-नाजितेन्द्रियस्य कापि कार्यसिद्धिः**—इत्यादि। जो जिस कार्यमें कुशल है उसे ही उस कार्यमें

लगाना चाहिए–जो अर्थशास्त्रीय नियमोंसे अर्थका अनुभव करता है द्रव्यपात्र वही होता है। **यो यत्र कर्मणि कुशलस्तं तत्र नियोजयेत्–सोऽर्थस्य भाजनं योर्थानुबन्धेनार्थमनुभवति**–सम्भूय–समुत्थानकी परिपाटी यहाँपर थी और घरमें पैसा दाँट कर न रक्खा जाता था। जो पुरुषार्थ करनेवाले होते थे उनके स्वाधीन किया जाता था। आजकल जिसे शेर लेना कहते हैं पहले न्यास कहा जाता था और न्यासोंसे भाण्डवल उत्पन्न होता था–**पुरुषेषु न्यासा निक्षिप्यन्ते न पुनर्गेहेषु**–अदीर्घसूत्रता ही अर्थसिद्धिकी सदा साधक होती है–**नदीर्घसूत्रता हि कर्तव्येषु प्रभविष्णूनामर्थसिद्धेरवश्यम्भावः**—थोड़ी सी सम्पत्ति पाकर संतुष्ट हो रहना ठीक नहीं माना–**न तस्य श्रीरभिमुखी यो लब्धार्थमात्रेण भवति सन्तुष्टः—कालेन संचीयमानः परमाणुरपि जायते मेरुः**—इस तरह उद्योग करते हुए संचय करते रहनेको कहा है। जो ऐसा नहीं करते श्री उनके सन्मुख भी नहीं होती। इस तरह छूटे छवाये हमारे प्राचीन वाक्य मिलते हैं और हमारे यहां प्राचीन साहित्य होनेकी सूचना देते हैं। महाकवि **क्षेमेन्द्र** जो एक प्राचीन कवि है और संस्कृत भाषाका बहुत ही सुन्दर लेखक है अपने **चतुर्वर्गसंग्रह***में धनकी आवश्यकता बतलाकर कहता है कि:—

> **" तस्मादलब्धद्रविणस्य लाभे,**
> **लब्धस्य रक्षानियमे यतेत।**
> **संरक्ष्यमाणस्य सदा विवृद्धौ,**
> **वृद्धस्य च स्थानविभागसर्गे॥"**

इस श्लोकसे क्या सूचित होता है? यही कि "नहीं मिले हुए द्रव्यको लाभ करो। पाये हुए की रक्षा करो–रक्षा करनेसे मतलब यह नहीं है गाड़ रक्खो या ज़ेवर वगैरा बनाकर घिसने दो–बल्कि उसे पूंजी बनाकर ऐसी तरकीब करो कि वह बढ़े और बढ़े हुए को योग्य स्थलमें बाँटा जाय"। अब यहाँपर हम अपने पाठकोंसे अनुरोध करते हैं कि इस श्लोकको जो उस समयका बना हुआ है कि जिस समय पश्चिममें ज्ञानरश्मिका प्रादुर्भाव भी नहीं हुआ था–वर्तमान सम-

---

*संस्कृत रसिकोंको क्षेमेन्द्रके ग्रन्थ अवश्य पढ़ने चाहिए। उन्हें बड़ी मधुर भाषा और सुन्दर विचार पढ़नेको मिलेंगे। क्षेमेन्द्रकी पुस्तकें **निर्णयसागर प्रेस** पो० कालबादेवी बम्बईसे मिलेंगी।

यके अर्थविज्ञानके मूल सिद्धान्तोंके साथ सूक्ष्मतासे मिलान करें उन्हें जान पड़ेगा कि यह विज्ञान यहाँपर था। हाँ इतना हम मानते हैं कि हमारे यहाँपर धर्माविरोधसे अर्थ संपादन करना लिखा है। धन सम्पादन करनेमें क्या क्या बाधायें हैं ये भी क्षेमेन्द्रके ही मुखसे सुनिये, इतना हम और बढ़ाये देते हैं कि ये दोष व्यक्तिगत हों, या, जातिगत, सम्पत्तिके बाधक अवश्य हैं:—

"हिमासहत्वं रवितापभीतिः,
कथामतिर्मार्गजनप्रतीक्षा।
लज्जाभिमानः क्षणसन्मुखत्वं,
नक्षत्रचर्चा च धनस्य विघ्नाः॥"
"मौग्ध्यं प्रमादोऽविश्वासः कुसङ्गः क्लेशभीरुता।
पञ्च संकोचदा दोषा पद्मिन्या इव सम्पदः॥"

अर्थात् धन प्राप्तिके ये विघ्न हैं:—शीतोष्ण सहनेकी शक्ति न होना, गपसपमें वक्त खोना, सैर तमाशेमें लगे रहना, काम करनेमें लज्जा करना, घमंड करना, या कामको नाममात्रके लिये देखना (कभी कुछ कभी कुछ करते रहना, जमकर काम न करना) ग्रहोंके भरोसे बैठे रहना इत्यादि।

मूढ़ता (कामकी जानकारी न होना) लापरवाही करना, साख न रखना, खोटी संगतिमें पड़ना और मिहनत करनेसे डरना ये पाँचों दोष सम्पत्तिको संकुचित कर डालते हैं।

अस्तु, आज हमने अपने पाठकोंके साम्हने यूरोपीय अर्थशास्त्र रक्खा है। यह पुस्तक हमने **एम्. जी. फौसेट एल्. एल्. डी.** की **'पोलिटिकल इकानामी'**के आधारपर लिखी है। उस साल हमने जब **मेओ कालेज** अजमेरके डिप्लोमा और पोस्टडिप्लोमा क्लासके कोर्समें इस पुस्तकको देखा तो हमें इसे हिन्दीमें लिख देनेका ख़ियाल हो आया। हमारे मित्र पं० **महावीरप्रसादजी द्विवेदी**का **'सम्पत्तिशास्त्र'** हिन्दीमें होनेपर भी हमें बच्चोंके लिये इस पुस्तकको लिखनेकी रुचि हो आई। यह पुस्तक कैसी हुई है और कैसी नहीं, इसको कहनेका हमें अधिकार नहीं है; क्योंकि हमसे जैसी कुछ बन पड़ी बनाकर विज्ञोंके सन्मुख रख दी है। जिन ग्रन्थोंने हमें इस मार्गमें प्रवेश करनेको उत्साहदाताका काम किया हम उनके नाम धन्यवादपूर्वक प्रकट किये बिना नहीं रह सकते।

नं.	नाम	कर्ता	प्रकाशक
१	Political Economy	प्रोफेसर जेवन्स	Macmillan & Co.
२	Political Economy	एम्. जी. फासेट एल् एल्. डी.	,,
३	सम्पत्तिशास्त्र	श्रीमहावीरप्रसादजी द्विवेदी	इंडियन प्रेस प्रयाग
४	अर्थनीति	प्रो. योगीन्द्रनाथ समाद्दार	प्रो. योगीन्द्रनाथ समाद्दार
५	अर्थशास्त्र (मिल)	अंबालाल साकरलाल देसाई	गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी अहमदाबाद
६	अर्थशास्त्रना मूलतत्त्वो (फौसेट)	चिमनलाल हरिलाल सेतलवाड़ बी. ए. एल् एल्. बी.	,,
७	ब्रिटिश हिंदुस्थाननुं अर्थशास्त्र (प्रो.सरकार)	मोतीशंकर उदयशंकर	मोतीशंकर उदयशंकर
८	अर्थशास्त्राचें मूलतत्त्व	प्रो. भाटे एम्. ए.	गोविंद चिमणाजी भाटे एम्. ए.
९	हिंदुस्थाननो आर्थिक इतिहास (R. C. Datta)	उत्तमलाल केशवलाल त्रिवेदी, बी. ए. एल् एल्. बी.	गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी अहमदाबाद
१०	देशी चेम्बर्सनुं मासिकके कई एक नम्बर	मासिकपत्र	कामर्सकी सभा बंबई
११	फुटकर पेपरोंके लेख रिपोर्ट आदिका देखना	मासिकपत्र समाचारपत्र रिपोर्ट ईसाइक्लोपीडिया आदिके लेखक	अनेक स्थल

इस तरह इस विषयमें थोड़ा बहुत ज्ञान हो जाने बाद मेरी इच्छा हुई कि "हमारे राजकुमार मेओकालेजमें अर्थशास्त्रके विषयमें क्या सीखते हैं" यह बात हमारे हिन्दी प्रेमियोंको भी मालूम हो जाय, हमने **मिसिस फौसेट**के ग्रन्थको हिन्दीमें लिखा है। यह अर्थशास्त्र शाब्दिक अनुवाद नहीं है नियमोंका अनुवाद होनेपर भी उदाहरण अपने तौरपर दिये हैं और उनमें कई एक तो हमारे स्वयं अनुभव किये हुए तथा जान पहचानके मनुष्योंके दिये हैं। इन्हें लिखनेमें हमारा यही उद्देश रहा है कि उन उन विषयोंको लोग अच्छी तरहसे समझ लें। हमारे विचारमें इस समय भारतको यदि कोई सबसे बड़ी आवश्यकता है तो इसी बातकी है कि उसका जातीय्र–साहित्य सर्वाङ्ग पूर्ण हो। यदि हमारी यह पुस्तक, या, अन्यान्य पुस्तकें जो लिखी हैं और लिखेंगे, साहित्यके प्रासादनिर्माणमें, नीवमें डाली जानेवाली कंकरियोंका भी काम देंगी–अर्थात्–बालकोंको अल्पसे–अल्प ज्ञान देनेका भी साधन होंगी–तो हम समझेंगे कि हमारा श्रम सफल हो गया।

इस पुस्तकको पं० **नाथूरामजी प्रेमी**की देखरेखमें छपवाया है और **कुन्दनलालजी** जैनने इसका प्रूफ़ देखनेमें पूरी पूरी सहायता की है, इसलिये, इन दोनों महाशयोंको हम धन्यवाद देते हैं।

निर्णयसागर प्रेसके संचालकोंने बड़े परिश्रमसे, स्वच्छतापूर्वक इसे छापा है इसलिये, उन्हें भी धन्यवाद दिये बिना हमारी लेखनी नहीं रुकती।

जिन सज्जनोंके द्रव्य साहाय्यसे यह पुस्तक मुद्रित हो सकी उन्हें धन्यवाद न देना उचित नहीं हो सकता। हमारी आन्तरिक कामना है कि इन सज्जनोंके हाथसे खूब साहित्य-वृद्धि हो।

प्रत्यक्षरूपसे, या अप्रत्यक्ष रूपसे, जिन जिन महानुभावोंसे हमें किसी भी तरहकी सहायता मिली जिसके कारण हम इस पुस्तकके लिखने योग्य, स्वास्थ्यके साथही ज्ञान भी लाभ कर सके, उन सबके हम कृतज्ञ हैं और उनकी कृपाका यह फल–भीलनीके बेर सुदामाके तन्दुलकी भांति–पवित्र भारतभूमिके तेतीस कोटि भाइयोंके सन्मुख रखते हैं–आशा है कि हम सब इस फलका भोग लगाते हुए—"**समानो मन्त्रः समितिः समानी**"–के पाठको पढ़ कर—**समानी प्रपा सह नो अन्नभागः**–का अनुभव करते हुए विश्वानन्दके कारण होंगे। तथास्तु।

नवरत्नसरस्वतीभवन
झालरापाटन,
(राजपूताना.)

गिरिधरशर्मा।

अनुक्रमणिका।

विषय प्रवेश-अर्थशास्त्रके प्रतिपादित विषय.
जिस वस्तुके परिवर्तनमें मूल्य उत्पन्न हो उसे सम्पत्ति कहते हैं-
सिक्केका (रुपया पैसेका) सच्चा स्वरूप-अप्रतिबद्ध व्यापारनीति-प्रश्न क-घ

१ प्रथम भाग।

सम्पत्तिकी उत्पत्ति।

उत्पत्तिके प्रधान तीन कारण।

१ प्रकरण-ज़मीन.

ज़मीन सम्पत्तिके उत्पादनका एक साधन है-ज़मीनकी उत्पादकशक्ति कैसे बढ़े-छोटे और संगीन पायेपर खेती-स्वयं अपनी ही ज़मीनमें खेती करनेवाले और लगान देकर दूसरोंकी ज़मीनमें खेती करनेवाले किसान-प्रकरणपर प्रश्न १- ५

२ प्रकरण-परिश्रम.

परिश्रम सम्पत्तिके उत्पादनमें एक आवश्यक कारण है-सम्पत्तिके उत्पादनमें श्रम किसतरह काम आता है-किसी भी चीज़पर कौशलपूर्ण मिहनत करनेसे उसका मूल्य कितना बढ़ सकता है-परोक्ष उत्पादक श्रम-अनुत्पादक श्रम-श्रमविभाग-पहले लाभका उदाहरण-दूसरे लाभका उदाहरण-तीसरे लाभका उदाहरण-चौथा लाभ-अप्रतिबद्धव्यापार कार्यका विभाग है-साथ साथ काम करना-औज़ार और यंत्र-बुद्धि-सदाचार-विश्वासपात्रता-उत्पादक और अनुत्पादक व्यय-प्रकरणपर प्रश्न ५-२१

३ प्रकरण-पूंजी.

पूंजी-धनभंडार-एक उदाहरण-दूसरा उदाहरण-जंगमपूंजी स्थावर पूंजी-सम्भूयसमुत्थान-पूंजीकी बाढ़-प्रकरणपर प्रश्न २१-३९

२ दूसरा भाग।

सम्पत्तिका परिवर्तन.

विषयप्रवेश-

सर्वसाधारणकी मालिकी-प्रश्न ४०-४३

१ प्रकरण-मोल और दाम, या मूल्य और क़ीमत

मोल-अदलाबदली-दाम या क़ीमत-प्रकरणपर प्रश्न ... ४४-४९

२ प्रकरण–सिक्का.

सिक्केका व्यापार–कुदरती मोल–आसानीसे इधरसे उधर लेजाया जासकना अक्षयता–समता–विच्छेद्यता–मोलकी स्थिरता–बायमेटेलिज्म–जल्दी पहचानने योग्य होना–सिक्का ही सम्पत्ति नहीं है–प्रकरणपर प्रश्न ... ४९–६३

३ प्रकरण–वस्तुओंका मूल्य.

खपती और संग्रहका क़ीमतपर प्रभाव–प्रथम श्रेणीकी चीज़ोंकी क़ीमत कैसे निश्चित की जाती है–खेतीकी पैदावारकी क़ीमत–खेतीबाड़ीकी पैदा की हुई वस्तुओंकी क़ीमत जिन जिन नियमोंके अनुसार होती है उनका संक्षेपमें विचार–सिद्धपदार्थोंकी क़ीमत नियमित करनेवाले कारण–पूंजीपर मिलता हुआ नफ़ा–क़ीमत और नफ़ेका सम्बन्ध–क़ीमतपर खपती और संग्रहसे होनेवाले प्रभावका संक्षेपसे वर्णन–प्रकरणपर प्रश्न ६४–९४

४ प्रकरण–सिक्केका मोल.

सोने और चांदीकी खपतीपर असर करनेवाले प्रसंग–खपती और संग्रहके बढ़नेसे सिक्केके मोलपर जो असर होता है उसे बतानेवाले उदाहरण–केलीफ़ोर्निया और आस्ट्रेलियामें सोना निकल आनेसे हुआ प्रभाव–प्रकरणपर प्रश्न ९५–१०८

३ तीसरा भाग।

सम्पत्तिका विभाग.

विषय प्रवेश–

लगान मज़दूरी और व्याज अलग अलग देशोंमें अलग–अलग तरह बांटा जाता है. प्रश्न... ... ... १०९—११२

१ प्रकरण—लगान.

लगानकी व्याख्या—लगानका स्वरूप–रिकार्डोके लगान सम्बन्धी सिद्धान्त–खेती होनेकी सीमा–मनुष्यसंख्या बढ़नेसे खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ती है–रिकार्डोके सिद्धान्तका सार–मनुष्यसंख्याका बढ़ना प्रजाके अमनचैनका चिन्ह नहीं है–लगान देना पड़े इससे खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ गई ऐसा नहीं समझा जासकता–प्रकरणपर प्रश्न ... ... ११३—१२६

२ प्रकरण—परिश्रमकी तनख्वा.

स्पर्धासे मुक़र्रर हुई तनख्वा—तनख्वाका भाव निश्चित करनेवाले कारण–

जनसंख्याका तनख्वापर प्रभाव–अमनचैन बढ़ानेवाली तरकीबोंकी ज़ूरूरत–आबादीके बारेमें मेलथस का मत (इसीमें भारतीय विचार) विदेश गमन–मिहनतकी उत्पादकशक्ति बढ़नेका तनख्वाके भावपर प्रभाव–स्थानिक और तात्कालिक कारणोंसे तनख्वाकी कमीबेशी होती रहती है–क्या चीजें महँगी हो जानेसे तनख्वा बढ़ती है–खूब स्पर्धा चल रही होती है तब व्यापारमें स्थान विशेषपर मंदी होनेसे तनख्वापर जो असर पड़ता है वह थोड़े समय-तक ही रहता है–परोपकार की बुद्धिसे जो सहायता दीजाय वह अर्थशास्त्रीय नियमोंके प्रभावको रोकनेवाली न होकर उसके फैलानेवाली होनी चाहिए–अलग अलग कामोंमें मिहनतकी उजरत कमीबेशी होती है, इस विषयमें अर्थतत्त्वज्ञ एडमस्मिथके बतलाये हुए कारण–प्रकरणपर प्रश्न १२६—१५४

३ प्रकरण—पूंजीका नफ़ा.

पूंजीपर जो नफ़ा मिलता है उसमें तीन अंश मिले हुए होते हैं–एक देशमें एक ही समयमें सारे कामधंदोंमें ब्याजका दर एक ही होना चाहिए–जैसे जैसे सम्पत्ति और मनुष्यसंख्याकी वृद्धि होती है वैसे ही वैसे ब्याजके दरमें कमी होती है–कम होती हुई उत्पादकशक्ति–चीज़ोंकी क़ीमतके बढ़नेसे यह नहीं कहा जा सकता कि नफ़ा भी बढ़ जाता है–एक उदाहरण–पूंजी परदेशमें जानेसे स्पर्धाका प्रदेश बढ़ता है–प्रकरणपर प्रश्न ... ... १५४—१७१

४ प्रकरण—पंचायती, हड़ताल और पूंजी व परिश्रमके मेल मिलाप-का करना.

पंचायती—हड़ताल–व्यवसाय समितियाँ कारीगरोंको ज़्यादा तनख्वा दिलानेके उपाय किया करती हैं–मेलमिलाप–प्रकरणपर प्रश्न १७२—१८३

४ चौथा भाग ।

परदेशके साथ व्यापार, साख, विश्वास और कर.

विषय प्रवेश–

१ प्रकरण—परदेशके साथ व्यापार.

परदेशके साथ व्यापार करनेमें दोनों देशोंको फ़ायदा तब होगा जब विनिमय की जानेवाली वस्तुओंका उत्पादनखर्च दोनों देशोंमें जुदा जुदा हो–खपती और संग्रहकी बराबरी होनेसे यह निश्चित होता है कि किन किन

शरतोंसे विनिमय होगा–परदेश जाती हुई चीज़ोंका संग्रह उनकी खपतीके साथ कैसे समान होता है ?–अन्योन्य व्यापार–जब दो देशोंमें व्यापार होता है तो दोनों देशोंको लाभ होता है। इस लाभका परिणाम दूसरे देशसे आई हुई चीज़की अमुक देशमें जितनी खपती होती है उससे उलटा होता है–मालका निकास और आमदनी समान होनेकी तरकीब होती है–प्रकरणपर प्रश्न ... ... १८४—२०३

२ प्रकरण—साख विश्वास और उनका क़ीमतोंपर असर.

बैंक–सम्भूयसमुत्थान–हुंडी–मुद्दती हुंडी–दर्शनी हुंडी–चेक या हुंडी पुर्जी वग़ैरा–नावें लिखनेकी रीति–साखसे खरीद करनेकी शक्ति बढ़ती है–जिसके तुड़ानेसे रुपया मिलजाय और जिसके तुड़ानेपर रुपया न मिले ऐसे काग़ज़ी सिक्के का चलन–वस्तुओंकी सामान्य क़ीमतपर विश्वासके लेनदेनका लाभदायक असर होता है–काग़ज़ी चलनसे प्रत्यक्ष बचत होती है–प्रकरणपर प्रश्न २०४—२२४

३ प्रकरण—कर.

कर डालनेकी आवश्यकता–कर डालनेके सम्बंधमें एडमस्मिथके चार नियम–पहले नियमका बर्ताव–दूसरे नियमका बर्ताव–तीसरे नियमका बर्ताव–चौथे नियमका बर्ताव–कच्चे मालपर महसूल–चीज़ोंपर प्रत्यक्ष कर लेना बन नहीं सकता–करका बोझा; प्रत्यक्षकर और परोक्षकर लेनेकी रीति–आयकर–जायकर प्रायः प्रत्यक्षकर है, किसी समय परोक्ष भी हो जाता है–चीज़ोंपर जो कर डाला जाता है वह आवश्यक चीज़ोंपर न डालकर ऐश आरामकी वस्तुओंपर डाला जाना चाहिए–प्रकरणपर प्रश्न ... ... २२४—२४२

परिशिष्ट।

विषय प्रवेश—

१ प्रकरण—सामान्य स्वामित्वकी योजना.

ओवन और फ़ुरियरकी तरकीब–सेन्ट सायमोनकी तरकीब–फ़ुरियरकी तरकीब... ... ... २४३—२४५

२ प्रकरण—फौसेटकी बेरोकटोक व्यापारनीति ... २४५—२४९

अर्थशास्त्र।

विषय-प्रवेश।

(क)

"सम्पत्तिका स्वरूप, उसकी उत्पत्ति उसकी अदलाबदली और उसका विभाग जिन नियमोंसे होता है उननियमोंके निर्णय करनेवाले शास्त्रको **अर्थशास्त्र** कहते हैं।

इस प्रकार जब अर्थशास्त्रका विषय सम्पत्ति है तब सबसे पहले यह बताना आवश्यक है कि सम्पत्ति किसे कहते हैं

जिस वस्तुके परिवर्तनमें मूल्य उत्पन्न हो उसे सम्पत्ति कहते हैं:—हम थोड़ासा विचार करेंगे तो हमें मालूम हो जायगा कि बहुतसी चीजें बड़ी ही उपयोगी होती हैं और आवश्यक भी; परन्तु वे सम्पत्ति नहीं कही जा सकतीं। हवा मनुष्यजीवनके लिये बड़ी ही उपयोगी है—बहुत ही आवश्यक है—यहाँतक कि उसके बिना मनुष्य जी नहीं सकता, परन्तु वह बिना किसी प्रकारके परिश्रमके प्रत्येक मनुष्यको मनमानी मिल जाती है, इसलिये हम किसीको कितनी भी हवा क्यों न दें, वह उसकी एवज़में हमें कुछ भी देनेको तैयार न होगा। इसी तरह सूरजके प्रकाशका कुछ मूल्य नहीं मिल सकता और कितनी ही जगह तो पानीकी भी क़ीमत नहीं मिलती। परन्तु जहाँपर प्रकृतिका दिया हुआ जल सब मनुष्योंको पूरा नहीं मिलता, उसके पानेके लिये कुछ श्रम करना पड़ता है वहाँपर वह सम्पत्ति होजाता है। पहलेके मनुष्योंका विचार था कि रुपये पैसे ही का नाम सम्पत्ति है। जिस देशमें जितना ज्यादा सोना चांदी है वह देश उतना

ही ज्यादा सम्पत्तिशाली है। इस विचारसे वे चाहते थे कि ऐसी क़ीमती धातुएँ बाहर जितनी कम जायँ उतना ही अच्छा और इसी लिये व्यापारपर भाँतिभाँतिके बनावटी प्रतिबन्ध लगाये जाते थे। ऐसा होनेका कारण यह है कि रुपयेसे सम्पत्तिका नाप होता है। किसी मनुष्यकी वार्षिक उत्पन्नका जब हम विचार करते हैं तब यही विचार करते हैं कि उसकी इतने रुपयेकी वार्षिक आय है और किसी देशके आय-व्ययके विषयमें भी यही कहा जाता है अमुक देशकी इतने करोड़ रुपये सालकी आय है और इतने करोड़ रुपये सालका ख़र्च। वास्तवमें देखा जाय तो रुपया सम्पत्तिकी एक संज्ञा है। और, संज्ञाको ही संज्ञी मानलेनेकी उन लोगोंने भूलकी जिन्होंने रुपया और सम्पत्तिको एक ही माना। वे दोनोंके भेदको नहीं समझे।

इस कारणसे और इसी तरहके और और कारणोंसे रुपयेके सच्चे स्वरूपको लोगोंने नहीं समझा। इस बातको सप्रमाण सिद्ध करनेके लिये जिन प्रजाओंने चांदीके सिक्के नहीं चलाये और अपना व्यवहार चलाया उनके दृष्टान्त देना ठीक होगा। इस कामके लिये हमें इतिहास देखना चाहिए। एक समय ऐसा था कि चीन चाहकी डिबियाओंको रुपयेकी जगह काममें लाती थी। अबतक कई हिन्दुस्तानी सिक्केकी जगह कोड़ियोंको काममें लाते हैं। कितने ही अरब रुपयेका काम ऊंटोंसे लिया करते थे। इन लोगोंकी भूल वैसी ही हुई जैसी रुपयेको सम्पत्ति समझनेवालोंने की इनका ख़ियाल था कि जहाँ चायके डिब्बे नहीं, जहां कोड़ियां नहीं, या जहां ऊंट नहीं, वह देश कोरा दरिद्र है। इन्हें कभी यह जानना होता था कि अमुक देश कितना

सम्पत्तिशाली है तो वे पूछा करते थे कि वहाँ कितने ऊंट हैं इत्यादि।

प्रत्येक देशके इतिहासमें ऐसा समय भी देख पड़ता है कि किसी भी प्रकारके सिक्के (फिर वह कैसा ही जंगली हो) का उपयोग नहीं होता था और ऐसे समय कारोबार चीज़ोंकी अदला-बदलीसे ही होता था।

सिक्केका (रुपया पैसेका) सच्चा स्वरूपः—सिक्का मूल्यका एक मौप है। बदला करनेका एक साधन है। सब कोई मिलकर एक वस्तुको और और सारी चीज़ोंका मूल्य करनेके लिये मुक़र्रर करले उसे रुपया पैसा कहते हैं। हम ऊपर कह गये हैं कि इस प्रकार पसन्द की हुई वस्तु सोने चांदीकी ही होनी चाहिए ऐसा कुछ नियम नहीं है। वास्तवमें देखा जाय तो किसी भी एक वस्तुको मूल्यके मापके लिये मुक़र्ररकी जा सकती है।

सिक्का अदलाबदली करनेका साधन है इस कहनेका अर्थ यह है कि एक वस्तुका दूसरी वस्तुके साथ पलटना प्राय:सिक्केसे होता है। किसी किसानको अनाज बेचकर खात लेना हो तो वह गेहूं बेचके सिक्का रुपया पैसा लाता है और रुपये पैसेसे खात।

सम्पत्ति और सिक्का एक ही है इस भूलमें पड़कर लोगोंने ऐसी राजनीति चलाना प्रारम्भ किया कि जैसे बने वैसे देशमें चांदी सोनेका ढेर लग जाय। इसी बुद्धिसे प्रेरित होकर निकासके मालपर तो अमुक प्रकारसे इनाम मुक़र्रर कर दिया और आवटके मालपर बड़े बड़े कर लगा दिये। ऐसा करनेका कारण यह था कि वे अपने देशसे रुपया पैसा बाहर नहीं जाने देना चाहते थे। यह उनकी बे समझी थी कि वे रुपये पैसेको ही

सम्पत्ति मानते थे। इंग्लेंडके मनुष्योंकी इस नादानीको दूर करने-वाला पहला पुरुष एडमस्मिथ था। इसीने इंग्लेंडके मनुष्योंको सिकेका सच्चा स्वरूप बताया। और समझाया कि व्यापारके जितने प्रतिबन्ध हैं उठा दिये जाँय तो देशमें मालकी आय और निकास ठीक ठीक होने लगे।

अप्रतिबद्ध व्यापारनीतिः—इस विषयका हम आगे चलकर ज्यादा विवेचन करेंगे। यहाँपर इतना ही बतला देना ठीक होगा कि व्यापारको बिना किसी प्रकारकी रोकटोक किये स्वाभाविक रीतिसे चलने देनेका नाम अप्रतिबद्ध व्यापारनीति है।

पहले हम अपने विषयके तीन बड़े बड़े विभाग कर गये हैं उनमें से सबसे पहले सम्पत्तिकी उत्पत्तिके विषयमें कहेंगे।

प्रश्न।

(१) अर्थशास्त्र किसे कहते हैं?
(२) सम्पत्ति किसका नाम हैं?
(३) रुपया या सिक्का क्या होता है?
(४) समय समयपर लोग सिक्केकी जगह क्या काममें लाये?
(५) अदलाबदली किसे कहते हैं?
(६) व्यापारपर प्रतिबन्धनीतिका क्या हेतु था और उसमें क्या भूल थी?
(७) अब कौनसी नीति चल रही है?

विशेष प्रश्न।

(१) किसी मनुष्यके पास रुपया पैसा न हो तो वह सम्पत्तिशाली है या नहीं?
(२) स्पार्टाके लोग सोना काममें नहीं लाते थे वे धनी थे या नहीं?

अर्थशास्त्र।

प्रथम भाग।

सम्पत्तिकी उत्पत्ति।

उत्पत्तिके तीन प्रधान कारणः—इस भागमें हम केवल सम्पत्तिकी उत्पत्तिके विषयमें विचार करेंगे। ज़मीन मिहनत और पूंजी ये तीनों सम्पत्तिकी उत्पत्तिके प्रधान कारण हैं। इन तीनोंका एक साथ प्रयोग करनेसे सम्पत्तिकी उत्पत्ति होती है। इन तीनों प्रधान कारणोंके व्यापार, साफ़ साफ़ समझमें आजायं और सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें इनमेंका प्रत्येक जो विशेष २ काम करता है उसका यथार्थ निर्णय किया जासके, इस लिये इस भागमें एक ज़मीनका, एक मिहनतका और एक पूंजीका, यों तीन प्रकरण लिखे जांयगे।

पहला प्रकरण।

ज़मीन।

ज़मीन सम्पत्तिके उत्पादनका एक साधन हैः—थोड़ाभी विचार करनेसे मालूम हो जाता है कि सम्पत्तिकी उत्पत्ति बिना ज़मीनके होती ही नहीं है। व्यापारकी ऐसी कोई वस्तु हैही नहीं, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रीतिसे ज़मीनसे न उत्पन्न हुई हो। हम अपने घरकी चीज़ोंको—अपने कपड़े लत्तोंको देखें तो उनमें एकभी वस्तु ऐसी न देख पड़ेगी जो ज़मीनसे न पैदा

हुई हों। हम सूती कपड़े पहनते हैं वे ज़मीनसे ही पैदा हुए हैं, इस बातमें कोई सन्देह नही है, क्योंकि सूत रुईसे बनता है और रुई ज़मीनसे पैदा होती है। और ऊनी कपड़े भी ज़मीनसे-ही पैदा होते हैं, थोड़ासा विचार करनेसे यह भी जान पड़ेगा कि ऊनी कपड़े भैड़ोंके शरीरके बालसे बनते हैं, भैड़ें घास वगेरा खाकर जीती हैं; ये सारी चीजें ज़मीनमें ही होती हैं। जितने पदार्थ बनते हैं वे खनिज उद्भिज्ज और प्राणिज वस्तुओंसे बनते हैं और ये वस्तुएं ज़मीनमें पैदा होती हैं।

सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें ज़मीन एक ऐसा आवश्यक साधन है कि प्राचीन समयके अर्थशास्त्रवेत्ताओंने यहांतक कहा था कि सम्पत्तिकी उत्पत्तिका एक मात्र साधन ज़मीन ही है। परन्तु हम आगे चलकर बतावेंगे कि सम्पत्तिके उत्पादनमें न केवल ज़मीन प्रत्युत मिहनत और पूंजीकीभी आवश्यकता है।

ज़मीनकी उत्पादक शक्ति कैसे बढ़े:—ऐसी बहुतसी बातें हैं जिनसे ज़मीनकी उत्पादक शक्ति बढ़ सकती है। इंग्लेंडमें रसायनशास्त्रकी सहायतासे नये नये खात बनाये जाते हैं। इनको काममें लानेसे ज़मीनकी पैदावार बढ़ाई जासकती है। और वहांपर खेती बाड़ीके बहुतसे काम यंत्रोंसे किये जाते हैं, इससेभी ज़मीनकी उत्पादक शक्ति बढ़ती है। अफ़सोस है कि हमारे देशमें ऐसे २ सुधार अच्छी तरह नहीं हुए। हमारे देशका आधार खेतीपर है, इस बातका विचार करते हुए ऐसे सुधारोंके शीघ्रही दाखिल होनेकी बड़ी भारी आवश्यकता है।

छोटे और संगीन पायेपर खेती:—अभीतक इस विषयमें बड़ाही मतभेद है कि इन दोनों बातोंमेंसे किसमें विशेष

लाभ है और किसमें विशेष हानि। संगीन पायेपर खेती करनेमें मुख्य लाभ यह है कि किसान सुधरे हुए यंत्रोंका उपयोग सहजमें करसकता है। क्योंकि ९ बीघेकी जगह ९०० बीघेकी खेती करनेवाला पुरुष, स्टीमसे चलनेवाले हलको काममें लासकेगा, कूड़ा करकटको दूर करनेवाले यंत्रका उपयोग करसकेगा और इससे उसे लाभ होगा। कम खर्चमें वह नये नये सुधरे हुए यंत्रोंका उपयोगभी करसकेगा, क्योंकि यह नियमही है कि १०० जानवरोंके रखनेमें जितना औसत १ जानवरके रखनेका आवेगा उतना ही औसत ५०० जानवरके रखनेमें नहीं आसकता।

परन्तु जो छोटे पायेपर खेती करते हैं वे स्वयं बहुत कुछ करसकते हैं और कामपर लगाये हुए मनुष्योंकी निगरानीभी अच्छी तरह कर लेते हैं। इसलिये ग़फ़लतसे उनका काम बिगड़नेकी सम्भावना नहीं है। क्योंकि हमें अपना काम करनेकी आपको जितनी फ़िकर होती है उतनी दूसरेको नहीं होती।

स्वयं अपनी ही ज़मीनकी खेती करनेवाले और लगान देकर दूसरोंकी ज़मीनमें खेती करनेवाले किसानः—हम ऊपर दिखला गये हैं कि छोटे पायेकी खेतीमें, किसानके निजी परिश्रमसे, बहुत अच्छा काम होता है, परन्तु यह बात बहुत करके उन किसानोंपर घटती हैं जो अपनी ही मालिकीकी ज़मीनमें खेती करते हैं। क्योंकि जब किसानके जीमें यह होता है कि जैसे मैं ज्यादा मिहनत कर ज्यादा पैदावार बढ़ाऊंगा लगानभी बढ़ जायगा और लाभ ज़मीनके मालिकको ही होगा, मुझे कुछ नहीं अतएव वह निराश हो जाता है। परन्तु अपनी मालिकीकी

ज़मीनवाले किसानकी बात न्यारी ही है। वह समझता है कि जितनी मिहनत मैं करूंगा उसका सारा लाभ मुझेही पहुंचेगा। बम्बईमें तीसही बरसके ठेकेसे ज़मीन दीगई है। इससे किसान उसमें द्रव्य और मिहनत लगाते हुए अचकचाते हैं, परन्तु बंगालका यह हाल नहीं है। वहां स्थायी बंदोबस्त है। इससे वहांकी भूमि "सजला सुफला शस्यश्यामला" होगई है।

बहुतसी वस्तुएं ऐसी हैं कि जिनकी पैदाइश अच्छी तरह करनेके लिये छोटे पायेपर खेती करना ही आवश्यक है। मेवा वग़ैरा ऐसी चीज़ें हैं कि इनकी पैदाइश करनेके लिये, बहुतही अच्छी देखरेख करनेकी आवश्यकता है–बहुतही संभाल रखनेकी ज़रूरत है। ऐसी संभाल या देखरेख मनुष्य स्वयं ही रख सकता है, तनख़्वाह देकर रक्खे हुए मनुष्य नहीं; क्योंकि उनकी दृष्टि ज्यों त्यों माथे पड़ी बेगार दूर कर अपनी तनख़्वाह सीधी करनेकी ओर होती है। स्वयं देखरेख रख सकनेके लिये छोटे पायेपर खेती करना चाहिए।

हम आगे चलकर बतायंगे कि संगीन और छोटे पायेपर खेती करनेमें; नोकरोंके साथ, उत्पन्न हुए मालमेंसे अमुक भाग देनेका करार किया जाय और तनख़्वाह नक्द न मुकर्रर की जाय तो अच्छा लाभ उठाया जासकता है।

प्रश्न

१ सम्पत्तिकी उत्पत्तिके तीन कारण कौनसे हैं?

२ सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें ज़मीनके बिना काम क्यों नहीं चल-सकता?

३ ज़मीनकी पैदावार कैसे बढ़ सकती है ?

४ छोटे और संगीन पायेपर खेती करनेके हानि और लाभ क्या हैं ?

५ अपनी मालिकीकी ज़मीन और लगानकी ज़मीन हांकनेवाले—किसानोंमें क्या भेद माना जाना चाहिए ?

विशेष प्रश्न.

एक ग्रन्थकारने अपने ग्रन्थ स्वामित्वका हक़ बेचदिया। इसमें उसे ग्रन्थके एवज़ में अमुक रक़म मिलगई इसवास्ते ग्रन्थ सम्पत्ति हुआ। अब बतलाओ कि इस सम्पत्तिके उत्पादनमें ज़मीन और पूंजीने कुछ भाग लिया है या क्या; और लिया है तो किस तरह ?

दूसरा प्रकरण।

परिश्रम।

परिश्रम सम्पत्तिके उत्पादनमें एक आवश्यक कारण है:— प्रवेशक प्रकरणमें हम बतागये हैं कि एक वस्तु अमुक प्रसंगमें सम्पत्ति नहीं होती, परन्तु वही वस्तु और प्रसंगोंमें सम्पत्ति हो जाती है। हमने कहा था कि जहांपर पानी अनायास ही मिलता है, वहांपर उसकी अदलाबदलीका कुछ मूल्य नहीं होता, क्योंकि जो चीज़ बिना श्रमके, मनमानी, जहां चाहें मिल जाय, उसे कोई मोल लेने नहीं जाता। परन्तु जहांपर उस चीज़के प्राप्त करनेमें श्रम पड़ता है वहीं पर वह सम्पत्ति होजाती है। इससे सिद्ध होता है कि जिन वस्तुओंके एवज़में कुछ मूल्य

मिलसकता है उन चीजोंके बननेमें किसी न किसी प्रकारसे श्रम अवश्य पड़ा है। एक रोटीके बनानेमें ही कितनी प्रकारके श्रम करने पड़ते हैं यदि उन्हें गिनाने बैठें तो एक ग्रन्थका ग्रन्थ बन-जाय। कोई स्थूलदृष्टि कह बैठेंगे कि "इसमें है ही क्या? रोटी बनानेमें रसोइयाकी मिहनत हुई है"। यह सच है कि रोटी करनेमें जो भांति २ की मिहनत हुई है, उसमें रसोइयाकीभी मिहनत है, परन्तु वह इतनी है कि आटेमें लौन। वास्तवमें देखा जाय तो इसमें गेहूं बोकर पैदा करनेवाले किसानकी, हल बनानेवाले खातीकी, लुहारकी, खान खोदकर लोहा निकालने-वालेकी, औज़ार घड़नेवालेकी और न मालूम किन २ हजारहों मनुष्योंकी, भांतिभांतिकी मिहनत शामिल है।

सम्पत्तिके उत्पादनमें श्रम किसतरह काममें आता है:— सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें श्रम जो काम करता है वह, वस्तुओंको जहां चाहिए वहां पहुंचानेमें, या, अमुक वस्तुको अमुक स्थानसे अमुक स्थानपर पहुंचाने और लानेमें, करता है। यह व्याख्या सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्राचार्य मिलकी है। यह व्याख्या इतनी व्यापक है कि इसमें उद्योगके भांतिभांतिके व्यापारोंका समावेश हो जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि श्रम वस्तुओंको गति देनेमें ही होता है अर्थात् चीज़ोंके इधर उधर करनेमें ही होता है बाकी और सब कुछ तो पदार्थके गुणोंसे–प्राकृतिक नियमोंसे ही, होजाता है।

कल्पना करो कि हमें एक मकान बनाना है। अव्वल तो ईंटे कैसे बनाई जाती हैं? खानोंमेंसे मिट्टी खोदकर कुम्हार अपने मुक़र्रर स्थानपर लाता है। और वहांपर अमुक तरहके सांचेमें

ढालकर उन्हें पकाता है। वह इतना श्रम करता है परन्तु मिट्टीका पैदा होना और अग्निके संयोगसे उसका पकना, यह प्राकृतिक नियमोंसे ही होता है। अच्छा, लकड़ीके पाटे कैसे बनते हैं? लोग दरख़्तोंको काट लाते हैं और खाती उन्हें करोंतीसे चीर २ कर पाटे बनाते हैं। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि "पदार्थोंको गति देनेके सिवाय मनुष्य उनपर और कुछ असर नहीं डाल सकता।"

किसीभी चीज़पर कौशलपूर्ण मिहनत करनेसे उसका मूल्य कितना बढ़ सकता है:—इस बातके बहुतसे दृष्टान्त दिये जा सकते हैं। बहुतसी छोटी छोटी घड़ियां, ऐसी होती हैं कि उनमें बहुत बारीक 'स्क्रू' काममें लाया जाता है, ऐसा बारीक कि वह सूक्ष्मदर्शक यंत्रकी सहायता बिना नज़र नहीं आता। इस १ सेर 'स्क्रू'का मूल्य ६ सेर उत्तमोत्तम सोनेके बराबर हो जाता है। छोटी घड़ियोंमें बालकीसी बारीक कमानीभी होती है। इसका वज़न १ सेरका १/१५००० होता है। इसके बनानेमें बड़ा ही श्रम होता है। इससे इसका मूल्य बहुत बढ़ जाता है। यहां तक कि एक सेर फौलादके ईस्पातसे ४००० गुणा ज़्यादा, १ सेर कमानियोंका मूल्य होजाता है।

यद्यपि यह बात सिद्ध है कि श्रम बिना सम्पत्तिकी उत्पत्ति नहीं होती, तथापि बहुतसे श्रम ऐसे हैं कि—जो अत्यन्त उपयोगी होनेपर भी सम्पत्तिके उत्पादनमें सहायता नहीं करते। ऐसे श्रममें और अनुत्पादक श्रममें बड़ा भेद है। ऐसा भेद माननेका कारण है, क्योंकि अनेक अर्थशास्त्री "अनुत्पादक" विशेषण-युक्त श्रममें दूषण मानते हैं। परन्तु कौशलपूर्ण श्रममें यह बात

नहीं मानी जाती। और यदि इसमेंभी अनुत्पादकता समझें तो फिर मनुष्य जीवनका उद्देशही केवल टके कमाना रहजाय। मिल उत्पादक श्रमकी व्याख्या यों करता है कि "उत्पादक श्रम वह है जो पदार्थोंमें रही हुई या समाई हुई उपयोगिताको प्रकट करे।"

परोक्ष उत्पादक श्रमः—मिलकी जो व्याख्या हमने दी है इसपर यह प्रश्न होगाकि अध्यापकोंका श्रम अनुत्पादक है? सच है, अध्यापक कुछ पदार्थोंमें रही हुई या समाई हुई उपयोगिताको स्वयं उत्पन्न नहीं करते परन्तु वे अपने श्रमसे ऐसे मनुष्योंकी एक जमाअत तैयार कर देते हैं कि जो वह उस कामकी करनेवाली हो जाती है।

कल्पना करो कि "एक गांवमें ५० ऐसे लड़के हैं जो आलस्यमें अपना समय व्यतीत करते हैं और किसी अध्यापकने उन्हें पढ़ा लिखाकर होशियार करदिया। इन विद्यार्थियोंमेंसे बहुतोंने अच्छे अच्छे कामधंदे शुरू करदिये और उनसे सम्पत्तिकी उत्पत्ति हुई। इसी प्रकार किसी मनुष्यने एक यंत्रका आविष्कार किया, दूसरे लोगोंने उससे काम लिया और सौगुनी सम्पत्तिकी उत्पत्ति हुई, तो क्या उस अध्यापक और इस आविष्कारकके श्रमको अनुत्पादक श्रम कहना चाहिए? नहीं कभी नहीं। अत एव ऐसा समझना ठीक होगाकि श्रम दो प्रकारसे उत्पादक होता है एक परोक्ष रीतिसे और एक प्रत्यक्ष रीतिसे। पहले वर्गमें अध्यापक, आविष्कारक, पुलिसके सिपाही आदि हैं जिनके कारण पैदा करनेवाले मनुष्य तैयार होते हैं और रक्षा पाते हैं और दूसरे वर्गमें जहाज बनानेवाले, मोची, लुहार आदि हैं जिनके

श्रमसे पदार्थमें समाई हुई और रही हुई उपयोगिता प्रकट होती है।

अनुत्पादक श्रमः—जो श्रम प्रत्यक्ष रीतिसे या परोक्ष रीतिसे, मनुष्य समाजकी वास्तविक सम्पत्तिके बढ़ानेमें सहायक नहीं होता, वह अनुत्पादक श्रम है। नाटक करनेवाले, गाने बजानेवाले, नाचने कूदनेवाले, आतिशबाजी बनानेवाले सब इसी श्रेणीके हैं। कल्पना करो कि एक आतिशबाजी बनानेवालेने १७०) ख़र्च कर आतिशवाजी बनाई। उसके उसे २००) रुपये मिले। ख़रीदनेवालेने उन्हें छुटा दी। इससे कुछ सम्पत्ति नहीं बढ़ी, प्रत्युत कम हुई। लेनेवालेको कुछभी लाभ नहीं हुआ। आप कहेंगे कि आतिशबाजी बनानेवालेको जब सौके दोसौ मिल गये तब सम्पत्ति क्यों नहीं बढ़ी तो हम कहनेको तैयार हैं कि बेशक उसे दोसौ मिल गये, परन्तु अर्थशास्त्रके विचारसे इस बातमें १००) रुपयेका टोटा पड़ गया और श्रम व्यर्थ हुआ सो जुदा—अर्थात् उस आतशबाजीमें २००) रुपये लेनेवालेके और १०० रुपये नक्द तथा बनानेका श्रम आतिशवाजीवालेका; यों मिलकर ३०० रुपये नक्द और श्रम लगा है। अब देखते हैं तो रह गये केवल २००) रुपये। इस काममें नया द्रव्य कुछ पैदा नहीं हुआ। ऐसाही हाल औरोंकाभी है।

कभी कभी उत्पादक कारीगरोंकी मिहनतभी अनुत्पादक हो जाती है। कल्पना करोकि एक बड़ा भारी कारखाना बनाया जाने लगा। बीचमें ही किसी कारणसे उसे बनते २ रोक दिया गया और वह ख़राब होगया। ऐसी सूरतमें इसके बननेमें जितना श्रम हो चुका वह व्यर्थ गया, अर्थात् वह अनुत्पादक

होगया । इससे कई दफ़े ऐसा होता है कि अमुक प्रकारके काम करनेवालोंका श्रम सफल होगा या निष्फल जायगा (उत्पादक होगा या अनुत्पादक) कामका परिणाम देखे बिना यह नहीं कहा जा सकता ।

श्रमविभागः—श्रमकी उत्पादिकाशक्ति अनेक कारणोंसे बढ़ती है। उनमें मुख्य कारण कार्यविभाग है। कितनेही कामोंमें बहुतसे कारीगर काममें लगे होते हैं और उनमें प्रत्येक पृथक् २ काम करता है । एक टांकीके बनानेमें १८ क्रियाएं पृथक् २ करनी पड़ती है । पहले लोहेको संठियां (छंड़ें) बनाना, फिर अमुक लंबाईके टुकड़े करना, नोक निकालना, माथा बनाकर लगाना, चमक देना, इत्यादि । अब ये सारे काम एकही आदमी करने लगे तो वह कदाचित् ही दिनभरमें २० टांकियां बनासके । परन्तु इन कामोंको दस कारीगर बटाकर करें तो एक दिनमें ५००० टांकियां बनाडालेंगे—अर्थात् प्रत्येक मनुष्यपर ५०० का औसत आयगा, इससे यह सिद्ध हुआ कि जो मनुष्य २० टांकियां बड़ी मुश्किलसे कदाचित ही बना सकता था उसीने कार्यविभागके कारण ५०० टांकियां बनालीं। कार्यविभागसे ४ लाभ होते हैं (१) कारीगरकी होशियारी बढ़ती है (२) दूसरा काम न होनेसे समय बचता है (३) एक जातिकी क्रियापर ध्यान रहनेसे कुछ आविष्कार करनेकी ओर चित्तका लगना सम्भव है (४) जो कारीगर जिस कामको अच्छी तरह करसकता हो उसे उसीपर लगाया जाता है ।

पहले लाभका उदाहरणः—कारीगरकी होशियारी बढ़ती है यह कार्य विभागका बड़ेसे बड़ा लाभ है । जिस मनुष्यको

एकही काम करनाहो यह उस विषयमें ऐसा पक्का और होशियार होजाता है कि जिसे देखकर औरोंको अचंभा हुए बिना न रहे। बिलायतमें बर्मिंगहाममें पेन बनानेका बड़ा भारी कारखाना है। उसमें कितनेही मज़दूरोंका काम बनी हुई पेनोंको निकालना है। वे इतनी फुर्तीसे उन्हें निकालते हैं कि देखनेवालोंको यह जानभी नहीं पड़ता कि कब उनका हाथ गया और कब आया। ऐसी होशियारी एक काम करते रहनेसे ही आसकती है।

दूसरे लाभका उदाहरणः—काम करनेवालेको जब एक ही काम करना होता है तब काम शीघ्र होता है। हम रेलवे-स्टेशनोंपर देखते हैं कि एक मनुष्य दिये देता है और दूसरा उन्हें रेलके ऊपरके हिस्सोंमें रखता जाता है। दोनों आदमियोंको अपना २ काम करना होता है इससे शीघ्रही काम होजाता है। यदि दोनों मिलकर काम न करें और अकेला सारा काम करने लगे तो ठीक ठीक शीघ्र नहीं होसकता।

तीसरे लाभका उदाहरणः—कार्यविभाग होनेसे नये यंत्रोंकी शोध होती है जिससे श्रम सहज होजाता है और एक मनुष्य कई एक मनुष्योंका काम कर सकता है। बाष्पयंत्रका ढक्कन ठीक वक्तपर उठाने और ढँकनेके लिये एक लड़का नोकर रक्खा गया था। उसका काम यही था। उसने सोचा कि कोई तरकीब ऐसी होजाय कि यह ढक्कन अपने आप ठीक समय पर उघड़ जाया करे और ढँक जाया करे तो मुझे ख़ूब खेलनेको वक्त़ मिलजाय। उसने उस ढक्कनको एक डोरीसे उस यंत्रकी दूसरी ओर, इस तरकीबसे जोड़ दिया कि वह ठीक समयपर

उघड़ने और ढँकने लगा। इस प्रकार जब एक मनुष्य एक ही काम-पर होता है तब नये आविष्कार भी होते हैं क्योंकि मनुष्यमें यह स्वाभाविक बात है कि कम श्रमसे काम सिद्ध किया चाहता है।

चौथा लाभः—यह है कि जिस कामको मनुष्य अच्छी तरह कर सकता हो वही उसे मिलताहै। जो मनुष्य दस रुपये रोज़का काम कर सकता है उसे दो रुपये रोज़के कामके लिये रखना बड़ाही हानिकारक है। हम एक ग्रन्थकारको रक्खें और उसे लेखक न दें या एक उत्तम कारीगरको रक्खें और छोटे मोटे परचूरण काम करनेवालेको न दें तो क्या होगा? यही कि मज़दूरीके काममें उनका अलभ्य समय जायगा। जिस कामको चार छह आनेका मज़दूर करलेगा, उसमें इनका क़ीमती समय लगेगा, जितना समय इनका मज़दूरीके काममें गया उतने समयकी इनकी तनख़्वाह बहुत ज्यादा है क्योंकि उस कामको थोड़ी तनख़्वाहमें ही मज़दूर उतने समयमें करलेता।

कार्यविभागसे जो हानियां होती हैं उन्हेंभी यहांपर बत-लाना ठीक होगा। कल्पना करो कि एक खरादी कुर्सियोंके पाये बनाया करता है। वह अपने नमूनेके पाये बनाया करेगा। उसके जिम्मे यह बात नहीं है कि कुर्सी अच्छी बनेगी या नहीं। कार्यके बँटे रहनेसे प्रत्येक मनुष्य अपनेही कामपर ध्यान देता है। इससे इस बातकी ज़िम्मेवारी उनमेंसे किसीकीभी नहीं होती कि सबका मिलकर काम कैसा होगा। और कारीगरोंकी दृष्टिभी विशाल नहीं होती तथा वे एक निर्जीव यंत्रसे होजाते हैं। अमुक काम वह बड़ी होशियारीसे अवश्य करते हैं परन्तु

उस काममें यदि उलट फेर हो जाय तो उनकी चतुराई किसी काममें नहीं आती। प्राकृतिक रीतिसे उनकी बुद्धि अच्छी भी हो परन्तु वह एक ही काम करते रहनेसे प्रफुल्लित नहीं होती। कारीगरको शिक्षा मिलनेसे ये हानियां दूर होजाती है।

अप्रतिबद्धव्यापार कार्यका विभाग है:—न्यारी न्यारी प्रजाओंके व्यापारपर जो कृत्रिम रोक टोक की जाती है, उसे दूर करदिया जाय तो प्रत्येक देश, अपनी आवश्यक वस्तुएं जहांसे उसे अच्छी मिले, मंगाले और स्वयं वह माल पैदा करे जिसे स्वयं अच्छासे अच्छा बना सके।

साथ साथ काम करना:—मिलजुलकर काम करनेसे भी उत्पादक शक्ति बढ़ती है। दो आदमी न्यारे २ काम करें उसकी अपेक्षा, दोनों मिलकर काम करेंगे तो अधिक काम होगा। किसी जहाजके लंगर चढ़ानेमें अनेक आदमी मिलकर काम करते हैं तो फौरन लंगर चढ़ जाता है परन्तु कोई एक दो मनुष्य करने बैठेंगे तो उनका वह उद्योग निष्फल जायगा।

साथ साथ काम करना दो प्रकारका है (१) केवल और (२) मिश्र। दोचार दसवीस आदमी मिलकर जब एक ही कामको करते हैं (जैसा कि ऊपर जहाजके लंगरके दृष्टान्तमें कहा है) तो वह "केवल सहोद्योग" कहा जाता है और जब न्यारे न्यारे धंधोंमें एक दूसरेको सहायता देते हैं तब "मिश्र-सहोद्योग" कहा जाता है। जैसे कपड़ा तैयार करनेमें कितनी ही तरहकी मिहनत हो जाती है। इस उदाहरणमें जुदी जुदी प्रकारकी मिहनत, जुदे जुदे मनुष्योंको, भांतिभांतिसे, सहायता पहुंचाती है। कुछ मनुष्य रुई बोते हैं, कोई उसे साफ कर,

गांठे बांध, पुतली घरोंमें पहुंचाते हैं, कोई उसे कातकर सूत बनाते हैं, और कोई सूतको बुनकर अमुक रीतिसे कपड़े तैयार करते हैं। ये सब कपड़े बनानेमें एक दूसरेके सहायक हैं। इसी प्रकार गांवड़ेके किसान और शहरके जुलाहे, एक दूसरेकी आवश्यक चीजें पैदा कर सहोद्योग करते हैं। किसान अपनी आवश्यकतासे अधिक धान पैदा कर शहरियोंकी आवश्यकता पूरी करता है और शहरी अपनी आवश्यकतासे अधिक चीजें बनाकर उसकी आवश्यकताको पूरी करते हैं।

औज़ार और यंत्रः—इनसे श्रमकी उत्पादकं शक्ति ख़ूब बढ़ जाती है। ऐसा कोईभी उद्यम नहीं है जिसमें औज़ारोंके बिना काम चल जाय। चाहे जैसे अनाड़ीको भी खेतीके लिये कुदाली फावड़ेकी ज़रूरत पड़ेगी ही। चाहे जैसी मोटी सिलाई क्यों न हो सूईके बिना काम कभी न चलेगा। जैसे जैसे देशमें विद्या और ज्ञानका फैलाव होता जायगा वैसे वैसे प्रत्येक जातिके उद्योगमें यन्त्रादिका काम बढ़ता ही जायगा। यंत्र श्रमकी उत्पादिका शक्तिको दो तरहसे बढ़ाते हैं। अव्वल तो यह कि जो काम मनुष्यको स्वयं करना पड़े वह सांचेसे हो जाता है। जैसे सीनेकी कल। और दूसरे जो काम मनुष्यसे हो नहीं सकता वह यंत्रोंसे हो जाता है जैसे रेल द्वारा हज़ारों मन बोझको, थोड़ेही समयमें, सैकड़ों मीलकी दूरीपर, इधरसे उधर और उधरसे इधर ले आना और ले जाना। पहली रीतिमें जिस कामको बहुतसे आदमी कर सकते थे उसे थोड़ेसे कर लेते हैं और ऐसा होनेसे बहुतसे आदमी जो एक काममें रुके हुए थे वे छुट्टे होजाते हैं तथा और कोई नया काम करने लगते

हैं। और दूसरे काममें नये नये उद्योग खड़े हो जाते हैं।

श्रमकी उत्पादनशक्ति; कारीगरकी निपुणता, बुद्धि, सदाचार और विश्वासपात्रतासे भी बढ़ती है। कारीगरकी निपुणतासे श्रमकी उत्पादिका शक्ति बढ़ती है यह बात तो इतनी साफ़ है कि उसका उदाहरण देनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। कितने ही काम ऐसे हैं कि जिनमें निपुणता प्राप्त करनेके लिये, कितने ही वर्षोंतक खूब ध्यान देकर अभ्यास करना पड़ता है।

बुद्धिः—अज्ञान या बुद्धिहीन कारीगर अपना काम जैसा उसने सीखा होता है वैसा ही किये जाता है। उसे अपने काममें सुधार करनेकी कुछ भी नहीं सूझती। जिस धंधेमें वह लगा होता है यदि (अभाग्यवश) वह रोजगार बंद हो जाय तो उसे कुछ नया धंदा सूझ ही नही पड़ता। परिणाम यह होता है कि उसे और उसके कुटुम्बको भीख मांगनेकी नोबत आ-जाती है वह और कुछ कर नहीं सकता।

सदाचारः—प्रत्येक जातिके अनाचारसे शरीर निर्बल होता है। सदा शराब पीनेवाला मनुष्य, चाहे होशमें ही क्यों न हो, वह कुछ भारी श्रम नहीं कर सकता। अनाचारकी टेव पड़ जानेसे बेवक्त क्षीणता आ जाती है और फिर मौत होजाती है। अनाचारसे बुद्धि क्षीण होजाती है। बुद्धिहीन मनुष्य निर्दोष आनन्दका उपभोग नहीं कर सकता। उसे मानसिक सुख नहीं मिलता। शिक्षाके प्रचारकी आवश्यकता (क्या अर्थशास्त्रकी रूसे और क्या और तरहसे) बहुत ही है। क्योंकि शिक्षासे बुद्धिका विकास होता है और उससे कारीगरमें सामर्थ्य बढ़ती है। इतनाही नहीं वह सदाचारी भी हो जाता है। उसे निर्दोष आनन्द भी प्राप्त होते

हैं। प्रत्येक देशमें, निम्न श्रेणीके लोगोंमें जैसे २ विद्या फैलती जाती है वैसे वैसे शराबखोरी वग़ैरा ऐब छूटते जाते हैं और अनाचार उठता जाता है।

विश्वासपात्रता:—यहभी सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें सहायक होती है। यदि कारीगर विश्वासपात्र हैं तो उनपर देखरेख रखनेवाले मनुष्योंके रखनेकी आवश्यकता नहीं और इन मनुष्योंको और कोई काम करनेमें लगाये जासकते हैं। परन्तु जब काम करनेवालोंपर विश्वास नहीं होता तब उनपर देखरेख करनेको मनुष्य रखने पड़ते हैं। जो काम करनेवाले विश्वासपात्र नहीं हैं वे, चाहे जितनी देखरेख उनपर रक्खी जाय, मौक़ा पाकर कामकी चोरी करेंगेही। खेतीके काममें प्राय: ऐसाही होता है। क्योंकि उसमें भांति भांतिके काम करने होते हैं और वे भी इतनी २ दूरपर कि सभी जगह सख़्त देखरेख नहीं रक्खी जासकती परन्तु काम करनेवालेके विश्वासपात्र होनेपर यह कुछ भी नहीं करना पड़ता।

इस प्रकरणको पूरा करनेके पहले कारीगरोंके श्रमकी उ-उत्पादन शक्तिको बढ़ानेवाले कारणोंको फिर गिन जायं।

(पदार्थगत कारण)	(मानसिक कारण)
कार्यविभाग	निपुणता
सहोद्योग	बुद्धि
यंत्र और सांचे	सदाचार
	विश्वासपात्रता

यहांतक हम उत्पादक और अनुत्पादक श्रमका विचार कर चुके। अब उत्पादक और अनुत्पादक व्ययका विचार करते हैं।

उत्पादक और अनुत्पादक व्ययः—उत्पादक श्रम और अनुत्पादक श्रमके भेदको ध्यानमें रखनेसे कोई ऐसा विचार करेंगे कि उत्पादक श्रम करनेवाला कारीगर जो व्यय करे वह उत्पादक व्यय और अनुत्पादक श्रम करनेवाला मनुष्य ख़र्च करे वह अनुत्पादक व्यय। परन्तु उत्पादक श्रम करनेवाले मनुष्यका सारा ख़र्च उत्पादक नहीं है। परन्तु जिस समयमें वह उत्पादक श्रम कररहा हो उस समयमें उसके पोषण होनेमें जो व्यय हो वह उत्पादक व्यय है। सजधज बनानेमें और ठाट-बाटके सामानमें जो व्यय होता है, वह अनुत्पादक व्यय है, क्योंकि उनके उपयोगसे कोई नई सम्पत्ति नहीं उत्पन्न होती। नुक़सान होना भी अनुत्पादक व्यय है। कितने ही मनुष्योंका सोचना है कि चीज़ोंके बिगड़नेसे और उठनेसे प्रजाको लाभ ही है, फिर वह व्यय उपयोगी हो या निरुपयोगी हो। अगर ऐसा ही हो तो फिर हरेक प्रजाके सम्पत्ति-शालिनी होनेका सहज ही उपाय हाथ लग गया। क्योंकि उन्हें घरबार ऊजड़ कर देने और मालमत्तेको फूंक देनेसे दौलत ही दौलत मिलजायगी। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा करनेसे सिलावट खाती वग़ैराके काममें तेज़ी होगी परन्तु इन लोगोंको जो लाभ होगा वह दुनियाको हानि होकर ही होगा। परन्तु ऐसी २ भूलें प्रतिदिन बहुतसे मनुष्य करते हैं। इसके सहस्रों उदाहरण दिये जासकते हैं। एक समय इस लेखकके देखनेमें आया कि दो बहनें बैठी हुई थीं। उनमेंसे एकका लड़का लकड़ीसे खेल रहा था। उसने लकड़ी मारी जिससे पानीका घड़ा फूट गया। इससे लड़केकी माने बच्चेको मारना शुरू किया। तब

दूसरी बहनने कहा कि "नहीं बहन जाने दो, ऐसा न करो, जो इस तरह चीज़ें ख़राब न हों तो कारीगरोंका रोज़गार कैसे चले?" इत्यादि। अब हम देखें कि इस कहनेमें कितनी भूल है। कल्पना करो कि वैसी मटकी दो पैसेमें आती है। ऐसी सूरतमें उस बहनके कहे मुताबिक़ कुम्हारके धंधेमें दो पैसेकी सहायता मिलेगी, इसमें कुछ कमी नहीं है। परन्तु जो ऐसा समझा जाय कि वस्तुओंका टूटफूट जाना अच्छी बात है और उससे रोज़गारकी उन्नति होती है तो हम कहेंगे कि ऐसा कहनेवालोंने बारीकीसे विचार नहीं किया। सोचो कि यदि वह घड़ा न फूटा होता तो नया घड़ा लानेके लिये दो पैसे न ख़रचने पड़ते और इन दो पैसोंसे टोपी या और कोई चीज़ ख़रीदते कि जिससे दूसरे धंदेवालोंको भी सहायता पहुंच सकती।

अब ऐसा होनेसे सामान्य रीतिसे धंदे रोज़गारपर क्या असर पड़ता है, इसका विचार करते हैं। घड़ा फूटनेसे कुम्हारके धंदेमें दो पैसेका उत्तेजन मिला, यह बात तो सबकी समझ में फ़ौरन आजाती है, परन्तु उसके न फूटनेसे दूसरे दूसरे कारीगरोंको उत्तेजना मिलती यह किसीके ध्यानमें नहीं आता। जो बात फ़ौरन ध्यानमें आजाती है और जो बात तुरंत ध्यान में नहीं आती, इन दोनोंपर विचार करनेसे पहले पहले ऐसा जान पड़ता है कि घड़ेके फूटनेसे मामूली धंदे रोज़गार पर या देशव्यापी परिश्रम पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा। परन्तु देखना यह है कि जिसका घड़ा फूटा उसपर उसका क्या प्रभाव पड़ा। घड़ा फूटा तब उसके घरमें से दो पैसे गये और जैसा घड़ा था वैसा घड़ा ही फिर आया, कोई नई वस्तु नहीं आई। जो घड़ा

न फूटता तो दो पैसेकी टोपी लाई जाती और उस मनुष्यको घड़ा और टोपी दोनोंका उपयोग करनेका समय आता। और सोचिये, कि जिसका घड़ा फूटा वह मानव जातिका एक मनुष्य है—लोक समाजकी एक व्यक्ति है। अतएव यह दो पैसेकी हानि उसीको नहीं, प्रत्युत मनुष्यसमाजको भी हुई।

इस से यह सिद्ध हो गया कि मौज—शौक़, ठाटबाट और सजधजकी चीज़ोंके लिये, जीवनोपयोगी ख़र्चसे सिवाय के ख़र्चे के लिये, और वस्तुओंके ख़राब होनेके लिये, जो यह कहा जाता है कि इनसे धंदेरोज़गारकी उन्नति होती है, वह भ्रमपूर्ण है—वह सही नहीं है। उड़ाऊ मनुष्यके अविवेकी ख़र्चसे मनुष्यजातिका कुछ भला नहीं होता, इस बातको बतलानेके लिये अर्थशास्त्रका साधारण ज्ञान भी काफ़ी है। परन्तु इस बातको यहांपर लिखेंगे तो विषय पूंजीका हो जायगा, अतएव यहांपर न लिख अगले पूंजीके प्रकरणमें इसका विवेचन करेंगे।

प्रश्न

(१) सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें श्रम बिना काम नहीं चलसकता, इस विषयको प्रतिपादन करो।

(२) जुदी जुदी, कौनसी २ मिहनतें, रोटी जैसी वस्तुओंके बनाने में लगती हैं ?

(३) वास्तवमें श्रम सम्पत्तिके उत्पादनमें क्या भाग लेता है ?

(४) उत्पादक श्रम किसे कहते हैं ?

(५) कितने अनुत्पादक श्रम परोक्ष में उत्पादक होते हैं ?

(६) श्रमविभागके लाभ कहो ।

(७) सहोद्योग किसे कहते हैं ? केवल सहोद्योग और मिश्र सहोद्योग की व्याख्या करो ।

(८) कल, सांचे, यंत्रादिसे श्रमकी उत्पादक शक्ति कैसे बढ़ती है ?

(९) अप्रतिबद्धव्यापार केवल कार्यविभाग है इसे बतलाओ ।

(१०) श्रमविभागसे उत्पादक शक्ति कैसे बढ़ती है ?

(११) श्रमविभागकी क्या २ हानियां है ?

(१२) श्रमकी उत्पादिका शक्ति बढ़ानेके मानसिक साधन क्या हैं ?

(१२) उत्पादक और अनुत्पादक व्यय किसे कहते हैं ?

(१३) खुलासा करके बताओ कि अनुत्पादक व्ययसे मनुष्यसमाजकी सम्पत्ति नहीं बढ़ती ।

विशेष प्रश्न.

(१) कल्पना करो कि भूकंप होकर बम्बईके सारे मकान गिरगये । इससे व्यापारको कुछ फ़ायदा होगा ?

(२) हुक़ा पीना उत्पादक व्यय है या अनुत्पादक ?

(३) कल्पना करो कि तुम्हारे हाथ से सेर भर दूधका कटोरा गिरगया, इसका सम्पत्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

(४) विमानका वायु सम्पत्ति है या नहीं ?

(५) खेल कूदमें श्रमविभाग और सहोद्योगके क्या लाभ होते हैं ?

(६) क्रिकटमें किस प्रकारका सहोद्योग है ?

(७) मनुष्यशरीरके अवयवोंमें किस प्रकारका कार्य विभाग है ?

(८) मान लो कि संसारमें मनुष्यों की मौत बंद होगई अव लकड़—फ़रोशकी क्या गति होगी ?

(९) क्रिकटमें खिलाड़ियोंके सिवाय और क्या किसीके सहोद्योगकी आवश्यकता है ?

तीसरा प्रकरण।

पूंजी।

पूंजी और रुपये पैसेको एक समझना बड़ी भारी भूल है:—सिक्का और पूंजी एक ही हों तो यह बात असिद्ध हो जायगी कि पूंजी; सम्पत्ति पैदा करनेका एक साधन है। सम्पत्ति की उत्पत्तिमें रुपया पैसा कुछ काम नहीं आता। हम पहले सिक्केका उपयोग बतला चुके हैं। उसपर ध्यान देनेसे जान पड़ेगा कि सिक्का, पूंजी और सम्पत्ति एक ही वस्तु नहीं हैं। यह बात भूलनेकी नहीं है कि सिक्का एक मूल्यका माप है और अदलाबदली करनेका एक साधन है—अर्थात् और २ सारी वस्तुओंका मूल्यकरनेके लिये सबकी सम्मतिसे मान ली गई वस्तु है, उसका पलटा सब वस्तुओंसे कर लिया जा सकता है।

पूंजी—सम्पत्तिके उस विभागका नाम है जो भविष्यतमें सम्पत्तिके उत्पादन करनेके काममें मदद देनेके लिये बचा रक्खा जाता है।

सम्पत्तिके उत्पादनमें पूंजी जो काम करती है उसका एक उदाहरण:—पहलेसे इकट्ठी कीहुई सम्पत्तिमेंसे, जो काम करनेवालोंको सहायता न मिले, तो खेतीवाड़ीका काम ही न हो; क्योंकि बीज बोकर अनाज पैदा किया जाय उस समयतक खानेको चाहिए ही, फिर वह खाद चाहे अपनी मिहनतसे पैदा कीहुई हो चाहे औरोंकी मिहनतसे । इस कामके लिये जो बचारक्खी हुई सम्पत्ति होती है उसीका नाम पूंजी है । पहले उत्पन्न की हुई सम्पत्तिका विभाग—पूंजी; आगे सम्पत्ति उत्पन्न करनेमें कितना काम करती है, इस बातको हम गांवड़ोंमें चलती हुई रीतिभांतिसे अच्छी तरह समझ सकेंगे । किसान लोग, हालियोंको उनके कामकी एवज़में पैसेटके देनेकी जगह प्राय: गये वर्षके बचाये हुए अनाजमेंसे अनाज देते हैं—कहीं कहीं नक़द दाम भी देते हैं । इससे सिद्ध हुआ कि सम्पत्ति उत्पन्न करनेवाले हालियोंको—मज़दूरोंको पहलेसे बचाई हुई सम्पत्तिका जो विभाग दिया जाता है वह पूंजीमेंसे दिया जाता है । कोई कहेगा कि जहां रुपये पैसे दिये जाते हैं वह भी पूंजी ही है क्या? नहीं, वहांपर रुपया पैसा यह पूंजीका एक नाम मात्र होता है । परन्तु वास्तवमें कुछ रुपयापैसा पूंजी नहीं है । पूंजी तो वह है जो इनकी एवज़में अनाज आदि ख़रीद कर ले आये जाते हैं । क्योंकि पोषण सिक्केसे नहीं होता अनाज वग़ैरासे होता है । पूंजी भविष्यतमें सम्पत्तिके उत्पादन कार्यमें बड़ी ही मदद करती है ।

अनेक मनुष्य क़हते हैं कि "भविष्यतमें सम्पत्तिके उत्पन्न करनेके लिये जो तनख़्वा आदि दिये जाते हैं सो कुछ पूंजीमेंसे

नहीं दिये जाते, वह तो परिश्रम करने पर जो उत्पन्न होती है उसके मूल्यमेंसे दिये जाते हैं । अतएव श्रमसे तनख्वा पैदा हो जाती है । पूंजी तनख्वा नहीं देती । इत्यादि ।" परन्तु इसमें भूल है। श्रमसे उत्पन्न हुई वस्तुके मूल्यमेंसे ही तनख्वा मिलती हो तो दैवयोगसे उत्पन्न हुई वस्तुके ख़राब हो जानेसे, मूल्य न पैदा होनेपर, तनख्वा न मिलनी चाहिए । परन्तु ऐसा नहीं होता । तनख्वा मिलती है । अब कहिए वह तनख्वा कहांसे मिलती है ? मिलती है पूंजीसे ही और कहींसे नहीं । पूंजीवाला सारे कामकी जोखम अपने ऊपर लेता है, अमुक वस्तुके नहीं तैयार होनेतक, महीनोंसे, कहीं कहीं वर्षोंसे, तनख्वा देता रहता है । वह कहांसे देता है ? देता है पूंजीसे । यदि उसकी अभीष्ट वस्तु ख़राब हो जाती है तो भी उसे तनख्वा देना ही होती है । इससे सिद्ध हुआ कि तनख्वा अमुक उत्पन्नके मूल्यमेंसे नहीं दी जाती बल्कि पूंजी से दी जाती है। यदि तनख्वा केवल श्रमकी उत्पत्तिमेंसे ही दी जाती हो तो कभी किसीको घटी ही न उठानी पड़े । कल्पना करो कि हमें खेती करना है । अब खेतीके काममें जो कुछ ख़र्च पड़ेगा वह सब उसकी उत्पन्नमेंसे निकल आयगा, इतना ही नहीं बहुत कुछ लाभ भी रहेगा। अतएव सारा-ख़र्च श्रमकी उत्पत्तिके मूल्यसे निकल आया । परन्तु ऐसा नहीं है । अकाल पड़जाने पर भी काम करनेवालोंको ख़र्च देना ही होता है । वह कहांसे दिया जाता है ? पूंजीसे ही दिया जाता है ।

धनभंडारः—तनख्वामें दिये जानेवाले द्रव्यको, कितने ही अर्थशास्त्री तनख्वाके धनभंडारके नामसे कहते हैं । इससे

यह न समझना चाहिए कि प्रत्येक पूंजीवालेके पास एक ख़ास भंडार, तनख्वाके लिये न्यारा ही होता है। इससे तो इतना ही जाना जाता है कि यदि अमुक धंदा न लौट जाय तो उस धंदेके मुतल्लिक़ बनेहुए: मकानात, यंत्र, औज़ार, कच्चेमाल, आदिमें जो पूंजी लगी हुई है, उसका अमुक भाग, तनख्वाके लिये भी संचित रहता है। अमुक कामकी तनख्वाकी वस्तुओंके सिवाय, और २ आवश्यक चीज़ोंमें लगी हुई पूंजीमें यदि वृद्धि हो (और उस धंदेमें कुछ उथल पाथल न हो) तो तनख्वाकी पूंजीमें भी बढ़ती होना चाहिए।

यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि तनख्वामें लगता हुआ सारा द्रव्य, उत्पादक काम करनेवालोंके ही काममें नहीं आता, उसका बहुतसा भाग ऐसे लोगोंमें भी बँट जाता है कि जिनका श्रम केवल अनुत्पादक होता है। तनख्वाके धनभंडारका जितना अंश उत्पादक श्रमका पोषण करता है उतना अंश ही पूंजी है। अतएव तनख्वाके द्रव्यके मुख्य दो भाग हुए–(१) जो उत्पादकश्रमका पोषण करता है और (२) जो अनुत्पादक श्रमके पोषण में उड़ जाता है। पहला देशकी सामान्य पूंजी है और दूसरा घाटा। सम्पत्तिके उत्पादनमें पूंजी; जो और प्रकारकी सहायता करती है उसका उदाहरण लिखना भी ठीक होगा। पूंजी, सम्पत्तिकी उत्पत्ति करनेमें जो मदद देती है, वह काम करनेवालोंके पोषण करनेके रूपमें ही नहीं देती, अमुक धंदेके लिये जितनी चीज़ें चाहिए उन सबके रूपमें भी देती है–अर्थात् वह द्रव्य ही पूंजी नहीं है जो काम करनेवालोंके भरण पोषणके लिये दिया जाता है प्रत्युत सम्पत्तिके उत्पादनमें आवश्यक हों, ऐसे, मकान,

कल, कारख़ाने, यंत्र, औज़ार, आदि: सबके सब पूंजी ही हैं; क्योंकि यदि ये न हों तो भविष्यतमें सम्पत्तिकी उत्पत्ति ही न हो। कारख़ाना चलानेवालेकी सारी सम्पत्ति पूंजी है, यह मानना भूल है, क्योंकि बहुतसा द्रव्य तो उसका विलास सामग्रियोंमें नष्ट होजाता है। वह पूंजी नहीं। पूंजी तो वही है जो उसने नई सम्पत्ति उत्पन्न करनेके काममें लगाया हो। अर्थशास्त्री मिलके शब्दोंमें कहें तो यों कहेंगे कि "सम्पत्तिकी उत्पत्तिके लिये आवश्यक इतना हर प्रकारका साहित्य इकट्ठा करने और (काम चले तबतक) काम करनेवालोंको रोज़ी देनेकी सहायता, पूंजीसे दीजाती है। यह सहायता, भूतकालिक श्रम और वर्तमान समयके श्रमकी उत्पत्तिमेंसे निकल आनी चाहिए। अतएव पूंजी उसका नाम है कि उत्पादक श्रमके लिये जो जो चीज़ें आवश्यक हैं उन २ वस्तुओंके बनानेमें जो जो चीज़ें लगा दी जांय"

मालकी बिकरी पर परिश्रमका आधार नहीं है:—हम कह गये हैं कि "व्यापारीका जितना धन वैभवके (ठाटबाट सजधज के) पदार्थोंमें लगता है वह पूंजीमें नहीं गिना जासकता। पूंजीमें वही समझा जायगा जो उसने नये उत्पादनमें लगाया हो।" इसपर कोई कहेगा कि "सजधजके सामान लेने पर भी तो कारीगरीका पोषण होता है। कल्पना करो कि एक कपड़ेके कारख़ानेका मालिक सालभरमें ५००) रुपयेके गोटे किनारी ख़रीद लेता है तो यह रुपया गोटे किनारी बनानेवाले कारीगरोंके पोषणमें ही उठा। अब यह रुपया उसने अपने कारख़ानेमें लगाया होता तो उसके कारख़ानेके कारीगरोंका पोषण होता। बात

एकही हुई। जैसे उसके कारखानेमें लगनेसे पूंजी कही जाती वैसेही गोटेकिनारीवालेके धंदेमें लगनेसेभी पूंजी कही जानी चाहिए। इत्यादि।"

परन्तु इससे तो इतनाही कहा जासकता है कि हम पूंजीके एक स्थूल सिद्धान्तपर पहुंचे। अब इस सिद्धान्तको अच्छीतरह बारीकीके साथ अपने हृदयमें जांचना चाहिए। वह इस तरह कि मालकी खपतीपर परिश्रमका आधार नहीं है, परिश्रमका आधार तो परिश्रमके एवज़में तनख्वा देनेके लिये जो पूंजी प्रत्यक्ष रीतिसे इकट्ठा कर रक्खी होती है उसपर है। मालकी खपतीसे तो इतनाही निश्चय किया जाता है कि परिश्रम किस प्रकारका होगा।

एक उदाहरणः—ऊपर कही हुई बात ठीक है यह बात एक दृष्टान्त देनेसे अच्छी तरह ध्यानमें आजायगी। अच्छा, सोचो कि एक कपड़ेके कारखानेवाला साल भरमें ५००) रु० के गोटेकिनारी लेता है। इसपर जो कितनेही पुरुष कहते हैं कि "गोटेकिनारी लेने और अपने कारखानेमें लगादेनेमें क्या भेद है? वह अपने धंदेमें रुपये लगाता तो कपड़े बननेवालोंका पेट भरता और इससे गोटेकिनारीवालोंका पेट भरा। यदि वह गोटेकिनारी लेना बंद कर देगा तो गोटेकिनारीवालोंका पेट न भरकर उसके कारखानेवालोंका भरेगा; भेद कुछ नहीं है।" इस पर हमारा कहना यह है कि ऐसे प्रश्नोंका ठीक २ उत्तर पानेके लिये हमें इस बातपर विचार करना चाहिए कि "कपड़ेके कारखानेका मालिक गोटेकिनारी लेना बंद कर अपने कारखानेमें रुपया लगा देगा तो उसका परिणाम क्या होगा?"

इसका परिणाम यह होगा कि गोटेकिनारीबनानेवालेकी पूंजी उस काममें कम लगेगी। ज्यों ज्यों मालकी खपती कम होगी त्यों त्यों वह उस कामको कम करेगा– अपनी पूंजी उसमें न फंसायगा। ऐसी सूरतमें वह अपनी पूंजीको उड़ा देगा, या ख़ाली पड़ी रहने देगा, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। वह, पैदाकी और कोई सूरत निकालेगा—जो धंदा चलता देखेगा उसीमें पूंजी लगायगा। उसकी जो यह पूंजी है सो कुछ उस कपड़ेवालेकी–(जो इसके गोटेकिनारी ख़रीदता था और अब अपने कारख़ानेको बढ़ाकर उसीमें ५००) रु० ज़्यादाकी पूंजी लगा चुका है) नहीं है। वह तो बिल्कुल न्यारी पूंजी है। इस से यह सिद्ध हुआ कि गोटेकिनारीमें जो रुपया उठ जाता था वह न उठा और नये कारीगरोंकी रोज़ी चली। जो पूंजी गोटेकिनारीके काममें लगी हुई थी वह बनीभी हुई है और नई तरहके कारीगरोंका पोषणभी करती है–अर्थात् सम्पत्तिके उत्पादन कार्यमें ५००) रु० की पूंजी अधिक लगकर देशकी साम्पत्तिक उन्नतिका कारण हुई।

अब समझदार आदमियोंके ध्यानमें आगया होगा कि जो लोग सजधजकी चीज़ोंके ख़रीदनेसे व्यापारके हक़में लाभ समझते हैं, कैसी भूल करते हैं। सजधजकी चीज़ोंसे मज़दूरों-कोभी कुछ लाभ नहीं होता। और यदि वैसी चीज़ लेनेवालोंका द्रव्य खेती बाड़ी जैसे उपयोगी धंदेमें लगता हो–अर्थात् उन चीज़ोंके लेनेवाले खेतीके समान उपयोगी धंदा करनेवाले किसान हों, तो कारीगर लोगोंको दूनी हानि होती है। प्रथम तो ऊपर बताये मुवाफ़िक जितनी शौक़िया चीज़ें ख़रीदी जाती हैं उनकी क़ी-

मतका धन, उस धनभंडारमेंसे कम होता है, जिसमेंसे उत्पादक कारीगरोंको तनख़्वा दी जाती है, या यों कहिए कि पूंजी घटती है, और दूसरे, उसके ज़रियेसे जो नई संपत्ति पैदा हो सकती है नहीं होने पाती। और उस सम्पत्तिसे जो नई पूंजी बनकर परम्परातक सम्पत्ति बढ़नेका कारण उत्पन्न होता, रुक जाता है।

दूसरा उदाहरणः—इस उदाहरणसे हमारा यह आख़िरी कारण साफ़ समझमें आजायगा और यहभी यथार्थ रीतिसे ध्यानमें आजायगा कि मालकी खपती होना ही श्रमकी खपती नहीं है। किसान अपना अनाज अपनी चाही हुई वस्तुको ख़रीदनेके लिये बेचता है। अब इस वस्तुका अनुत्पादक व्यय हो जाय तो उसके मूल्य जितनी रक़म देशकी पूंजीमेंसे कम होगई। जो उसका उत्पादक व्यय हुआ तो देशकी पूंजी बढ़ेगी। हमारे कहनेका तात्पर्य यह है कि अपने जीवनव्यव-हारकी वस्तुओंके सिवाय, किसान ऐसी चीज़ोंको ख़रीद वैठे जिनसे उसके जीवनमें कुछ सहायता न हो, या, यों कहिए कि जिनके बिना जीवन ठीक तौरपर चल सकता हो, तो उससे हानि ही है। जैसेः—सोचिए कि रेज़ीके मज़बूत कपड़ेसे गरमी सरदीका प्रभाव रोका जासकता है और वह अच्छी चलतीभी है। ऐसी सूरतमें वह; मख़मल, कीनख़ाब, मलमल, तनजेब, वग़ैरा ख़रीदे, तो कहा जायगा कि उसने निरुपयोगी व्यय किया। यदि वे सर्वथा विदेशकी हों तो उससे औरभी विशेष हानि है। ये चीज़ें शीघ्र ख़राब हो जाती हैं और दाम ज़्यादा लगते हैं। क्योंकि २) रुपयेकी रेज़ी जितने दिन काम देगी उतने दिनमें इस कपड़ेमें १०) रु० ख़र्च होंगे। यदि वह ऐसा न कर उस

ज़्यादा पूंजीको अपने धंदेमें ख़र्च करे तो वह ख़र्च उत्पादक ख़र्च होगा; क्योंकि उससे भविष्यतमें उत्पादन करनेवाले कारीगरोंका पोषण होता है।

मख़मल, तनजेब, आदि लेनेवाले किसानके मनमें कुछ प्रसन्नता होती है। बाक़ी कोई फल नहीं होता। परन्तु धनको उत्पादक व्ययमें लगानेसे कामवाले आदमियोंका पोषण होता है और उसका फल स्वरूप नई सम्पत्ति उत्पन्न होती है। सम्पत्तिका जो भाग ठाटबाट—सजधजकी चीज़ोंमें लगता है वह उत्पादक व्यय नहीं; अतएव ऐसी चीज़ोंकी खपतीसे देशकी पूंजी कम होती है। क्योंकि पूंजी कहते ही उसे हैं कि "सम्पत्तिका जो भाग भविष्यतमें सम्पत्ति पैदा करनेके निमित्त उत्पादक व्यय करनेको इकट्ठा कर रक्खा हो।" कोई कहेंगे कि शौक़िया सामान ख़रीदनेवालोंका कोई क़ुसूर नहीं है, क़ुसूर सामान बनानेवालोंका है, जो ऐसे २ सामान बनाकर देशकी पूंजी घटाते हैं। परन्तु यह बात भूलनेकी नहीं है कि कोई ख़रीदनेवाला न हो तो वे बनावें ही नहीं।

मालकी खपतीपर पूंजी और श्रमकी वृद्धिका आधार नहीं है परन्तु उससे इतना ही निश्चय होता है कि वे किधर लगाये जायंगे। अच्छा इस बातको उदाहरणसे समझें:—

कल्पना करो कि किसीके पास एक क़ीमती तसवीर है। वह उसे बेचकर जवाहिर जड़े हुए ज़ेवर लेना चाहता है। यदि वह जवाहिर जड़े हुए ज़ेवर लेले, या लेनेके पहिलेही उस तसवीरके बिगड़ जानेसे न ख़रीद सके तो इन दोनों बातोंका प्रभाव ज़ेवर बना-

नेवाले कारीगरोंपर, या उन कारीगरोंको तनख्वा देनेके धनभंडार पर, कुछ नहीं पड़ेगा। हां चित्र खराब हो जायगा तो उतने मूल्यके ज़ेवर ज़रूर कम बिकेंगे और उनके कम बिकनेसे जौहरी अपनी पूंजी, उतनी ही कम, अपने धंदेमें न लगाकर किसी औरही रोज़गारमें लगा देगा। अन्ततः देशकी पूंजीमें कुछ कमती बढ़ती न होगी।

इस बातको और स्वरूपसे देखें:—हम कह गये हैं कि ठाट-बाटके सामान लेनेसे कारीगरोंकी स्थितिपर कुछ लाभ-दायक प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु अभी एक बातका विचार और करना है।

कल्पना करो कि एक किसान, अपनी खेतीकी ज़मीनको अच्छी करनेमें २०००) रुपया खर्च न कर अपने मकानको सजानेमें कारीगरोंको देता है। इन दोनों बातोंमें प्रत्यक्ष रीतिसे २०००) रुपये काम करनेवालोंको मिलते हैं। इससे कोई यह सोचे कि दोनों तरहकी रीतियां कारीगरोंको समान लाभ देनेवाली हैं तो ठीकही है। परन्तु यह ठीक नहीं है। तात्कालिक फल दोनोंका समान होनेपरभी दोनोंके परिणाममें बड़ाही भेद है। पहला व्यय उत्पादक व्यय होनेसे सम्पत्तिकी उत्पत्ति होती है और उससे पूंजी बढ़ती है जिससे भविष्यतमें कारीगरोंको विशेष २ लाभ होता जाता है। और दूसरा अनुत्पादक व्यय है इससे तात्कालिक जो लाभ कारीगरको हो गया सो होगया भविष्य-तमें कुछ नहीं। इतना ही नहीं, ऐसे व्ययसे सम्पति उत्पन्न न होकर पूंजी नही बढ़ती, अतएव घटी होकर आयन्दाका लाभ कम होता है।

पूंजी खर्चका फल नहीं है, बचतका फल है, इस बातको बतानेके लिये हम जितना चाहिए उतना कहचुके हैं। उड़ाऊ मनुष्य ऐशआराममें अपनी सम्पत्तिको उड़ाकर देशकी पूंजी कम करते हैं। परन्तु उड़ाऊपनके बारेमें बहुतसे लोगोंका विचार होता है कि उससे व्यापारको लाभ पहुंचता है। ऐसा होनेका कारण है और वह यह है कि वे पूंजीके बारेमें कुछ समझते नहीं हैं। संडे मुसंडे भीखमंगोंको देने, तीर्थके दुराचारी पंडोंको चढ़ाने और मूढ़ ब्राह्मणोंको दान करने, वग़ैरामें जो व्यय होता है वह उत्पादक व्यय नहीं; उससे देशकी सम्पत्ति नहीं बढ़ती। यदि यही सम्पति उत्पादक रीतिसे व्यय की जाती तो देशकी दरिद्रता दूर होती। अर्थात् विद्वान् ब्राह्मण, महानुभाव साधु, और ऋषिकल्प तीर्थगुरुओंको मिलती तो वे इसकी योजनासे ऐसी २ संस्थाएं चलाते कि जिनसे दिन दूनी रात चौगुनी सम्पत्ति (देशकी) बढ़ती। यह विषय धर्ममिश्रित अर्थशास्त्रका है। हमें यहांपर इसका विचार नहीं करना है, केवल अर्थशास्त्रका विचार करना है। अर्थशास्त्र पुकार पुकार कर कहता है कि अनुत्पादक व्यय पाईका भी न करो और उत्पादक व्यय जितना करसको करो। क्योंकि उत्पादक व्ययही देशकी पूंजी बढ़ाता है, काम करनेवालोंको तनख्वा देनेके धनभंडारको बढ़ाता है और कारीगरोंको लाभ पहुंचाता है।

पूंजी काममें लगनी चाहिए:—हम बतागये हैं कि पूंजी बचतका फल है। इससे यह नहीं समझा जाना चाहिए कि बचा-बचा कर इकट्ठा कर लेनेसे देशकी पूंजी बढ़ती है। नहीं, ऐसा नहीं है, अमुक काममें पूंजी लगनी चाहिए जिससे उसकी वृद्धि हो।

पूंजी उसका नाम है जो सम्पत्तिमेंसे अमुक काममें लगानेको अलहदा कीगई हो। पूंजी अमुक काममें दो प्रकारसे लगती है एक तो मकान बनानेमें और यंत्रादि साहित्य इकट्ठा करनेमें; और दूसरे, काम करनेवालोंको पोषणके लिये अन्नादि देनेमें। मकान, सांचे, औज़ार वग़ैरा, धीरेधीरे घिसते जाते हैं और अन्नादि तुरंत बीत जाते हैं। इससे एक आवश्यक भेद समझमें आता है कि जिस तरह यंत्रादि धीरे धीरे अपना काम करते हैं, कारीगरोंके पोषणकी सामग्री उसी तरह अपना काम नहीं करती। इसी भेदको लक्ष्य करके सम्पत्तिशास्त्रके विद्वानोंने पूंजीके दो भेद माने हैं (१) एक स्थावर पूंजी और दूसरी (२) जंगम पूंजी। हम यहांपर पहले जंगम पूंजीका बयान करते हैं।

जंगम पूंजीः—किसी धंदेमें लगी हुई पूंजीके उस भागका नाम जंगम पूंजी है जो काम करनेवालोंको तनख्वाके रूपमें या कोयले वग़ैराके जलानेके रूपमें व्यय होती है—अर्थात् जो एकहीबार काम देती है। जो एकही बार काममें आवे उसीको जंगम पूंजी कहते हैं। अर्थशास्त्रविशारद पंडित मिलने जंगम पूंजीकी व्याख्या यह लिखी है कि "सम्पत्तिके उत्पन्न करनेके काममें एकहीबार काममें आनेसे जो पूंजी पूरी होजाय उसे जंगम पूंजी कहते हैं"।

स्थावर पूंजीः—उद्योग धंदेके उपयोगी; मकान, यंत्र, गोदाम वग़ैरा, जो बहुत समयतक क़ायम रहते हैं, स्थावर पूंजी कहाते हैं। किसानके हल आदि औज़ार, जो धीरेधीरे बिगड़ते हैं—एकही बार काममें लानेसे नहीं बिगड़ जाते, स्थावर पूंजी हैं।

और एक बात है। जंगम पूंजीका बदला एकदम मिल जाता है और स्थावर पूंजीका बदला धीरेधीरे (वह पूंजी जबतक काम आती रहती है उस समय तक) मिलता रहता है। जंगमपूंजीका मूल्य और कुछ उसपर नफ़ा हो इतना पलटा उसके ख़र्च होते ही तुरंत मिलना चाहिए; परन्तु स्थावर पूंजीकी यह बात नहीं है। उसमें अमुक वस्तुके घिसनेका बदला और कुछ उससे विशेष लाभ हो गया तो काफ़ी है।

किसान अपने खेतमें अनाज पैदा करके बेचता है। उसे इस अनाजमेंसे; ख़ाद-बीज, हालियोंकी मज़दूरी, अपने परिश्रम आदिका बदला मिल जाता है और कुछ बच भी रहता है। परन्तु यदि वही किसान स्टीमसे चलनेवाले हलको ख़रीद कर खेती करे तो उसे एकही सालमें उसका बदला नहीं मिल सकेगा। क्योंकि वह एकही दफ़ेके काममें आनेसे नहीं बिगड़ जायगा। वह धीरेधीरे काममें आता जायगा और बदला चुकाता जायगा।

जंगम पूंजीको स्थावर पूंजीके रूपमें पलट दिया जाय तो उससे कारीगरोंको कुछ समयतक हानि होती है परन्तु फिर वह ठीक हो जाती है। पहले हम कामकरनेवालोंको तनख्वा देनेकी पूंजीका वर्णन करते हुए जिस धनभंडारका जिक्र कर गये हैं वह जंगम पूंजी है इससे जितनी जंगम पूंजी कम होगी उतनी ही धनभंडारमें कमी होगी। कल्पना करो कि एक व्यापारी अपनी जंगम पूंजीमेंसे १००००) निकालकर स्थावरपूंजीमें लगाता है— अर्थात् कलें, सांचे आदि ख़रीदता है। ऐसा होनेसे जो काम, ये कलें और सांचे करेंगे, उन कामोंके करनेवाले लोगोंकी रोज़ी मारी जायगी। वे लोग कोई और ही रोज़गार करेंगे। उनका

पहला काम छूट जानेसे दूसरे काममें ज्यादती तो होगी नहीं, वह तो वैसेही स्वरूपमें रहेगा और मज़दूरोंकी ज्यादती होगी। अतएव मज़दूरी सस्ती हो जायगी और काम करनेवाले मज़दूरोंको हानि होगी, परन्तु इस प्रकारकी हानि बहुत दिनोंतक नहीं रहती। कल और सांचोंके व्यवहारसे श्रमकी उत्पादक शक्ति बहुत ही बढ़जाती है और पूंजी सपाटेसे बढ़ती है। इससे धनभंडार बढ़ता है और मज़दूरी तेज़ होकर काम करनेवालोंको जितना नुक़सान हुआ होता है, उससे भी विशेष लाभ हो जाता है।

हम कह गये हैं कि पूंजी बचतका फल है, परन्तु पूंजी बढ़ती है तो समझना चाहिए कि बचतमें भी वृद्धि होती है। इस बचतके करनेकी इच्छा सदा और सर्वत्र एकही रीतिसे नहीं होती। न्यारे-न्यारे देश और न्यारे-न्यारे समयमें उसमें अन्तर होता है। इस इच्छाके उत्पन्न होनेके दो कारण है। (१) भविष्यतके निर्वाहके लिये चातुर्य-पूर्ण दूरदर्शिता और (२) किसी व्यापारमें सम्पत्ति लगाकर पैसा कमानेकी आशा। जो आदमी बिलकुल बेसमझ हैं, जिन्हें आगे-पीछेकी कुछ सुध नहीं है, वे कभी कुछ नहीं बचाते, उनके विचारमें तो आजही आया और आजही उड़ाया, बस हो गया, कलकी कलसे देखी जायगी। हलके दरजेके आदमियोंमें बहुतसे ऐसे होते हैं। वे अपनी कमाई रोज़ पूरी कर देते हैं। खाने-पीनेसे जो कुछ बचताभी है तो उसे; अफीम, तम्बाखू, भांग, गांजे आदिमें पूरी कर देते हैं—शराब पीनेमें उड़ा देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि यदि वे बीमार होजाते हैं, या, किसी कारणसे

काम नहीं कर सकते तो खानेपीनेके सांसे पड़ते हैं। उन्हें (यदि मिल जाय तो) कर्जके बोझेमें दबना पड़ता है और परिणाममें भांति भांतिके दुःख भोगने पड़ते हैं। एक बात और है। यदि वह न हो तो पैसा कोई बचावेगा ही नहीं, वह यह है कि राज्यकी ओरसे मालकी रक्षा होती रहती है। यदि न होती हो तो कोई परिश्रम कर दूसरोंके लूटलेनेके लिये क्यों बचावेगा।

सम्भूय समुत्थानः—दूसरे, जो मनुष्य व्यापारमें लगा-कर बढ़ानेको दाम बचाते हैं वे देशके बड़ेही कमाऊ पूत हैं। अमेरिका, इंग्लेंड आदि देशोंमें इस इच्छासे वहुत पैसा वचाया जाता है। अभी हमारे भारतमें इस विषयका बहुत कम ज्ञान होनेसे इस विषयका लाभ यथार्थ रीतिसे लोक नहीं उठाते। यहांपर जाइन स्टाक कम्पनियां वहुत कम हैं। थोड़ा-थोड़ा रुपया इधर-उधर पड़ा रहनेसे—लोगोंकी सन्दूक़ोंमें रक्खा रहनेसे कुछ फ़ायदा नहीं। अगर वही रुपया लगाकर लोग, एक एक कारख़ाना खोलें—अर्थात् संयुक्त मूल-धनके बलसे कारख़ाने चलावें तो बहुतही लाभ हो। ऐसी कम्पनियां; बम्बई, कलकत्ता, पूना, अमदाबाद, इंदोर आदि स्थानोंमें खड़ी हुई हैं परन्तु वें बहुतही कम हैं। छोटे छोटे गांवोंमें जाकर देखिए:—किसीके घरमें पांच, किसीके घरमें दस, किसीके घरमें २०—२५ बचाये हुए रुपये अलहदा-अलहदा व्यर्थ पड़े हुए हैं। अब सोचिए कि इतनीसी पूंजीसे प्रत्येक मनुष्य अपना-अपना पेशा छोड़कर न्यारा-न्यारा धंदा नहीं कर सकता, परन्तु, सब अपने-अपने रुपयेको जमाकर कोई काम छेड़दें तो संयुक्त मूलधनके बलसे

सबको लाभ हो। ग़रीबोंकी रोज़ी चले और देशकी सम्पत्ति बढ़े। परन्तु ऐसी कम्पनी खड़ी करनेमें कुछ बेईमानी न होनी चाहिए। क्योंकि बेईमानी कर लोगोंका पैसा अगर ऐसी एकदो कंपनियां डुबो देंगी तो फिर लोगोंका विश्वास ऐसी कम्पनियों-परसे उठ जायगा।

पूंजीकी बाढ़ः—कितनेही लोगोंका कहना है कि पूंजीकी बाढ़में रोक लगनेसे कुछ हानि नहीं होती, क्योंकि पूंजीकी बाढ़ न रोकी जाय और श्रीमान् लोग ऐशआरामकी चीज़ोंमें उड़ाऊ ख़र्च न करें तो पूंजी इतनी बढ़ जायगी कि वह काममें न लगकर व्यर्थ पड़ी रहेगी। परन्तु यदि इन कहनेवालोंने पूंजीकी व्याख्या अच्छी तरह ध्यानमें रक्खी होती तो उन्हें तुरंतही मालूम होजाता कि पूंजीकी वृद्धिसे ऐसे अनिष्ट परि-णामके माननेमें भूलभरी हुई है। हम कई बार बतागये हैं कि अमुक कामके लिये आवश्यक हों; ऐसे मकानात, कल, सांचे आदि साहित्यके बनाने-करनेमें, और जबतक काम चले तबतक काम करनेवालोंको तनख़्वादेनेमें, जो सम्पत्ति लगे उसका नाम पूंजी है। अब यदि यह पूंजी बढ़ेगी तो किसी दूसरे काममें लगाई जायगी, या, चलू धंदेकी ही तरक़्क़ी होगी, इन दोनों कामोंमेंसे कुछभी हो उससे जंगम पूंजी बढ़ेगी और तनख़्वा देनेका धन भंडार उन्नत होगा। धनभंडारके उन्नत होनेका फल यह होगा कि यदि मज़दूर न बढ़े तो मज़दूरी बढ़ जायगी और वह मज़दूरोंकी हालतको सुधारेगी। अतएव यह सिद्ध हुआ कि जिन २ तरक़ीबोंसे पूंजीकी बाढ़ होवे वे तरक़ीबेंही ग़रीब मज़दूरोंकी दशा ठीक करनेके-प्रबलसे प्रबल साधन हैं।

और यह बातभी सिद्ध है कि पूंजीको बढ़ानेवाला आदमीही, अपना और देशका भला करनेवाला है खपानेवाला नहीं।

ज़मीन, श्रम और पूंजी विषयक तीनों प्रकरणोंमें सम्पत्तिकी उत्पत्ति सम्बन्धी मुख्य सिद्धान्तोंका वर्णन हम करचुके। इनमेंसे पूंजीके व्यापारको अच्छी तरह ध्यानमें रखना चाहिए। वरना सम्पत्ति विभागके विषयमें जो जो बारीक़-बारीक़ उलझे हुए सवाल होते हैं उनका विवेचना पूर्ण खुलासा ठीक ठीक ध्यानमें नहीं आसकेगा।

प्रश्न

(१) पूंजी किसे कहते हैं।

(२) उदाहरण देकर समझाओ कि पूंजी सम्पत्तिके उत्पादनमें आवश्यक है ?

(३) तनख़्वाका धनभंडार क्या होता है ?

(४) पूंजी, भांति-भांतिसे कैसे सम्पत्तिके उत्पादनका साधन है ?

(५) ठाट बाट सजधजकी चीज़ोंमें लगा हुआ धन पूंजी क्यों नहीं है ?

(६) उदाहरण देकर समझाओ कि मालकी खपती पर परिश्रमका आधार नहीं है।

(७) सजधजकी चीज़ें व्यापारको लाभ पहुंचाती है यह मानना क्यों ग़लत है ? उदाहरण देकर समझाओ।

(८) इकट्ठा कियाहुआ धन क्या देशकी पूंजी है ?

(९) स्थावर और जंगम पूंजीमें क्या भेद है ?

(१०) जंगम पूंजीमें किन २ वस्तुओंका समावेश है ?

(११) जंगम पूंजीको स्थावर पूंजीमें पलट देनेसे मजदूरों पर क्या प्रभाव पड़ता है और वह प्रभाव कब हट जाता है ?

(१२) मनुष्यको धन बचानेकी इच्छा क्यों होती है ?

(१३) सच्चे व्यापारके होनेसे पूंजीके इकट्ठा होनेपर क्या असर पड़ता है ?

(१४) पूंजीकी बाढ़ किसे कहते हैं ?

(१५) पूंजीकी बाढ़से हानि होनेका भय क्यों झूठा है ?

(१६) इस प्रकरणके सिद्धान्तोंका विचारकर बतलाओ कि देशको सच्चा लाभ भीख देनेवालोंसे नहीं है प्रत्युत पूंजी वालोंसे है ।

विशेष प्रश्न

(१) तुम्हारे पास शाही हो तो क्या वह पूंजी कही जायगी ? तुम्हारे पास १०० मन शाही हो तो क्या पूंजीकी बाढ़ कही जायगी ?

(२) क्या गाड़ीके बैल पूंजी हैं ? और हैं तो स्थावर हैं या जंगम ?

(३) लड़नेके अस्त्र-शस्त्र पूंजी हैं ?

(४) कल्पना करो कि एक लड़का रोज चार आनेकी जलेबियां खाता है इससे परिश्रममें कुछ बढ़ती होगी ?

(५) एक मनुष्यने लाखों रुपया इकट्ठा कर रक्खा है क्या वह पूंजी कहा जायगा ?

(६) वह अपने रुपये युद्ध चलानेके लिये किसी प्रजाको उधार देता है ऐसी सूरतमें क्या उसका रुपया पूंजी हो जायगा ?

(७) वह उस रुपयेको किसी रेल्वे कंपनीमें देता है तो क्या उस रुपयेको पूंजी कहेंगे ?

(८) जो क़ानूनमें ऐसी बात हो कि एक जातिके मनुष्य दूसरी जातिके मनुष्योंका द्रव्य लूटले तो सम्पत्तिके सञ्चय करने पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा ?

(९) रसोई बनाने वालेका श्रम उत्पादक है या अनुत्पादक ?

दूसरा भाग।

सम्पत्तिका परिवर्तन

विषयप्रवेश

सम्पत्ति हुए बिना परिवर्तन नहीं हो सकता। परन्तु परिवर्तन होनेके लिये सम्पत्तिका होनाही काफ़ी नहीं है। परिवर्तन होनेके लिये अमुक वस्तु सर्वसाधारणकी सम्पत्ति नहीं होना चाहिए। उसका मालिक कोई एक व्यक्ति या एक समाज होना चाहिए। यदि सारी चीज़ें सर्व साधारणकी हों और प्रत्येक वस्तुका प्रत्येक मनुष्य स्वामी हो तो फिर किसी वस्तुकी अदलाबदली होवे ही नहीं।

सर्व साधारणकी मालिकी:—हम इस समय दुनियामें देखते हैं कि किसीके पास करोंड़ों रुपये हैं और कोई भिखारी है। किसीको जितना चाहिए उससेभी ज्यादा खानेपीनेको मिलता है और किसीके अन्न और दांतोंका बैर है। इस अव्यवस्थाको दूर करनेके लिये योरप और अमेरिकाके विद्वानोंने एक योजना घड़डाली है। वह योजना सर्व साधारणकी मालिकीके विषयमें है। इस योजनामें मुख्य विचार यह रक्खा गया है कि किसी मनुष्यकी निजी मालियत न होनी चाहिए। हरेक मनुष्यको उसके परिश्रमके मुआफ़िक़ फल न मिलना चाहिए बल्कि उसके आवश्यक ख़र्च जितनाही मिलना चाहिए। इस विषयके विरुद्ध बहुत तक़रार उठाई जासकती है। प्रथम यही कि दुनियामें दूसरोंके लिये परिश्रम करें ऐसे परमार्थी पुरुष बहुत कम होते हैं क्योंकि प्रायः संसार अपने स्वार्थके लिये

ही परिश्रम करता है। अब सर्वसाधारणकी मालिकीवाली योजनाके मुआफ़िक़ मनुष्यके श्रमका फल उसे अकेलेको न देकर सर्व साधारणमें बांट दिया जाय तो इसका यह नतीजा होगा कि वह तनदिहीके साथ श्रम ही न करेगा। क्योंकि उसके जीमें यह विचार उठेगा कि मैं सपरिश्रम काम करूं या न करूं मुझे अपनी आवश्यकतासे ज्यादा तो मिलना ही नहीं है। मनुष्यको भविष्यतकी चिन्ताभी न रहेगी अमिताचारीभी हो जायगा और अपनी आवश्यकताकोभी बढ़ालेगा। इस वक्त अपने बालबच्चोंका गुजरान चलानेको खूब परिश्रम करता है परन्तु इस योजनाके अमलमें आनेसे न करेगा, क्योंकि उसे फिर कुछ चिन्ता तो रहेगी ही नहीं। कुटुम्ब वृद्धिभी करता जायगा। क्योंकि "सर्वसाधारणकी मालिकी" वाली योजनासे आवश्यकता जितनी प्राप्ति तो होही जावेगी। इस प्रकारकी अनेक बाधाएं इस योजनामें हैं तथापि हम इतना अवश्य कहेंगे कि यह योजना कुछ हँसकर उडा देने जैसी ही नहीं है। वर्तमानमें जो रीति प्रचलित है वह कुछ ऐसी सम्पूर्ण नहीं है कि उसमें सुधार न किये जांय। हम यह नहीं कहते कि वह सुधार सर्वसाधारणकी मालिकीका सा होना चाहिए परन्तु इस समयकी स्थितिमें मनुष्य समाजका अधिक भाग संकट भोग रहाहै उसका सुधार होनाही चाहिए। और यह बातमी ध्यानमें रखने लायक़ है कि जो भूलें सर्वसाधारणकी मालिकीवाली रीतिमें हैं वेही भूलें-थोड़ी बहुत-वर्तमान मनुष्य समाजकी रचनामेंभी होती हैं। भिखमंगोंको भीख देनेका वही हाल होता है। सर्वसाधारणकी मालिकीमें जैसे मनुष्य काम करनेमें श्रम करना

कम करदेता है वैसे ही अमुक रक़म रोज़ाना मुक़र्रर करदेनेपर भी हो जाता है। वह यह तो जानताही है कि स्याम होते ही मुझे अमुक रक़म तो मिलही जायगी। फिर वह इतनाही श्रम करनेकी परवा करता है कि कामपर रखनेवाला उसे आलसी समझ कर न छुड़ा दे। वह उतनाही श्रम करता है कि काम-वाला उसे आलसी न समझले। यही हाल रोज़के नोकरोंका होता है। उनको मुकर्रर तनख़्वा तो मिलही जाती है। अमुक जगहका हाकिम अच्छा काम करे या बुरा और कई एक उदा-हरणोंमें तो वह नाम मात्रको ही काम करता हो परन्तु उसे तो उतनाही मासिक द्रव्य मिल ही जायगा। इस बातको कह कर हम यह नहीं कहना चाहते कि सर्वसाधारणकी मालिकीका रिवाज़ अच्छा है परन्तु इतनाही कहते हैं कि वह कुछ धिक्कार देकर निकाल देनेलायक़ नहीं हैं प्रत्युत निष्पक्षपात होकर विचार करनेलायक़ है। सर्वसाधारणकी मालिकीकी योजना-ओंका कुछ हाल हम परिशिष्टमें लिखेंगे।

हम कहगये हैं कि परिवर्तनके लिये किसी ख़ास मनुष्यकी मालिकीकी सम्पत्ति होनी चाहिए। जब यह बात है तब ऐसा मालूम हुए बिना न रहेगाकि परिवर्तनका ज़िक्र करनेके पहले सम्पत्ति विभागके नियम बतलाना चाहिए था जिनके अनुसार पृथक् २ मनुष्य और मनुष्य समाजमें सम्पत्ति बांटी जाती है। परन्तु हमने दूसराही क्रम अंगीकार किया है क्योंकि किराया तनख़्वाकी वस्तुए और लाभकी सम्पत्तिका जिन प्रसंगोंसे विभाग होता है—मोल और दाम शब्दोंका अर्थ बतलाये बिना—इस छोटेसे पुस्तकमें नहीं बताया जासकता। अतएव हम इस

भागमें मोल, दाम और उत्पादक व्यय (मकान किराया तनख्वाका धनभंडार) के विषयमें कहेंगे और नीचे बताई हुई तीन बातोंके मोल निश्चय करनेवाले कारणोंके विषयमेंभी।

(१) जो चीज़ें नियमित होती हैं।

(२) जो चीज़ें उत्पादक ख़र्च बढ़ाये बिना नहीं बढ़ सकतीं।

(३) जो चीज़ें उत्पादक ख़र्च किये बिना बढ़ सकती हैं।

प्रश्न

(१) सर्वसाधारणकी मालिकी किसे कहते हैं ?

(२) सर्व साधारणकी मालिकीसे क्या हानियां होती हैं ?

विशेष प्रश्न

(१) सर्वसाधारणकी मालिकीसे कार्यविभाग [illegible] दूसरोंके होगी ?

(२) प्रत्येक मनुष्यको समान लाभ [illegible] तो भारी भारी काम कोई करेगा ?

(३) सर्व साधारणकी मालिकी [illegible]दा कम हो जाय और ख़र्च करनेवालोंकी संख्या बढ़ जाय तो ग़रीब-से-ग़रीब मनुष्यको भी लाभ होगा या क्या ?

(४) देशमें खाती, लुहार, सिलावट वग़ैराको नियमित रोज़ाना मज़दूरी दीजाती है और सरकारी काम करनेवालोंको मुक़र्रर मासिक तनख्वा। इस व्यवस्थासे लाभ है या हानि, और हानि है तो क्या ?

पहला प्रकरण

मोल और दाम, या, मूल्य और क़ीमत

मोल और दामका सच्चा अर्थ, इनका भेद और सम्बन्ध जानना बड़ाही ज़ुरूरी है, अतएव हम इसके समझानेका यत्न करते हैं।

मोलः—किसी चीज़का मूल्य उसका किसी दूसरी चीज़के साथ मुक़ाबला करनेसे जाना जाता है, या, यों कहिए कि एक चीज़की ऐवज़में दूसरी चीज़ कितनी मिलती है इससे उसका मोल जाना जा सकता है। अच्छा विचार करो कि एक सेर घीकी एवज़में दस सेर गेहूं मिलते हैं तो यह कहा जायगा कि एक सेर घीका मोल दस सेर गेहूं है। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि मोलके साथ मुक़ाबला लगाहुआ है। जब हम यह कहते हैं कि एक सेर घीका मोल दस सेर गेहूं हैं तब वास्तवमें घी और गेहूंका मुक़ाबलाही करते हैं दोनोंका सम्बन्धही स्थिर करते हैं।

मोलमें मुक़ाबलेका विचार है तब यह भी साफ़ही बात है कि किसी वस्तुके मूल्यमें दो कारणोंसे फेर पड़ता है। एक कारण उसी चीज़में होता है और दूसरा उस चीज़में जिसके साथ अमुक चीजका मुकाबला किया जाता है। पहला भीतरी कारण कहा जाता है और दूसरा बाहरी। इन्हीं दोकारणोंसे चीज़ोंके मोलमें मूल्यमें-मालियतमें फेर-फार हुआ करता है। हमने जो दृष्टान्त दिया है उसेही देखिए। अच्छा सोचिए कि घीकी पैदा वार कम हुई और उसका मूल्य बढ़ गया। यह

मूल्य बढ़ जानेका जो फेर हुआ सो भीतरी कारणसे हुआ। और यदि गेहूंकी पैदावार ज्यादा होनेसे गेहूंका मोल घट जाय-तो घीका मोल बढ़ सकता है। ऐसी सूरतमें कहा जायगा कि घीका मोल बाहरी कारणसे बढ़ा। इससे मामूली तोर पर यह सिद्ध होगया कि अलग चीजोंका आपसमें सम्बन्ध स्थिर कर-नेका-मुकाबला करनेका नाम मोल है। इससे यहभी सिद्ध हो गयाकि सब चीजोंका मोल एकही समयमें नहीं घट बढ़ सकता। क्योंकि "सब चीजोंका मोल बढ़ गया" इस कहने का यह अर्थ हुआ कि हरेक चीजकी ऐवजमें दूसरी चीज ज्यादा मिलेगी। ऐसा कहना, इस कहनेके ऐसा ही है कि "एक बागमें १५ दरख्त हैं और उनमें हरेक दरख्त ऐसा है कि जो और १४ दरख्तोंसे ऊंचा है"। ऐसा हो नहीं सकता कि एक चीजके मोलमें बढ़ती हो तो दूसरीके मोलमें कमी न हो जाय। जितनी बढ़ती एक वस्तुके मोलमें हो उतनी कमी दूसरी वस्तुके मोलमें होना ही चाहिए। जो हम यह कहें कि बीस वर्ष पहले घीका जो मोल था वह अब नहीं रहा। घीका मोल अब बढ़ गया है तो इस कहनेका यह मतलब हुआ कि उस समय सेरभर घीके ऐवजमें जितने गेहूं मिलतेथे अब उनसे ज्यादा मिलते हैं। तब यह बात हुई कि बीस वर्षमें घीका मोल बढ़गया और जितना घीका मोल बढ़ा उतनाही उसके ऐवजमें आनेवाले गेहूंका मोल घट गया। और एक बात है, और वह यह है कि मोलमें, परिवर्तन-अदलाबदलीका विचारभी शामिल है। क्योंकि अमुक चीजका

मोल निश्चित करनेके लिये यहभी निश्चित करना होता है कि उसके पलटेमें दूसरी वस्तु कितनी मिल सकेगी।

अदलाबदली:—जंगली आदमियोंमें एक चीज़का दूसरी चीज़के साथ पलटा करके लेन देन होता है। वे रुपये पैसेको काममें नहीं लाते। हमारे छोटे छोटे गांवोंमें अब भी वस्तुओंसे अदलाबदली की जाती हैं। किसीको तरकारी लाना होता है तो पैसे नहीं काटता। कुछ जुवारके दाने ले जाता है और उनकी ऐवज़में शाकभाजी ले आता है। विनिमयकी इस रीतको अदलाबदली कहते हैं। इस रीतमें बड़ी अड़चनें हैं। जिन देशोंमें अदलाबदलीसेही काम चलता है वहांका व्यापार बड़ाही मन्द चलता है। यदि हम यही कहदें कि वहां व्यापार चलताही नहीं तो अतिशयोक्ति न होगी। अदलाबदलीमें जो दिक़तें होती हैं उन्हीं दिक़्क़तोंके कारण दुनियाको सिक्का चलानेकी सूझी और सर्व सम्मतिसे किसी अमुक वस्तुको वस्तुओंके मूल्यका माप ठहरा कर वस्तुओंकी अदलाबदलीका साधन मुक़र्रर किया। इससे अदलाबदलीकी आवश्यकता न रही। जिस समय अदला बदलीकी रीत ज़ारीथी उस समय लोगोंको बड़ी दिक़्क़तें उठानी पड़तीथीं। कल्पना करो कि एक शख़्शके पास अनाज है और इतना है कि जितनेकी उसे आवश्यकता नहीं, अब उसे कपड़ा चाहिए। तो वह अपनी आवश्यकता जितना अनाज रखकर विशेषको कपड़ालेनेको ले जाता है। परन्तु सहजमें उसे कपड़ा नहीं मिलता। क्योंकि कपड़ेवाले मिलते हैं परन्तु उन्हें अनाजकी जुरूरत नहीं। किसीको जूतेकी जुरूरत है और किसीको रूईकी। ऐसी सूरतमें अनाजवाला मारा मारा फिर

रहा है। मुश्किलसे उसे ऐसा कपड़ेवाला मिला जिसे अनाजकी ज़ुरूरत है तब कहीं पलटा हुआ । सिक्केसे ये दिक़्क़तें दूर होगईं। सिक्का चलनेबाद उसके ऐवज़में हरकोई जो चाहे ख़रीद सकता है और बेचसकता है।

दाम या क़ीमतः—किसी वस्तुके मूल्यको हम जब सिक्केमें कहें तब उसका नाम दाम या क़ीमत है। इसलिये दाम या क़ीमत मोलका एक प्रकार ही है क्योंकि हम ऊपर बता गये हैं कि किसी चीज़का मूल्य—उसके ऐवज़में दूसरी चीज़ कितनी मिलेगी इससे होता है। अच्छा कल्पना करो कि एक वार कपड़ा दो रुपयेमें आता है अतएव यह कहनेमें कोई हर्ज नहीं है कि एक वार कपड़ेका मोल दो रुपया है। परन्तु, सिक्का मूल्यके मापके तोरपर और अदलाबदलीके साधनके तोरपर पसन्द किया गया है। अतएव उसकी अदलाबदलीकी ताक़तका एक नाम रक्खा जाना चाहिये। ऐसा नाम रखनेसे सुभीता पड़ता है। इससे किसी चीज़के ऐवज़में जितने रुपये आंय वे उस चीज़की क़ीमत है या उस चीज़के दाम हैं।

जब हम किसी चीज़के दाम या क़ीमतके बारेमें बातें करते हैं तब हम उस चीज़का और क़ीमती सिक्कोंसे मुक़ाबला करते हैं परन्तु जब हम किसी वस्तुके मूल्यके विषयमें बातें करते हैं तब हम उस वस्तुका और वस्तुओंसे मुक़ाबला करते हैं। इससे यह बात सिद्ध होजाती है कि एकही समयमें सब चीज़ोंका मूल्य नहीं घट सकता और न बढही सकता है परन्तु कीमत घट सकती है या बढ़ सकती है। क्योंकि कारण पाकर प्रत्येक वस्तुके ऐवज़में दाम कम या ज़्यादा मिल सकते हैं। कल्पना

करो कि अमुक देशमें फिरता हुआ रुपया दूना होगया और आबादी व व्यापारमें कुछ तरक्की न हुई। ऐसी सूरतमें प्रत्येक वस्तुकी क़ीमत बढ़नाही चाहिए।

इस ऊपरके विवेचनसे यह सिद्ध हुआ कि क़ीमत दूनी हो जानेपरभी सिक्केको छोड़कर और किसी वस्तुका मूल्य न बढ़ा। कल्पना करो कि पहले एक वार कपड़ेकी ऐवज़में चार सेर गेहूं आते थे और उसवक्त एक वार कपड़ेकी कीमत ।) चार आने थी और एक सेर गेहूं -) एक आनेमें मिलते थे। अब सब चीज़ोंकी क़ीमत दूनी होगई। कपड़ा ।) चार आने वारकी जगह ॥) वार मिलने लगा और गेहूं आने सेरकी जगह दो आने सेर-अर्थात् क़ीमत दूनी होगई, परन्तु मूल्य नहीं बढ़ा, क्योंकि एक वार कपड़ेका मोल अबभी चारही सेर गेहूं हैं। वस्तुओंके यद्यपि दाम दूने होगये तथापि मोलमें कुछ फेरफार नहीं हुआ। इससे सिद्ध होगया कि क़ीमतके घटने या बढ़नेसे सिक्केको छोड़-कर और किसी वस्तुके मोलमें घट बढ़ नहीं हो सकती। क़ीमत बढ़नेका अर्थ यह हुआ कि अब वस्तुके ऐवजमें ज़्यादा दाम देने पड़ते हैं अर्थात् दामका मोल घट गया। एवं क़ीमत घट जानेका अर्थ यह है कि अब चीजें सस्ती होगई और सिक्केका मोल बढ़गया। इस विषयमें सिक्केके स्वरूप और उसके व्यापा-रके विषयमें विशेष समझानेकी ज़ुरूरत है। सो हम आगले प्रकरणमें समझावेंगे।

प्रश्न

(१) मोल किसे कहते हैं ?

(२) एकसाथ सब वस्तुओंके मोलमें घटती या बढ़ती हो सकती है ?

(३) चीज़ोंकी अदलाबदली क्या होती है ?

(४) अदलाबदलीकी आवश्यकता किन साधनोंसे दूर की गई ?

(५) दाम या क़ीमत किसे कहते हैं ?

(६) क़ीमतमें एकसाथ कमती या बढ़ती हो सकती है या नहीं ?

(७) क़ीमतकी कमी या ज्यादतीसे वस्तुओंके मूल्यपर कुछ प्रभाव पड़ेगा ?

विशेष प्रश्न

(१) गेहूं की पैदावार अच्छी न होनेसे उसका मूल्य बढ़-गया। यह बढ़ती भीतरी कारणसे हुई या बाहरी कारणसे ?

(२) सारी चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ जानेसे देश सम्पत्तिशाली होगया क्या ?

दूसरा प्रकरण

सिक्का

सिक्केका व्यापारः—गये प्रकरणमें हम लिख गये हैं कि सुधरे हुए देशोंमें अदलाबदलीकी जंगली रीतको सिक्का चला-कर दूरकर दिया गया है। अर्थात् सब चीज़ोंके मोलका नाप

करनेके लिये और अदलाबदली करनेके लिये एक वस्तुको मुक़र्रर करलिया है। इस तरह मोलका नाप करनेके लिये यदि किसी एक चीज़को न मुक़र्रर की जाय और किसी मनुष्यकी सम्पत्ति कितनी है यह बतानाहो तो उसके घरके कपड़े-लत्ते, बर्तन-भांडे, ज़ेवरज़वाहिरात, गाय-भैंस वग़ैरा गिनाने पड़ें। और इस तरह एक एक चीज़के गिनानेमें दिनके-दिन बीत जांय, और इतना करनेपरभी उस मनुष्यकी सारी सम्पत्तिका ठीकठीक अन्दाज़ न हो। ये अड़चनें सिक्केके चलानेसे दूर हो गई। अब मनुष्योंकी या प्रजाओंकी सम्पत्ति रुपये पैसेसे गिन ली जाती है और कहा जाता है कि उसके पास इतने हज़ारकी, इतने लाखकी या इतने करोड़की सम्पत्ति है।

अदलाबदलीकी रीतिका वर्णन करते समय, विनिमयके काममें सिक्केसे जो सुगमता हो जाती है उसका बयान हम करचुके हैं। और यहभी बतलाचुके हैं कि अदलाबदलीकी रीतिको छोड़कर, जबतक किसी जगह कोई सुगम रीति नहीं चलाई जाती, तबतक व्यापारकी उन्नति नहीं हो सकती। जैसे कील ठोकनेका अमोघशस्त्र हथोड़ी है वैसेही विनिमय करनेका अमोघशस्त्र रुपयापैसा-सिक्का है। सिक्केको विनिमयके साधनके तोरपर काममें लाये बिना चीजोंका विनिमय नहीं हो सकता सो नहीं है। हो सकता है, परन्तु उसमें बड़ीही अड़चने हैं—बड़ी ही गड़बड़ होती है। ऐसे काम करनेवालेकी उपमा उस खातीसे दीजासकती है जो बिना औज़ारके काम करनेका यत्न करता हो।

यह बात तो स्पष्ट ही है कि सिक्केके तोर पर पसंद की हुई चीज़ ऐसी होना चाहिए कि जिसे बड़ी आसानीके साथ

लेकर इधर उधर फिरा जासके। लोह लकड़ जैसी चीज़का (जिसका कि मोल थोड़ी मिक़दारमें ज्यादा नहीं होता) सिक्का कायम किया जाय तो थोड़ीसी चीज़ बज़ारसे लानेके लियेभी बाज़ारमें गाड़ी भरके सिक्के ले जाने होंगे। अतएव सिक्केके लिये जो धातुए पसन्दकी जाय उनमें ख़ास २ गुण होने चाहिए जिनसे ऐसी दिक्कतें पेश न आवें। सुधरे हुए देशोंमें चांदी सोना पसन्द किया गया है। और इन धातुओंमें बहुत करके वे गुण हैं भी जो विनिमयके साधनके तोरपर ठहराये हुए सिक्केमें होने चाहिए।

अलग अलग देशोंमें सिक्केके तोरपर अलग २ चीजें काममें लाई गई हैं:—यद्यपि अब यह निश्चय होगया है कि सिक्केके तोरपर काममें लानेके लिये सबसे अच्छी चीज़ सोना और चांदी है तथापि पहले बहुतसे देशोंमें इस कामके लिये जुदी जुदी चीजें काममें लाई गई हैं। चीनमें पहले इस कामके लिये चाहकी डिब्बियां चलती थीं। आफ्रिकामें कितनीही जगह एक तरहकी सींप काममें लाई जाती थीं। ग्रीस देशके मनुष्य, अरब और पुराने समयके बहुतसे मनुष्य जानवरोंको काममें लातेथे। और कई जगह तो यह काम नमक और चमड़ेसेभी कियागया है। परन्तु आख़िरकार अनुभवसे यह सिद्ध हुआकि सिक्केका काम चांदी सोनेसे ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकेगा। क्योंकि सिक्केके लिये जो चीज़ पसन्द की जाती है उससे दो काम किये जाते हैं। (१) मोलका मामूली तोरपर माप और (२) विनिमयका साधन। सिक्केके तोरपर जो चीज़ पसन्द की जाय उसमें सात गुण होने चाहिए और वे ये हैं:—

(१) क़ुदरती मोल
(२) आसानीसे इधरसे उधर ले जाया जासकना
(३) अक्षयता-यानी घटी न होना
(४) समता—सब जगह एकसापन रहना
(५) विच्छेद्यता क़ीमत घटे बिना टुकडे होना
(६) मोलकी स्थिरता
(७) जल्दी पहचानने योग्य होना

(१) **क़ुदरती मोलः**—इस पहले गुणकी आवश्यकता तुरंत जान पड़ेगी। सिक्केके तोरपर पसन्द की गई वस्तु इसी लिये मोलवाली नहीं है कि वह विनिमयके साधन और वस्तुओंके मोलका माप करनेके लिये पसन्द की गई है। सिक्केके तोरपर पसन्दकी हुई वस्तु यदि स्वयं कुछ मोलवाली न होगी तो मालके बदलेमें उसे लेना सब जगह पसन्द नहीं किया जायगा। इस जगह पर कोई प्रश्न करेगा कि रुपयेके ऐवज़में नोटभी तो चलते हैं। नोटोंमें कुदरती क़ीमत कुछ नहीं है फिर दुनिया उसे क्यों लेती है इत्यादि। तो हमारा कहना यह है कि हुंडीके तोरपर नोट रुपयोंकी संज्ञा हैं क्योंकि मांगनेपर फौरन रुपया दिये जानेकी उसमें प्रतिज्ञा है। दुनियाको इसबातका विश्वास है कि वह वचन पूरा किया जायगा इसी लिये वह नोट लेलेती है। परन्तु सोना चांदी क़ीमती होते हैं। वे बहुत प्राचीन समयमेंभी जंगली देशोंमेंभी क़ीमती समझे जातेथे। वे अपनी चमक दमक स्थिर रहने और घड़ाईसे बढ़नेके गुणोंके कारण सदा और सब जगह आभूषण—शृंगारके काममें आये हैं और मूल्यवान् गिने गये हैं। अतएव जो यह कहा जाता है

कि सिक्केके तोरपर जो चीज़ काममें लाई जाय उसमें पहला गुण क़ुदरती मोलका होना है सो चांदी सोनेमें अच्छी तरह है।

(२) आसानीसे इधर-से-उधर ले जाया जा सकनाः— या यों कहिए कि चीज़के क़दमें छोटापन होकर मोलमें ज्यादती होना। यह दुसरा गुण है। चांदी सोना सहजमें नहीं मिलता। उसके पानेके लिये बहुत परिश्रम करना होता है। अतएव वह थोड़ा-ही निकलता है। उसे लेनेकी चाह सबठौर होती है और इससे उसका मोल वढ़ जाता है। अब कोई कहेगा कि थोड़े क़दमें ज्यादा मोल चांदीसोनेसेभी—हीरे और जवाहिरातमें हैं फिर उन्हेंही सिक्केके तोरपर काममें क्यों नहीं लाया जाता, तो हमारा कहना यह है कि हीरे जैसी चीज़को सिक्केके तोरपर काममें लानेसे बड़ी अड़चन पैदा हो जाना सहज है। एक चनेकी दालके बराबरका हीरा ५००) रुपयेका होता है। सिक्केकी ऐसी छोटी रक़मको संभालकर रखनेमें बड़ी दिक़्कत है और खोजानेका डर बनाही रहता है। अतएव हीरेको सोने चांदीकी जगह सिक्केके तोरपर काममें नहीं लाया जासकता। इस कहनेसे मालूम होगा कि सिक्केके तोरपर काममें आनेवाली चीज़ क़दमें छोटी और बहुत मोलवाली होनी चाहिए परन्तु उसके क़द और मोलमें एक हद्से ज्यादा फ़रक न होना चाहिए। चौअन्नीकी ऐवज़में उतनीही क़ीमतके सोनेका सिक्का बनावें तो कितनी अड़चन खड़ी हो और पाईकी क़ीमतके चांदीके सिक्केसे कितनी दिक़्क़त पैदा हो जाय इसी तरह जहां बड़ी रक़मोंकी जुरूरत है वहांपर छोटे सिक्के ले जानेसे अड़चनें खड़ी होती हैं। भारतमें इस वक्त सोनेका सिक्का जारी नहीं है यदि वह जारी हो तो बहुत सुभीता हो

उसका उपयोग सिक्केके तोरपर नहीं हो सकता। हीरेकी चमक दमक और रंगपर उसके मोलका आधार है और इस बातमें एक दूसरे हीरेमें इतना भेद होता है कि एकसा वज़नके, एकसा क़दके और एकसा तराशे हुए हीरे लाये जांय तोभी उनका मोल एकसा नहीं हो सकता।

(५) विच्छेद्यता (क़ीमत घटे बिना टुकड़े होना):— एक तोलेभर सोनेके हम दो टुकड़े करें, या चार, या जितने चाहें, परन्तु इससे सोनेकी क़ीमत कम न होगी। सब टुकड़ोंके दाम उतनेही हो जांयगे जितने एक तोलेभर सोनेके थे। परन्तु और बहुतसी चीज़ें ऐसी हैं कि जिनके टुकड़े होनेसे दाम घट जाते हैं। हीरेहीको लीजिए। बिनातराशे हुए हीरेका मोल वह कितने रत्ती है इससे किया जाता है—अर्थात् वह जितने रत्ती हो उसकी संख्याका वर्ग करते हैं और फिर वर्ग फलको एक रत्ती हीरेके मोलकी संख्यासे गुणा कर देते हैं। कल्पना करोकि १ रत्ती हीरेके दाम २०) बीस रुपया होतो ६ रत्ती हीरेका मोल ६×६=३६×२०=७२० हुआ अर्थात् ६ रत्ती हीरेके दाम ७२० रुपये हुए और बारह रत्ती—अर्थात् एक तोलेके दाम १२×१२=१४४×२०=२८८० हुए। अब हम इस एक तोले हीरेके दो टुकड़ें करदें तो उन दोनों टुकड़ोंका मोल आधा कम हो जायगा—अर्थात् १४४० ही रह जायगा। अतएव ऐसी वस्तु सिक्का होने योग्य नहीं है।

(६) मोलकी स्थिरता:—यह गुण सिक्केके पहले काम (वस्तुओंके मूल्यके माप) में बड़ा ही आवश्यक है। कुछभी फ़रक न हो ऐसा तो मोलका माप मिलना असम्भव है। जितनी

चीजें हमारे देखनेमें आती हैं उनमेंसे एकभी ऐसी नहीं है कि जिसके मोलमें बिल्कुल फेर फार न होता हो। अतएव ज्यादासे ज्यादा हो तो इतना हो सकता है कि जो चीज़ सिक्केके लिये पसन्द कीजाय वह ऐसी पसन्द कीजाय कि जिसमें बहुतही कम फेरफार हो और वहभी बहुतही धीरे धीरे। जो सिक्केकी चीज़के मोलमें जल्दी २ फेरफार हो तो सिक्के सम्बन्धी क़रारकी शर्तोंमें बड़ी गड़बड़ी मचेगी। कल्पना करो कि वस्तुओंके मोलके मापके तोरपर (सिक्केके तोरपर) गेहूं मान लिये गये और कल्पना करो कि "अ"ने "क" से १००० मन गेहूं उधार लिये और छह महीने—बाद लौटा देनेका वादा किया। कल्पना करो कि मुद्दत पूरी होते वक्त, पैदा वार कम होनेसे, गेहूंका मोल सवाया होगया ऐसी सूरतमें "अ" "क" को सवाया मोल देनेको लाचार होगा क्योंकि छह महीने पहले १००० मन गेहूंके ऐवज़में जितना माल मिलताथा अब उससे सवाया मिलता है। इससे सिक्केके लिये पसन्दकीहुई चीज़में एकदम फेरफार हो जाता हो तो व्यापारके सारे काम जुआ खेलनेके मुआफ़िक़ हो जांयगे क्योंकि यह तो कोई खातरीसे बताही नहीं सकता कि थोड़े दिनोंबाद सिक्केका मोल क्या हो जायगा।

और २ चीज़ोंमें सिक्केके और २ गुण होने परभी मूल्यमें बहुतही फेरफार होता है, सोने चांदीमें वैसा फेरफार नहीं होता।

और अनुभवसे ऐसा जान पड़ा है कि सोनेकी अपेक्षा चांदीमें विशेष फेरफार होता है। पहले सोनेका मोल चांदीसे पन्दरह सोलह गुणा ज्यादा था। वह मोल अब २४—२५ गुना बढ़ गया। ऐसा होनेका कारण यह है कि चांदी ज्यादा

पैदा होने लग गई और उसकी खपती घटती जाती है। यूरोपके बहुतसे देशोंने चांदीका रिवाज़ बन्द कर दिया और उसकी जगह सोनेके सिक्के चला दिये।

इस तरह चांदीका मोल घट जानेसे हिन्दुस्थान पर आ-बनी। हिन्दुस्थान; कर्जका ब्याज और पेंशन वग़ैरा खर्चके ऐवज़में इग्लेंडको हरसाल (१,७०,००,०००) एक करोड़ सत्तर लाख पौंड भेजताथा। इस रक़मके देनेका क़रार सोनेके सिक्केमें है। उस वक्त एक पौंडकी क़ीमत १०) दस रुपयेथी परन्तु चांदीका भाव घट जानेसे १ पौंडकी क़ीमत १४) चौदह रुपयेके क़रीव होगई। अतएव हिन्दुस्थानको १७०००००० सत्तर करोड़ रुपयेकी जगह २३८०००००० तेईस करोड़ अस्सी लाख रुपया देनेकी नोबत आई। इतनेहीसे पूरा न पड़ा चांदीका भाव मन्द पड़ताही गया। अर्थशास्त्रियोंको चिन्ता पड़ गई। उन्होंने गवर्नमेंटको भांतिभांतिकी योजनाएं बतलाईं। किसीने कहा भारतमें सोनेका सिक्का जारी कर दिया जाय और चांदीका सिक्का बंद कर दिया जाय। परन्तु यह योजना भारतके लिये ठीक नहीं हो सकतीथी क्योंकि भारत एक ग़रीब देश है। यहांके कितने ही मनुष्य पैसेटकेसेही काम चलाते हैं। दूसरे भारत जैसे विशाल देशमें चांदीका सिक्का बन्द कर सोनेका सिक्का चलानेमें बहुत समय चाहिए। हरसाल चांदी बेचकर सोना ख़रीदना पड़े। इससे चांदी औरभी सस्ती होती जाय और सोना मंहगा। परिणाम यह हो कि बेहद घाटा पड़जाय।

कितनेही मनुष्योंने कहा कि सोने और चांदीके मोलमें एक परिमाण ठहरा लिया जाय। जैसे दस रुपयेका एक पौंड और

सोनेका सिक्काभी जारी कर दिया जाय। परन्तु ऐसा करनेमेंभी अडचनें हैं।

कितनेही लोगोंने रायदी कि सोना और चांदी दोनोंके सिक्के चलाये जांय, जिससे, दुनिया, लेन देन उसे जैसा उचित जंचे उस सिक्केसे करसके। परन्तु इस तरह दोतरहके सिक्के जारी करनेसे सिक्केके लेनदेनके व्यापारमें गड़बड़ी मच जाती है। कल्पना करो कि "अ" ने "ब" से २५ पाउंड रुपया उधार लिया और एक वर्षके बाद लौटानेका वादा किया। अब जो इस अरसेमें चांदीका भाव सस्ता हो गया तो वह २५ पाउंड न देकर रुपये देगा और सोनेका भाव घट गया होगा तो पाउंड दे देगा। ऐसा होनेसे एक धातुके चलन होनेसे जो गड़बड़ी होती है उससेभी ज्यादा गड़बड़ी होती है।

† बाय-मेटे-लिज्मः—इस पंथके अनुयायियोंका कहना है कि कुछ देशोंको मिल कर सोने और चांदीके मोलके भेदका परिमाण मुक़र्रर कर देना चाहिए और क़ानून बना देना चाहिए। जब इन दो धातुओंके मोलका वास्तवमें उतना भेद नहीं हो जितना कि ठहराया गया है तब सस्ते धातुसे लेनदेन करना सब मनुष्योंको लाभदायक होगा और इस तरह उस सस्ती धातुकी खपती ज्यादा होने और मंहगी धातुकी खपती कम होनेसे दोनों धातुओंके मोलका अन्तर उतनाही आ ठहरेगा जितना कि क़ानूनसे ठहराया गया था। यह योजना बाय-मेटे-लिज्मकी योजना कही जाती है, परन्तु इसमें भूल भरी हुई है।

---

† इस योजनाके बारेमें बड़ी हलचल मचीथी। सिमलेमें इसकी एक सभा हुईथी और उसके मेम्बर मोल्सवर्थ बार्बर आदि बड़े बड़े सज्जन हुए थे।

क्योंकि जिस किसी चीज़की पैदाइश ज्यादा होती है उसके मूल्यका निर्णय उत्पादक व्यय पर आधार रखता है और किसी बातपर नहीं। कल्पना करो कि क़ानून बनाकर सोनेका मोल चांदीसे १६ गुना ज्यादा ठहराया, अब यदि नई खानोंमें खूब चांदी निकल आवे तो एक तोला सोना निकालनेमें जितना उत्पादक व्यय होगा उसकी अपेक्षा बहुत कम व्ययमें वह १६ तोला निकल आयगी। ऐसी सूरतमें कितनेही क़ायदे-क़ानून बनें, १६ तोले चांदीके ऐवज़में दुनिया १ तोला सोना कभी न देगी। अब-अब, गवर्नमेंटने पौंडके दाम १५) रुपये निश्चय कर दिये हैं। इससे भविष्यतमें जो चांदीकी कमीसे हिन्दुस्थानको हानि होती वह रुक गई। और दो सिक्कों-वाली गड़बड़ इस कारण नहीं हो सकी कि गवर्नमेंट चांदीके ऐवज़में किसी (सेठ साहूकार)को रुपया बनाही नहीं देती। इस समय यहांपर सोनेकी साबरन, चांदीका रुपया-अठन्नी, निकलकी एकन्नी, और तांबेके पैसे-पाई चलती हैं, परन्तु गवर्नमेंट किसीको सिक्के नहीं बना देती, इससे वैसी गड़बड़ नहीं होती और जुदे २ सिक्के होनेसे प्रत्येक वर्गके आदमियोंको सुभीता रहता है। परन्तु यह अर्थशास्त्रका अपवाद है नियम नहीं—खास सूरत है, आम बात नहीं।

(७) जल्दी पहचानने योग्य होनाः—सिक्का ठीक है या नहीं यह तुरंत पहचाना जाना चाहिए। सोने चांदीको खड़-खड़ानेसे जो आवाज़ होती है उससे तुरंत जाना जा सकता है कि माल अच्छा है या बुरा। और एक बात है कि सच्चे सिक्केमें किसी तरहकी बू या स्वाद नहीं होना चाहिए

जिससे परखनेमें आसानी हो। और सिक्केके लिये जो चीज़ पसंद की जाय वह ऐसीभी होनी चाहिए, जिसमें मनमानी छाप उठाई जासके। इस छापका काम राज्यको करना चाहिए। क्योंकि ऐसा करनेसे सिक्केके ठीक २ वज़नदार होनेकी और स्वच्छ होनेकी ज़िम्मेवरी राजकी नेकनीयती पर होती है और काम भरोसेका होता है।

थोड़ासा विचार करनेपर साफ़ २ समझमें आजायगा कि ऊपर बताये हुए सात गुणोंमेंसे कई एक गुणोंका एक दूसरेपर आधार है। जैसे सोनेके गुण नं. २ और ३ के आधारपर नं. ६ स्थित है। जिस चीज़का क़द उसके मोलके परिमाणमें बहुत ज्यादा होता है उसकी क़ीमत अलग अलग जगहोंपर अलग अलग हो जाती है। जैसे:—किसी गांवमें लकड़ी सस्ती मिलती है और उसे शहरमें जाकर बेचें तो मंहगी बिकती है, क्यों ? इस लिये कि उसे शहरतक ले जानेमें ख़र्च पड़ता है। अब सोचो कि एक चीज़ यहां ज्यादा पैदा होती है और इसे अमुक जगह भेजना है। इस भेजनेमें कुछ ख़र्चभी यों हीसा होता है। ऐसी सूरतमें मामूली तोरपर उसका भाव समान ही रहेगा। ऐसी चीज़ोंकी क़ीमतमें बारबार कमी-बेशी हुआ करती है कि जो जल्दीही ख़राब हो जाती हैं या जिस सालकी उपज उसी सालमें बीत जाती है। ताजी शाकभाजी अमुक समयमें बिकही जानी चाहिए क्योंकि वैसा न हो तो वह बिगड़ जायगी। अतएव देखा जाता है कि बहुत जल्दी उसके भावमें फ़रक पड़जाता है। अनाज, भाजीकी तरह जल्दी नहीं ख़राब होता वह वर्ष-दो-वर्ष रह सकता है। अब सोचो कि

किसीने अनाज इकट्ठा कर रक्खा है और सब जगह जितना अनाज पैदा होना चाहिए उतना नहीं हुआ। फल यह होगा कि अनाजका भाव उतनाही बढ़ जायगा। और अनाज पैदा हो गया और बहुत ज्यादा पैदा हो गया तो उतनाही सस्ता हो जायगा। परन्तु ऐसे ऐसे कारणोंसे सोनेके ऊपर कोई असर नहीं हो सकता। क्योंकि सोनेका जितना संग्रह है उस संग्रह पर, सोनेकी खाने निकलने पर कुछ वैसा प्रभाव नहीं पड़ेगा और न सोनेका अनाजकी भांति क्षय होना सम्भव है। क्योंकि अनाज जैसे हरसाल उठ जाता है वैसे सोना नहीं उठ जाता।

सिक्काही सम्पत्ति नहीं है:—रुपये पैसेको सम्पत्तिकी जड़ माननेमें दुनिया बड़ी भूल करती है। प्रत्येक मनुष्य यों समझता है कि जितना ज्यादा रुपया-पैसा मेरे पास होगा उतनाही मैं ज्यादा सम्पत्तिशाली हूंगा। इस समझके मुआफ़िक़ माना जाता है कि जिस देशमें जितना ज्यादा रुपया-पैसा चलता-फिरता हो वह देश उतनाही सम्पत्तिशाली है, परन्तु, ऐसा माननेमें भूल है। सो इस बातसे समझमें आजायगी:—दस आदमियोंने खेल शुरू किया। इस खेलमें उन्होंने १ हज़ार रुपये रक्खे थे। उन्होंने विचार किया कि बारबार रुपयों जैसी ज्यादा रक़मके देनेलेनेमें खेल अच्छी तरह नहीं चलता। अतएव सो छोटे २ कंकर इकट्ठे करलें और दस दस रुपयेका एक एक कंकर समझा जाय। ऐसा ठहरा कर खेलना शुरू किया। खेल पूरा होनेपर जिसके पास जितने कंकर थे उसने उतनी ही दाही रुपयोंकी लेली—अर्थात् हरेक कंकरके दस दस रुपये लेलिये। अब उनमेंसे एकने कहा कि "खेल पूरा

होनेपर ज्यों-ज्यों मेरे पास कंकर बढ़ते हैं त्यों-ही-त्यों मुझे रुपया ज्यादा मिलता है, मैं चाहता हूं कि जैसे मुझे ज्यादा मिलता है वैसेही तुम्हें ज्यादा मिलना चाहिए। इस लिये चलो हम लोग दूने कंकर लाकर खेलें । इससे अपने पास ज्यादा कंकर रहेंगे और रुपया ज्यादा मिलेगा" । सबने उसका कहा माना और वैसाही किया । खेल पूरा होनेपर सबकेपास कंकरके टुकड़े पहलेसे ज्यादा रहे परन्तु कुछ रुपया ज्यादा नहीं मिला। क्योंकि खेलके लिये जो १००० की रक़म निकालीथी उसमें तो ज्यादती की ही नहीं गईथी । इसका परिणाम यह हुआ कि कंकरकी क़ीमत कम हो गई, क्योंकि पहले हज़ारके सौ कंकर थे अब हज़ारके दो सौ होगये—अर्थात् पहले एक कंकर दस रुपयेका था अब पांचकाही रह गया ।

अब हम सोचें कि वे कंकर कुछ रुपये न थे परन्तु रुपयेकी ऐवज़में दस आदमियों द्वारा मानी हुई वस्तु थी । यही हाल सिक्केका है । सिक्का स्वयं सम्पत्ति नहीं है परन्तु सम्पत्तिकी एक मानी हुई संज्ञा है । इससे, जैसे ऊपरके दृष्टान्तमें बताया है कि कंकरके बढ़नेसे जैसे रुपये नहीं बढ़े, वैसेही रुपये पैसेके बढ़नेसे सम्पत्ति नहीं बढ़ती, और सम्पत्तिके बढ़े बिना यह नहीं कहा ज़ासकता कि देश सम्पत्तिशाली होगया चाहे, फिर उसमें कितनाही रुपया पैसा क्यों न बढ़े ।

प्रश्न

(१) सिक्केसे क्या क्या काम होते हैं ?

(२) मोलका माप किसे कहते हैं? उदाहरण देकर समझाओ।

(३) अदलाबदलीका साधन क्या होता है? उदाहरण देकर समझाओ।

(४) सिक्केके तोरपर पसन्द की हुई चीज़ क्या केवल सोना चांदीही होता है ?

(५) कौनसी २ चीजें कहां २ और कब २ सिक्केके तोरपर काममें लाई गई ?

(६) सिक्केके तोरपर पसन्द की हुई चीज़में क्या क्या गुण होने चाहिए ?

(७) और उन गुणोंमेसे प्रत्येककी आवश्यकताको उदाहरण देकर बतलाओ ?

(८) वे गुण ज्यादा परिमाणमें किन २ चीजोंमें हैं ?

(९) गेहूं या ऐसीही कोई और वस्तु सिक्केके तोरपर काममें लाई जाय तो क्या दिक़्कत हो ?

(१०) मोलके दो माप कहनेका क्या मतलब है और उससे क्या हानि होती है ?

(११) बाय-मेटे-लिज़्म किसे कहते हैं और उसमें क्या भूल है ?

(१२) हिन्दुस्थानमें अब कितने प्रकारके सिक्के हैं और वे अर्थशास्त्रके मूल सिद्धान्तके अनुकूल हैं या क्या और उनसे भारतको क्या हानि लाभ हुए ?

(१३) सिक्केका सच्चा स्वरूप बतानेको क्या उदाहरण दिया गया है ? कहो।

विशेष प्रश्न

(१) एक आदमीने सोनेकी खानका पता लगाया। बतलाओ कि क्या उसने देशकी सम्पत्ति बढ़ाई ?

(२) कल्पना करो कि प्रत्येक मनुष्यके पास पहलेसे दूने रुपये हो गये। इससे देशकी सारी सम्पत्तिपर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

(३) कल्पना करो कि दुनियासे; सोना, चांदी, तांबा, उठ गया। ऐसा होनेसे क्या लेन देनका काम बंद हो जायगा ?

तीसरा प्रकरण

वस्तुओंका मूल्य

वस्तुओंके मोलके बारेमें विचार करते वक्त वस्तुओंको तीन वर्गोंमें बांटा जा सकता है—वस्तुऐं तीन श्रेणियोंमें विभक्त की जा सकती हैं:—

(१) जिनका मुंह-मांगा मोल उत्पन्न हो सकता है और संग्रह नहीं बढ़ाया सकता, जैसे:—किसी स्वर्गीय चितेरेकी बनाई हुई तसवीरें।

(२) जिनकी पैदा बढ़नेके साथ ही साथ उत्पादक खर्चभी बढ़ता जाय, जैसे: खेती बाड़ी, खनिज वस्तु, आदि।

(३) उत्पादक खर्च बढ़ाये बिनाही जिनकी पैदा बढ़ाई जासकती है जैसे:—सिद्ध—पदार्थ।

उत्पादक खर्च:—वस्तुओंकी तीन श्रेणियोंका वर्णन करते हुए हमने " उत्पादक खर्च " शब्दका व्यवहार किया है।

मिलके कहनेके मुआफ़िक उत्पादक-ख़र्चमें तनख़्वा और नफ़ेका समावेश होता है। परन्तु प्रोफेसर केयर्नसने उसकी व्याख्या कुछ और ही की है। वह कहता है कि उत्पादक-ख़र्चको बारीकीसे देखें तो उसमें तीन बातें मिली हुई हैं। परिश्रम, अनुपभोग और ज़िम्मेवरी। परिश्रम कारीगरोंको करना पड़ता है, पूंजीवालेका अनुपभोग है और ज़िम्मेवरी दोनोंकी जुदी जुदी तरहकी है। काम करनेवालोंको उनके परिश्रम और ज़िम्मेवरीका बदला मिलता है, उसे तनख़्वा कहते हैं, और, पूंजीवालेको जो अनुपभोग और ज़िम्मेवरीका बदला मिलता है उसे नफ़ा कहते हैं। जिस समय काम करनेवालों और पूंजीवालोंमें इस तरहकी स्पर्धा चल रही हो कि जितनी परिश्रम, अनुपभोग और ज़िम्मेवरीमें ज़्यादती होगी, उतनेही ज़्यादा, तनख़्वा और नफ़ा मिलेंगे, उस समय कहा जासकता है कि उत्पादन ख़र्चका आधार तनख़्वा और नफ़ेपर है। और जिस समय ऐसी स्थिति हो उस समय, उत्पादक ख़र्चका आधार तनख़्वा और नफ़ेपर है ऐसा कहनेमें और ऐसा कहनेमें कि उत्पादक ख़र्चका आधार परिश्रम, अनुपभोग और ज़िम्मेवरीपर है कुछ भेद नहीं होता।

ऊपर बताई हुई तीनों प्रकारकी चीज़ोंका मोल किन २ बातोंसे नियमित होता है इसका विवेचन करनेके पहले खपती और संग्रहका मोलके साथ क्या संबन्ध है यह समझाना ज़ुरूरी है। यहांपर हम मोल शब्दकी जगह क़ीमत शब्दको काममें लावेगें। ऐसा करनेसे विषयके समझनेमें आसानी हो जायगी। ऐसा करनेमें हम कोई भूल कर रहे हों सो नहीं है क्योंकि हम पहले बतला चुके हैं कि क़ीमत मोलका एक माप है। अतएव

खपती और संग्रहका विवेचन करनेसे पहले हम इस बातको मानलेते हैं कि किसी चीज़की क़ीमतमें कुछ घट-बढ़ हुई तो वह उस चीज़के मोलमें घट-बढ़ होनेकी वजहसे हुई, सिक्केके मोलमें घटबढ़ होनेसे नहीं। कल्पना करोकि गेहूंकी क़ीमत बढ़ गई। इसके दो कारण हो सकते हैं (१) गेहूंके मोलका बढ़ जाना (२) सिक्केका मोल घट जाना, परन्तु विषयकी सुगमताके लिये हम यह माने लेते हैं कि यह काम गेहूंका मोल बढ़नेसेही हुआ।

खपती और संग्रहका क़ीमत पर प्रभावः—प्रायः कहा जाता है कि वस्तुओंकी क़ीमतका आधार उनकी खपती और संग्रह पर है। परन्तु ऐसा कहनेवाले अपने कहे हुएका मतलब आपही नहीं समझते। खपती और संग्रहका क़ीमतके साथ जो सम्बन्ध है वह नीचे लिखे मुआफ़िक है। चीज़ोंकी क़ीमत प्रायः ऐसी होती है कि उनकी खपती और संग्रह सम हो जाते हैं। क्योंकि किसी चीज़की क़ीमत क़म होती जायगी तो उसकी खपती बढ़ती जायगी और किसीकी क़ीमत बढ़ती जायगी तो ख़पती कम होती जायगी। कल्पना करो कि एक मकान नीलाम किया जारहा है और दस उसके लेनेवाले हैं। अब ये दसों उस मकानको लेनेके लिये स्पर्धा करेंगे। एक दूसरेसे ज्यादा दाम लगावेगा। अन्तमें जिसके दाम ज्यादा होंगे उसीको मकान मिल जायगा क्योंकि और लोग अपनी मांग बन्द करदेंगे। इससे साफ़ तौरपर समझमें आता है कि वस्तुओंके बेचनेवालों और ख़रीदने वालोंमें अनियंत्रित-सीमारहित स्पर्धा चलती है तब बाज़ार भाव ऐसा हो जाता है कि चीज़ोंकी खपती और संग्रह समान हो जाते हैं। अच्छा ऊपरके मकानवाले दृष्टान्तको ही देखिए। पहले

उस मकानको ख़रीदनेके लिये दस मनुष्य तैयार हुए थे परन्तु अख़ीरमें उसकी क़ीमत इतनी होगई कि नो आदमियोंने अपनी मांग छोड़दी और एकही आदमीकी मांग बाक़ी रह गई—अर्थात् इतनी क़ीमत मुक़र्रर होगई कि ख़रीदनेवालोंमें दसकी जगह एकही रहगया। घरभी एकही है और लेनेवालाभी एकही यों खपती और संग्रह समान होगये।

परन्तु ऊपरके दृष्टान्तमें ऐसा होना सम्भव है कि मकानोंकी खपती ज्यादा होनेसे दाम ज्यादा आनेलगें, इतने ज्यादा कि मकानके वनानेमें लगी हुई मिहनत और पूंजीका, कामोंमें लगती हुई मिहनत और पूंजीसे बहुत ज्यादा लाभ रहे। ऐसा होनेका परिणाम यह होगाकि ज्यादा फ़ायदा उठानेकी गरज़से बहुतसे आदमी इस कामको करने लगेंगे। जिसका लाज़मी नतीजा—अवश्यम्भावी फल—यह निकलेगा कि मकानोंका संग्रह बढ़ जायगा और क़ीमत कम हो जायगी, पहले जो लाभ होता था न होगा। और यदि और कामोंमें जितना लाभ इन्हें होता था उससेभी लाभमें कमी हो जायगी तो लोग इस कामको छोड़देंगे और अपनी मिहनत और पूंजी किसी दूसरे काममें लगावेंगे। इससे मकानोंका संग्रह कम होगा और उनकी क़ीमत बढ़ेगी यहांतक कि मकान बननेमें जो पूंजी, परिश्रम और ज़िम्मेवरी लगाई गई है उसका बदला निकल आवे।

उत्पादक ख़र्चसे निश्चित की गई असली क़ीमतमें जो फेरफार होता है वह असली फेरफार नहीं—वह तो बाज़ारू तेज़ी-मन्दीसे ताल्लुक रखता है। इस फेरफारकी उपमा अर्थशास्त्री मिल समुद्रके ज्वारभाटेसे देता है। वह कहता है कि समुद्रका

जल यद्यपि ऊपर नीचे उछलता गिरता देख पड़ता है परन्तु एक बूंद पानीभी सदाके लिये समुद्रके समतलसे ऊपर नीचेको नहीं हो जाता। सदा समुद्रके समतलमें समानता होनेकीही तरकीब होती है। इसी तरह किसी वस्तुका बाज़ारभाव घट जाता है या बढ़ जाता है परन्तु यह घटबढ़ बनी ही नहीं रहती। उसकी गति उत्पादक ख़र्चसे ठहराई हुई असली क़ीमतकी ओरही होती रहती है।

प्रथम श्रेणीकी चीज़ोंकी क़ीमत कैसे निश्चित की जती है:—हम पहले कह गये हैं कि किसी चीज़की बिकरीमें बहुतही ज़्यादा फ़ायदा होता होगा तो दुनिया उस लाभको उठानेकी गरज़से उस चीज़का व्यापार करने लगेगी। इससे उस वस्तुका संग्रह बढ़ेगा। परिणाम यह होगा कि लाभ उतना न होगा-साधारण लाभ रह जायगा इत्यादि।

परन्तु कुछ चीज़ें ऐसी हैं कि जिनकी क़ीमत कितनीही ज़्यादा क्यों न मिल सकती हो उनका संग्रह बढ़ही नहीं सकता। जैसे:— किसी प्राचीन समयके चितेरेको बनाये हुए चित्र, प्राचीन लेख, सिक्के, दक्षिणाभिमुखी शंख वग़ैरा। ऐसी चीज़ोंका संग्रह नहीं बढ़ाया जासकता। मरे हुए चितेरेके बनाये हुए चित्र, अब कहांसे लाये जांय? सूरदास, तुलसीदास, भूषण, बिहारी आदि प्राचीन विद्वानोंके नये हस्ताक्षर कौन घड़देगा? ऐसी ऐसी चीज़ोंकी क़ीमत कुछ उनके उत्पादक ख़र्चपर आधार नहीं रखती—कुछ उत्पादक ख़र्चके लगभग नहीं होती, ऐसी चीज़के तैयार करनेमें कदाचित् पांचही रुपये उठे हों परन्तु उसकी इस वक्त मांग होने और नई बन न सकनेकी वजहसे मनमाने मोलपर बिक सकती हैं।

ऐसी सूरतमें प्रश्न हो सकता है कि जब ऐसा है तब ऐसी २ चीज़ोंकी क़ीमतका आधार किस बातपर है? तो हम कहेंगे कि ऐसी क़ीमतका आधार—जैसा कि हम पहले बतलाचुके हैं—वस्तुकी खपती और संग्रहके समीकरणपर है। अब यदि कोई पूछेगा कि प्रसिद्ध स्वर्गीय चितेरेके हाथके बनाये हुए चित्रोंकी संख्या ज़्यादा नहीं होती, ऐसे चित्र तो—एक दोही हेरे—ढूंढेसे मिलते हैं और उनके लेनेकी इच्छा करनेवाले होते हैं हज़ारों। ऐसी सूरतमें संग्रह और खपतीका समीकरण हो कैसे सकता है? तो हमभी कहेंगे कि इस तरहका प्रश्न करनेके पहले संग्रह और खपतीका ठीक ठीक अर्थ जानना चाहिए। किसी चीज़के लेनेकी इच्छाका होनाही खपती नहीं है। इच्छा करनेवाले मनुष्योंमें उस वस्तुके दाम देनेकी शक्तिभी होनी चाहिए। कोरी इच्छासे कुछ नहीं होता, काम चलता है क़ीमत देनेकी ताक़त होनेसे। इस प्रकारकी इच्छा और शक्ति दोनों हो तब हम उसे वास्तवमें खपती कहेंगे। ऐसी खपतीकाही क़ीमतपर असर पड़ता है। खपती और क़ीमतका एक दूसरेपर आधार है क्योंकि क़ीमत बढ़ेगी तो खपती कम होही जायगी, और खपती बढ़ेगी तब, जब क़ीमत कम हो। अब हम पहले वर्गकी चीज़ोंका विचार करें। उनकी खपती तो बढ़ाई नहीं जासकती परन्तु खपती और संग्रह बराबर होनेही चाहिए। उसका एकही मार्ग है और वह यह है कि उस वस्तुकी क़ीमत इतनी ज़्यादा बढ़ाई जाय कि और २ मांगें बन्द हो जाय और उतनीही मांगे रह जांय जितना उसका संग्रह है। कल्पना करो कि किसीके पास पुराने ज़मानेके चितेरेका बनाया हुआ चित्र है, या गोस्वामीजीके हाथकी

लिखी हुई 'विनयपत्रिका' पुस्तक है और वह उसे बेचना चाहता है। यदि उसकी क़ीमत दस रुपये हों तो बहुत आदमी ख़रीदनेको तैयार होंगे। कल्पना करो कि उसकी क़ीमत ५००) रुपया रक्खी तो उतने आदमी ख़रीदनेको तैयार न होंगे। और कहीं २–४ हज़ार रुपया क़ीमत रखदी तो दो एक आदमी रह जाँयगे कि उसको ख़रीदनेको तैयार हों। आख़िर उस मनुष्यके साथ सौदा तै हो जायगा जो सबसे ज्यादा क़ीमत देनेको तैयार होगा। ऐसी सूरतमें संग्रह और खपती बराबरीपर आ ठहरेगी। अर्थात् "अ" ३९००) देना चाहता था और "क" ४०००) में चीज़ ख़रीद लेगा।

जिन जिन वस्तुओंमें अदलाबदलीका मोल होता है उनमें दो मुख्य गुण होते हैं:–(१) उपयोगी होना और (२) श्रमसे मिलना। स्वर्गीय चितेरेके चित्रके ऐसी चीज़ोंकी क़ीमत जिन कारणोंसे निश्चित की जाती है अभी उसका पूरा विवेचन नहीं हुआ। कोई पूछेगा कि उपरके उदाहरणमें "अ" ३९००) ही देनेका विचार करता है और "क" ४०००) देनेको तैयार है इसका क्या कारण है? इस सवालका जबाब देनेके लिये मोलके अंशोंका विशेष विवेचन करनेकी आवश्यकता है। किसीभी चीज़के विनिमय-मूल्यका–अदलाबदलीके मोलका आधार दो बातोंपर है (१) चीज़का स्वाभाविक उपयोगीपना और (२) उसके पानेमें होती हुई मिहनत।

उपयोगीपनेमें उन गुणोंका समावेश होता है जो किसी प्रकारकी कमीको दूर करते हैं या मनुष्यके शौक़को पूरा करते हैं। जिन चीज़ोंका विनिमय-मोल होता है उनमें यह उपयोगी-

पन होता है और वे परिश्रमसे प्राप्त होनेवालीभी होती हैं। ये दोनों गुण उन वस्तुओंमें होते हैं। किसी चीज़के पानेमें यदि कुछ परिश्रम नहीं पड़ता तो वह आवश्यक होनेपरभी और खूब-सूरत होनेपरभी—बिकेगी नहीं। हवा आवश्यक होनेपरभी नहीं बिकती क्योंकि वह बिना परिश्रम कियेही मिलजाती है। परन्तु यही हवा यदि पंखेवाले नोकर रखकर प्राप्तकी जाय तो उसका मूल्य पंखेवालोंके परिश्रमके कारण हो जायगा और इस हवाके लिये पंखेवालोंको तनख्वा देनी पड़ेगी, जैसा कि हम राजों महा-राजोंके यहां देखते हैं।

अगर हम किसी ख़ुशबूदार फूलोंके जंगलमें चले जांय तो वहांपर फूलोंका ढेरका-ढेर मिलेगा। उस जगहपर उन फूलोंका कुछ मोल नहीं है क्योंकि सहजमें मिलजाते हैं। परन्तु यदि उन्हीं फूलोंको कोई शख्स शहरमें ले आयगा तो उनकी क़ीमत हो जायगी क्योंकि उस शख्सका शहरतक फूल लानेमें परिश्रम हुआ है। और परिश्रम किये बिना शहरमें फूल किसीको मिलते नहीं हैं।

इसी तरह किसी वस्तुमें उपयोगीपनेका गुण न हो तो उसकी क़ीमत नहीं होसकती फिर उसके प्राप्त करनेमें कितनाही परि-श्रम क्यों न हुआ हो। कारण यह है कि यदि कोई चीज़ किसी मनुष्यकी किसी आवश्यकताको पूरा नहीं करती, या, उसके हृदयके शौक़को नहीं पूरा करती, तो वह उसे नहीं ख़रीदेगा। इसी तरह, उपयोगीपनकी समानता होनेपरभी एक वस्तुमें परिश्रमसे प्राप्त होनेका गुण अधिक हो—अर्थात् वह वस्तु ज्यादा परिश्रमसे मिलती हो तो उसके लिये कोई ज्यादा दाम न देगा।

कल्पना करोकि "अ" और "क" गांवमें कुम्हार बहुत अच्छी ईंटें बनाते हैं वे ईंटें खूब-सूरती मज़बूती आदिमें एकसी हैं और एक भावही बिकती हैं। ऐसी सूरतमें यदि कोई शख्स इस विचारसे कि यदि मैं "अ" गांवकी ईंट "क" में चल बेचूंगा तो "अ" गांवकी ईंटमें श्रमका गुण बढ़जायगा और टके ज्यादा मिलेंगे तो उसके ये मनके लड्डूही रहेंगे, उसे एक पाईभी ज्यादा न मिलेगी।

ऊपर बताये हुए दोनों गुण चीज़ोंकी क़ीमतपर अलग २ परिमाणमें असर करते हैं। प्रायः चीज़ोंके मोल निश्चय करनेमें उपयोगीपनके मुक़ाबलेमें मिहनतसे प्राप्त होनेके गुणका ज्यादा प्रभाव देख पड़ता है। उदाहरणमें हम अनाजको लें। अनाज ऐसी उपयोगी चीज़ है कि इसकी कितनी ही क़ीमत करदीजाय मनुष्य लेवेंहीगे—बहुतही कम ऐसे निकलेंगे कि जो न लें, परन्तु उसकी क़ीमतका आधार बहुत करके उसके पैदा करनेमें जो श्रम वग़ैरा लगते हैं उसीपर रहता है, उसकी उपयोगिताका उसपर कम असर पड़ता है, परन्तु यह बात याद रखनेकी है वस्तुमें उपयोगिता होनीही चाहिए और उसके मुक़ाबलेकी वैसेही वस्तु न खड़ी होनी चाहिए। यदि ऐसा न होगा तो क़ीमत न होगी या कीमत बढ़ेगी नहीं।

हम ऊपर कह गये हैं कि खपतीमें दो गुणोंका अन्तर्भाव हो जाता है। (१) अमुक चीज़के लेनेकी इच्छा और (२) लेनेकी शक्ति। ऐसी खपतीसेही चीज़ोंकी क़ीमतपर असर पड़ता है। अब यह बात तो साफ़ हो ही चुकी है कि अमुक चीज़के लेनेकी इच्छाका आधार उसके उपयोगीपन पर निर्भर है—

अर्थात् किसी आवश्यकता या शौक़को पूरा करनेकी शक्ति जिस चीज़में होती है उसेही लेनेकी इच्छा मनुष्य करेगा। इच्छाका तो यह हाल हुआ। परन्तु किसी वस्तुके लेनेकी शक्तिका आधार इस बातपर है कि उसके प्राप्त करनेमें कितना परिश्रम करना पड़ता है। कल्पना करो कि किसीने आकर हमसे कहा कि "मेरे पास हज़ार घोड़े बिकाऊ हैं आप ख़रीद लीजिए" ऐसी सूरतमें हम क्या उत्तर देंगे? यही न देंगे कि हमें ज़ुरूरत नहीं है, क्योंकि हमारे लिये घोड़े उपयोगमें नहीं आते। इसी तरह यदि हमें ख़बर मिले कि कोहनूर जैसा हीरा नीलाम किया जारहा है या एक माशेभर रेडियम बिकनेको है तो हमें इनके ख़रीदनेका कभी ख़ियालभी नहीं आयगा। हमारे दिलमें चाहे कभी यह बात उठेभी कि क्या अच्छा होता यदि हम इन्हें ख़रीद सकते परन्तु हम ख़रीद नहीं सकते। क्योंकि वैसा हीरा या उतना रेडियम प्राप्त करनेमें इतना ज्यादा परिश्रम करना पड़ता है कि उनकी क़ीमत बहुतही बढ़ी हुई होती है—इतनी बढ़ी हुई कि जिसे हम नहीं दे सकते।

हमने जो ऊपर चित्र और विनयपत्रिकाका दृष्टान्त दिया उसमें श्रमसे प्राप्त होनेके गुणकी अपेक्षा उपयोगीपनका गुण अधिक है। उनके प्राप्त करनेमें "अ" और "क" को समान कठिनता है। उनका संग्रह विशेष है ही नहीं। अतएव उनकी क़ीमतका आधार इस बातपर है कि उस चित्रके, या, गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजके हाथकी लिखी हुई विनयपत्रिका के लेनेमें जो सन्तोष या आनन्द उत्पन्न होता है—शौक़ पूरा होता है—उसके ऐवज़में प्रत्येक ख़रीददार क़ीमत देनेको तैयार

होता है। अब यहांपर यह प्रश्न खड़ा हो सकता है कि " अ " उस आनन्दका बदला ३९००) ही क्यों ठहराता है और " क " उस आनन्दके लिये ४०००) क्यों खर्च करता है? परन्तु ऐसे आनन्दके बदलेका ठीक ठीक कारण बतलाना असम्भव है। कदाचित् दोनोंकी इच्छाभी बराबर हो, दोनोंको उन २ वस्तुओंसे पूरा पूरा प्रेमभी हो, उनके लेनेमें दोनोंको आनन्दभी समान ही प्राप्त हो सके, परन्तु सम्भव है कि "अ," "क" से कम रुपयेवाला हो और ज़्यादा रुपया न दे सकता हो।

इतना कहनेपर यह सिद्ध होगया कि जिन चीज़ोंका संग्रह किसी तरह नहीं बढ़ाया जासकता उन चीज़ोंकी क़ीमतका आधार अमुक मनुष्योंकी उस इच्छापर निर्भर है जिसके कारण वे मनुष्य उन २ वस्तुओंकी आवश्यकता पूरी करने या आनन्द देनेकी शक्तिके ऐवज़में अमुक दाम देनेका विचार करते हैं। परन्तु यह कभी न सोचना चाहिए कि ऐसी चीज़ोंमें मिहनतसे प्राप्त होनेका गुण नहीं होता क्योंकि मिहनतसे प्राप्त होनेका गुण न हो तो क़ीमतही न रहे। जिस चीज़के पानेमें जितना श्रम कम होता है उसकी क़ीमत उतनी ही कम होती है। यदि श्रम नहीं होता तो क़ीमतभी कुछ न होगी।

खेतीकी पैदावारकी क़ीमतः—अब हम इस बातका विचार करते हैं कि दूसरी श्रेणीकी चीज़ोंकी क़ीमतका आधार किन २ बातोंपर है। ये चीज़ें ऐसी है कि जितना इनका संग्रह बढ़ेगा, परिश्रम और पूंजीभी उतनेही ज़्यादा लगेंगे। अतएव इनका जैसे जैसे संग्रह बढ़ता है महंगी हो जाती है। इस प्रकारकी चीज़ोंमें खेतीबाड़ीकी चीजें मुख्य हैं और खनिज पदार्थभी

इसी श्रेणीके भीतर हैं। इस तरहकी चीज़ोंका संग्रह बढ़नेसे वे मंहगी हो जाती हैं इस बातको समझानेके लिये एक उदाहरण दें। कल्पना करो कि पचास आदमियोंने एक अच्छी पैदावाली ज़मीनमें गांव बसाया। वे अपने उपयोगके लिये पासकी ज़मीनमें शाक पैदा करते हैं। और कल्पना करोकि उन्हें जितना अनाज चाहिए इसी पासकी ज़मीनमें पैदा हो जाता है। अब थोड़े बरसोंमें उस गांवकी बस्ती बढ़ी और उसमें १५० मनुष्य रहने लगे। इसके परिणाममें अब तिगुने अनाजकी ज़ुरूरत पड़ेगी। यह अनाज कहांसे आयगा? कोई कहेगा कि अभीतक गांवके पासकी ज़मीन बोई जाती थी अब दूरकी ज़मीन बोना चाहिए कि जिससे अनाजकी पैदावार बढ़े। यह सही है, परन्तु पासकी ज़मीनकी पैदावार गांवमें लानेपर जो ख़र्च पड़ता था दूरकी ज़मीनकी पैदावार लानेमें उससे ज़्यादा ख़र्च पड़ेगा और वह ख़र्च अनाजको काममें लानेवालोंके सिरपर पड़ेगा। कल्पना करो कि गांवके पासकी ज़मीनके गेहूं १) रुपयेके मनभर बिका करते थे परन्तु अब दूरके गेहूंकी पैदावार और बढ़ जानेपर नहीं विकते। दूरपर गेहूं पैदा करनेमेंभी गेहूंके बोनेका ख़र्च उतनाही होगा परन्तु उनके गांवतक लानेमें ख़र्च ज़्यादा होगा, अतएव वे उतनेही महंगे पड़ेंगे जितनी उनके लानेमें मज़दूरी ज़्यादा लगी होगी। कल्पना करोकि पासके गेहूंको गांवतक लानेमें जो ख़र्च हुआ उससे एक आना मन ज़्यादा मज़दूरी दूरके गेहूं लानेमें लगी। ऐसी सूरतमें दूरके गेहूं-वाला १) एक रुपये मन गेहूं न देकर १—) एक रुपया एक आनेके मन गेहूं देगा। और इसके देखादेखी पासके गेहूं-

वालाभी १–) एक रुपया एक आनेके मनके भावसे ही बेचेगा। परिणाम यह होगा कि संग्रह बढ़नेपर मालकी क़ीमत चढ़ जायगी। हमने इस उदाहरणमें यह मान लिया है कि इस गांवकी सारी ज़मीन अच्छी है और इसीसे यह कहा है कि दूरसे अनाज लानेमें सिर्फ़ मज़दूरी ज्यादा बढ़ी, परन्तु, बहुत जगह ऐसा नही होता। कल्पना करो कि दूरवाली ज़मीन कसवाली नहीं है। ऐसी सूरतमें अनाज पैदा करनेमें और ज्यादा ख़र्च पड़ेगा और यह ख़र्चभी अनाज लेनेवालोंके माथे पड़ेगा। जो पहले मनभर अनाजमें ~) एक आना ज्यादा हुआ था सम्भव है कि ऐसी सूरतमें आठ दस आने ज्यादा हो जाय।

कई बार ऐसा होनाभी सम्भव है कि इतना ज्यादा ख़र्च करनेपर भी अनाजका संग्रह ख़र्चके मुआफ़िक न हो सके अर्थात् जितना ख़र्च हो उतना संग्रह न हो। कल्पना करो कि एक गांव किसी द्वीपमें है या पहाड़ियोंके मध्यभागमें है। उसमें उतनीही ज़मीन है जितनी बोई जा चुकी है। अब इसकी आबादी बढ़ गई और ज्यादा अनाजकी ज़रूरत है। ऐसी सूरतमें सिवाय इसके कि उसी जमीनमें ज्यादा अनाज पैदा किया जाय और कोई इलाज नहीं है। परन्तु यह बात तो सिद्धही है कि चाहे जैसे यंत्रोंसे और चाहे जैसे शास्त्रीय ज्ञानके आधारपर क्यों न खेती की जाय अमुक समयके बाद दूना पैसा और दूना परिश्रम करने परभी उस ज़मीनमें दूना अनाज नहीं पैदा होगा। और जो अनाज इस वक़्त पैदा होता है उसमें— पहले अनाज पैदा करनेमें जो ख़र्च होता था उस हिसाबसे— दूना तिगुना ख़र्च हो जाता है।

जैसे २ आबादी बढ़ती है वैसे २ खुराककी क़ीमत चढ़ती है; हमने जो ऊपर दृष्टान्त दिया उससे साफ़ तौरपर समझमें आता है कि आबादीके बढ़नेसे जो खपती बढ़ती है उसका पूरा, अनाजका उत्पादक-ख़र्च बढ़ाये सिवाय नहीं किया जासकता । अतएव यह बात प्रत्यक्ष है कि खेतीबाड़ीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ेहीगी । खपती और संग्रह बराबर होनेही चाहिए वस्तीके बढ़नेसे खपती ज्यादा बढ़ती जाती है और उसके बराबर संग्रह करनेके लिये ख़र्च बढ़नाही चाहिए । ख़र्च बढ़ेगा तो क़ीमत ज़ुरूरही बढ़ेगी । आबादीके बढ़नेसे जो क़ीमत बढ़ती जाती है उसको रोकनेके (कितनेही अंशमें) दोही उपाय हैं:—

(१) दूसरे देशसे खेतीबाड़ीकी पैदाका मंगवाना

(२) अच्छे २ यंत्रोंको काममें लाना और रासायनिक क्रियासे खेती करना

पहली रीति इंग्लेंडमें काममें लाई गई । इसका परिणाम उनके लिये बहुत अच्छा निकला । वहांपर सन् १८४१ ई० में १,५९,१४,१४८ मनुष्योंकी आबादी थी और १८८१ में २,५९,६८,२८६ की होगई । वहांपर पहले परदेशसे आतेहुए अनाज पर भारी महसूल लिया जाता था अतएव लोगोंको वहीं पैदा हुए अनाजपर गुज़र करना पड़ता था । परन्तु आबादी बढ़नेसे अनाजकी क़ीमत बेशुमार बढ़ गई । आख़िर परदेशसे आते हुए अनाजपरसे महसूल उठा दिया गया तब आदमियोंको आराम पहुंचा । आबादी बढ़नेसे चीज़ोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है इसका ज्ञान दूध जैसी चीज़ोंपर—जो परदेशसे लाई नहीं जासकती—विचार करनेसे तुरंत मालूम हो जायगा ।

अच्छा तो हम बंबई कलकत्ते जैसे शहरकी ओर निगाह करें। पहले वहांपर दूध सस्ता मिलता था परन्तु ज्यों ज्यों आबादी बढ़ती गई वह महंगा होता गया। हां छोटे २ गांवोंमें अबभी दूध सस्ता मिलता है। परन्तु वहांसे लाकर बंबईमें उसे काममें नहीं लासकते क्योंकि वह जल्दी ख़राब हो जाता है। अतएव महंगेपनको रोकनेकी पहिली तरक़ीब काममें नहीं लाई जा सकती, इसीसे दूध, गांवोंकी अपेक्षा बंबईमें तिगुने चौगुने मोलपर बिकता है।

दूसरी रीतिका प्रभाव प्रत्यक्षही है। किसी ज़मीनको हम अच्छे २ खात वग़ैरा डाल कर सुधारें और अच्छे २ यंत्रोंको खेतीके काममें लावें तो अनाज ज्यादा पैदा होगा—अर्थात् अमुक रक़म ख़र्च करनेपर जो पैदा होती थी उससे ज्यादा पैदा होगी।

खेतीबाड़ीकी पैदा की हुई वस्तुओंकी क़ीमत जिन जिन नियमोंके अनुसार होती है उनका संक्षेपमें विचारः—खपती और संग्रह बराबर होना चाहिए। जब संग्रहकी अपेक्षा खपती ज्यादा होती है तब—कितनीही चीजें ऐसी हैं कि उनकी खपती कम हो जाती है और संग्रह और खपती बराबर हो जाते हैं। परन्तु खेतीबाड़ीकी पैदा हुई वस्तुओंका यह हाल नहीं है। क्योंकि अनाजकी खपतीका आधार आबादीपर है। गेहूं, चना, जो, जुवार, चावल आदि ऐसी चीज़ें हैं कि इनकी क़ीमत बढ़नेसे खपती घट नहीं सकती क्योंकि आदमी अनाज लेना बंद नहीं कर सकते। वे कपड़े—लत्तेमें चाहे कम खर्च करदें परन्तु अनाज लेनेमें उन्हें ख़र्च करनाही पड़ेगा,

और यदि ख़र्च न करेंगे तो जियेंगे कैसे ? अतएव सिद्ध हुआ कि क़ीमतके बढ़नेसे अनाज जैसी आवश्यक चीज़कीखपती कम नहीं हो सकती । यदि लोग आधेपेट भूखे रहने लगें तो कभी, कहीं, ऐसा होभी, परन्तु जब इस तरह खपती कम होती है तो मनुष्योंकी आवादी कम हो जाती है । ऐसी हालतमेंभी जो सिद्धान्त हम पहले निश्चित करचुके हैं कि—ऐसी आवश्यक चीज़ोंकी खपतीका आधार आवादीपर है—उसमें कुछ बाधा नहीं आती । अच्छा तो ऐसी चीज़ोंके सम्बन्धमें खपती और संग्रहको बरावर करनेका उपाय खपतीका घटाना नहीं है । उन दोनोंको बराबर करनेके लिये संग्रह बढ़ाना चाहिए । इस संग्रहके बढ़ानेके लिये कमसल ज़मीनको और असुविधावाली ज़मीनको भी आवाद करना होगा । इस काममें असल ज़मीन और सुविधावाली ज़मीनमें जो ख़र्च होता है उससे—ज्यादा ख़र्च लगेगा—अर्थात् परिश्रम और पूंजी ज्यादा लगाने पड़ेंगे । यह उत्पादक ख़र्च बढ़गया । इसके बढ़ जानेसे पैदावार की क़ीमत बढ़नाही चाहिए । इन बातोंसे सिद्ध होता है कि जीवनके लिये जो जो चीज़ें ज़ुरूरी हैं उनकी खपतीका आधार क़ीमतकी कमोबेशीपर—घटबढ़पर नहीं है परन्तु क़ीमतकी घटबढ़का आधार खपतीपर है—अर्थात् और २ बातें पहलेके ऐसीही बनीहुई हों तो क़ीमतका आधार मनुष्य संख्याकी कमीबेशीपर मुक़र्रर है । परन्तु यह बात ध्यानमें रखनेलायक़ है कि आबादी बढ़नेपरभी कुछ कारण ऐसे होते हैं कि ऐसी २ चीज़ोंकी क़ीमत नहीं बढ़नेपाती । इंग्लेंडमें फ्रीट्रेड—बेरोकटोक व्यापार (अप्रतिबद्ध व्यापार) होनेसे और चीज़ोंको एक जगहसे दूसरी जगह

ले जानेमें अच्छी सुबिधा होनेसे क़ीमत उस परिमाणमें नहीं बढ़ती जिस परिमाणमें आबादी बढ़ती है।

खनिज पैदावार:—खेतीबाड़ीकी पैदावारके विषयमें जो कहा गया है वह खानोंकी पैदावारकोभी लागू पड़ता है। सन् १८७१—७२ में लोहेका व्यापार इंग्लेंडमें ख़ूब चमका। इससे कोयलेकी खपती ख़ूब बढ़ी। इस खपतीको पूरा करनेके लिये नई नई खानें खोदीं गईं। इनमें पहले की खानोंसे ज्यादा ख़र्च हुआ, परिणाम यह हुआ कि कोयलेकी क़ीमत बहुत चढ़ गई। सन् १८७३ में कोयलेकी खपती कम हो गई परिणाममें क़ीमत उतरगई, यहां तक कि जिन खानोंमें पहले मिहनत और पूंजी निकल आतीथी वहभी न निकलने लगी-उन्हेंभी घटी रहने लगी। आख़िरकार जो नई खानें हुई थी बन्द होगईं, क्योंकि उनमें पहलेही माल कम हुआ था।

सिद्ध पदार्थोंकी क़ीमत नियमित करनेवाले कारण:—ये ऐसे पदार्थ हैं कि जिनका संग्रह बढ़ानेसे उत्पादन ख़र्च नहीं बढ़ता और क़ीमतके बारेमें जो हम पहले पदार्थोंकी तीन श्रेणियां क़ायम करचुके हैं उनमें तीसरी श्रेणीके हैं।

हम ऊपर कह गये हैं कि ऐसे पदार्थोंकी क़ीमतका आधार उत्पादक ख़र्चके ऊपर स्थित रहता है क्यों कि उनके बनानेवालों-में भीतर-ही—भीतर असीम स्पर्धा होती है। अब यह जानना आवश्यक है उनके उत्पादक व्ययके मूल अंश कौनसे कौन हैं। साधारण तौरपर यह जान पड़ेगा कि जिन नियमोंसे खेती-बाड़ीकी चीज़ोंकी क़ीमत निश्चित की जाती है उन्हीं नियमोंसे सिद्ध पदार्थोंकी क़ीमतभी तै होनी चाहिए, क्योंकि इनके तैयार

करनेमें कच्चा माल काममें आता है और वह ज़मीनसेही तैयार होता है। जैसे छींटका थान बनानेके लिये रूईकी ज़ुरूरत होती है और रूई ज़मीनसे पैदा होती है। जब रूई ज़मीनसे पैदा होती है तो उसके ज्यादा तैयार करनेमें उत्पादक ख़र्च बढ़ेगा और उत्पादक ख़र्च बढ़ेगा तो वह महँगी हुए बिना न रहेगी। ज्यादा रूई लिये बिना छींटके थान—जिनकी गिनती सिद्ध पदार्थोंमें हैं—कैसे ज्यादा बनेंगे ? जब ऐसा है तो ज्यों ज्यों खपती ज्यादा हो वैसे-ही-वैसे सिद्ध पदार्थोंकी भी क़ीमत बढ़ना चाहिए। परन्तु यह बात नहीं है। कच्चे मालकी क़ीमत सिद्ध पदार्थोंकी क़ीमतका एक अंश है परन्तु बहुत ही सूक्ष्म अंश है। अच्छा, छींटके दृष्टान्तको ही देखें। थानके बनानेमें इतनी ज्यादा अलग-२ क्रियाएं करनी पड़ती हैं कि उस थानमें लगी हुई रूईकी क़ीमत उन उन क्रियाओंकी क़ीमतके साम्हने पावमें पासंग भी नहीं है—कुछभी नहीं हैं। रूईको पुतलीघरमें लाने बाद इतनी कार्रवाइयां की जाती हैं कि जिसका कोई हिसाब नहीं। उन २ क्रियाओंके करनेके लिये भिन्न भिन्न प्रकारके कारीगर कामपर लगाये जाते हैं। उन सबको तनख़्वा दी जाती है और थान बनानेके धंदेमें पूंजी लगी हुई होती है। ये सब पीछे निकल आने चाहिए और ऊपरसे कुछ नफ़ा मिलना चाहिए। हमने घड़ीकी बारीक कमानियोंके बाबत कहा था कि उन कमानियोंके बनानेमें बहुत बारीक २ कारीगरीका काम पड़ता है। इससे उन कमानियोंकी क़ीमत—उस फ़ौलादके टुकड़ेसे, जिसकी कि वे बनाई गई हैं—४००० गुनी ज्यादा हो जाती हैं। इतना कहनेका हमारा अभिप्राय यह है कि कोईभी सिद्धपदार्थ क्यों

न हो उसके उत्पन्न करनेमें मुख्य भाग परिश्रमका है और दूसरा कोई आवश्यक अंश उसमें है तो पूंजीवालेके अनुपभोग-का। परिश्रम और अनुपभोगकी जो क़ीमत है उसके साथ मुक़ाबला करनेसे साफ़ मालूम हो जाता है कि कच्चेमालकी कुछभी क़ीमत नहीं। सिद्धपदार्थोंकी ऐसी क़ीमत होनी चाहिए कि जिससे कारीगर और पूंजीवाले अपना काम चलाते रखना पसन्द करें। सिद्धपदार्थोंका संग्रह बढ़ानेसे प्रायः उनकी क़ीमत बढ़ती नहीं है प्रत्युत कम होती है और ऐसा होनेका कारण यह है कि जैसे-जैसे ज्यादा माल तैयार किया जाता है वैसे-ही-वैसे उसमें परिश्रम कम होता है। स्टीम-यंजनोंसे काम करनेमें पूंजी और श्रम बचते हैं। अतएव ऐसे माल, उत्पादक ख़र्च कम होकर ज्यादा तैयार हो जाते हैं। परन्तु ऐसा करना उस वक्त निभ सकता है जब उस उस मालकी खूब खपती हो और माल बहुत ज्यादा तैयार करना हो। यदि कपड़ोंके बहुत ज्यादा बनानेकी ज़ुरूरत न होती तो जुलाहोंके सांचोंकी जगह बड़े बड़े कल कारख़ाने नहीं खुलते। जितना ज्यादा काम किया जाय उतनाही ज्यादा ख़र्च नहीं बढ़ेगा। दस हज़ार थान बनानेमें जो ख़र्च होगा उससे दूना ख़र्च बीस हज़ार थान बनानेमें नहीं होगा। और एक बात है, जब बड़े पायेपर काम किया जाता है तब श्रमका विभाग भी अच्छी तरह किया जाता है। जिस वक्त जुलाहे अपने हाथसे कपड़े बुनते हैं तब सारी क्रियाएं उन्हें अकेलेही करनी पड़ती हैं, अतएव वे सस्ता माल नहीं तैयार कर सकते। परन्तु वही काम जब सांचेसे होने लगता है तब अलग २ काम करनेको अलग २ कारीगर मुक़र्रर होते हैं।

अतएव माल बहुत ज्यादा पैदा होता है और सस्ता होता है। सिद्धपदार्थोंकी जितनी ज्यादा खपती होती है उतनाही ज्यादा संग्रह बढ़ाया जाता है और ज्यों ज्यों संग्रह बढ़ाया जाता है वे सस्ते होते हैं। क्योंकि ऐसी चीजें जितनी ज्यादा बनती जांयगी उत्पादन खर्च कम होता जायगा। कल्पना कीजिए कि नवरत्नसरस्वतीभवन–झालरापाटन (राजपूताना इंडिया)से "आर्यजाति" नामकी एक पुस्तक प्रकाशित हुई। उसकी क़ीमत ५) पांच रुपया रक्खी गई। पुस्तककी उपयोगितासे उसे लोगोंने ख़रीदा और प्रथम संस्करणकी ५०० कापियां बिक गईं। पुस्तकने अपना काम किया, लोगोंके शरीरमें प्राण फूंक दिये, एक जादूका सा असर किया। जिन्होंने इस पुस्तकको न देखा, देखनेके लिये ललचाने लगे। हज़ारों मांगे पुस्तकके लिये आने लगी और साथही साथ क़ीमत कम करनेका आग्रह भी होने लगा। ऐसी सूरतमें सरस्वतीभवनने दूसरे संस्करणमें उसकी हज़ार पांच सौ कापियां नहीं छपवाईं, दस हज़ार कापियां छपवाईं और पुस्तककी क़ीमत एकदम कम कर दी-अर्थात् सिर्फ़ एक रुपया रख दिया। अब यदि लोगोंमें इसकी भी खपती होगई और लोग बराबर पुस्तक मांगते रहे, यहांतक कि लाखों कापियां उठ जानेकी घड़ी आगई तो नवरत्नसरस्वतीभवन उसे इतनी सस्ती बेचनेकी कोशिश करेगा कि जिसमें उसकी लागत मात्र निकल आय और नाम मात्रका लाभ रह जाय (याद रहे हम उस प्रसंगका वर्णन नहीं करते कि कोई राजा, महाराजा, सेठ, साहूकार, निजका ख़र्च देकर उसे बंटवा दे, या सरस्वतीभवनके अध्यक्ष इस काममें घाटा सहनेको तैयार हो जांय) अर्थात् वह लाखों

कापियां छपवाकर चार आने-पांच आनेमें बेचनेकी व्यवस्था करेगा। क्योंकि सिद्धपदार्थोंका नियम ही यह है कि उनकी जितनी ज्यादा तैयारी की जाती है उतनाही ज्यादा, ख़र्च कम होता जाता है।

तनख्वा की कमीबेशीसे यह निश्चय नहीं होता कि मज़दूरी सस्ती पड़ी या महँगी—तनख्वा ज्यादा देनी पड़े या कम, इससे मज़दूरीका महँगापन या सस्तापन नहीं देखा जासकता। इस कामके लिये तनख्वाका मुक़ाबला मिहनतसे पैदा हुए कामके साथ करना चाहिए। अनाड़ी कारीगरको कम तनख्वा देकर रखनेके मुक़ाबलेमें समझदार को बहुत ज्यादा तनख्वा देकर रखना चाहिए इसीमें लाभ है।

कल्पना कीजिए कि आपको एक मकान बनवाना है। एक अनाड़ी कारीगर, उसे १००००) रुपयेमें बनादेनेको तैयार है और दूसरा समझदार कहता है कि जैसा अच्छा मकान आप बनाना चाहते हैं १५०००) बिना नहीं बन सकता। यदि आपने पहले से बनवाया तो हारमें रहेंगे और दूसरेसे बनवाया तो जीतमें। क्योंकि पहलेका काम कच्चा होगा और दूसरेका पक्का। जितने समझदार आदमी हैं वे दूसरी श्रेणीके लोगोंसे ही काम लेते हैं। इसके उदाहरण सैंकड़ों दिये जा सकते हैं।

अच्छे कामवालोंके होनेसे मालिकको और स्वयं कारीगरोंको बहुत लाभ होता है। निपुणताके कारण, अमुक तादादकी पूंजी और मिहनतसे, सम्पत्ति, बहुतही बढ़ जाती है। अब यदि चीज़ोंकी क़ीमतमें कुछ फेर फार न हो तो पूंजी और परिश्रमकी उत्पादक शक्ति बढ़ जानेसे, पूंजीवालेको ज्यादा नफ़ा मिलेगा

और कामवालोंको ज्यादा तनख्वा। कल्पना करो कि योग्य शिक्षा मिलनेसे किसानोंकी निपुणता बढ़ती है। क्योंकि शिक्षासे मनुष्य खूब होशियार, विश्वासपात्र और धीरजवाला हो जाता है। जब किसान ऐसा हो जायगा तो ज़मीनका मालिक अपने नफ़ेको वरावर उठाते हुए किसानको ज्यादा तनख्वा दे सकेगा।

पूंजीपर मिलताहुआ नफ़ाः—अलग २ देशोंमें, अलग २ समयपर, पूंजीपर मिलनेवाले नफ़ेकी जो साधारण तौरपर तादाद निश्चित की जाती है वह यहांपर नहीं बताई जासकती। उसका ज़िक्र "सम्पत्ति-विभाग" वाले भागमें करेंगे। यहांपर तो इतनाही कह देना काफ़ी होगा कि एक देशमें एकही समयमें पूंजीका लाभ प्रत्येक काममें एकसा होनेकी ओर झुकता रहता है। यदि किसी व्यापारमें पैसा लगानेसे और व्यापारोंकी अपेक्षा ज्यादा लाभ होता हो तो उससे यह न मानलेना चाहिए कि उस व्यापारमें पूंजीका ज्यादा नफ़ा मिलता है, क्योंकि किसी व्यापारमें ऐसा लाभ होनेके कारण और ही होते हैं। किसी काममें पूंजीवाला स्वयं काम करनेवालाभी होता है। ऐसी सूरतमें परिश्रमका लाभभी उसे ही होता है—अर्थात् पूंजी और परिश्रम दोनोंका लाभ होनेसे वह समझता है कि मुझे ज्यादा फ़ायदा हुआ। कितनेही काम ऐसे होते हैं कि जिनमें बड़ी अड़चनें उठानी पड़ती हैं और कितनेही काम ऐसे होते हैं कि जिनमें आदमीकी आबरू घट जाती है। ऐसे काम करनेवालोंको जब ज्यादा लाभ होता है तब साधारण तौरपर यह माना जाता है कि ऐसे २ कामोंमें पूंजीपर ज्यादा नफ़ा मिलता है। परन्तु ऐसा मानना ठीक नहीं। वह ज्यादा

नफ़ा पूंजीका नहीं। वह तो ज़िम्मेवरी, अड़चने और बेइज़्ज़तीका बदला होता है। और भी एक रीति है कि जिसमें लाभ ज्यादा हो जाता है। वह यह है कि कोई एक शख्स, या, एक मंडल, अमुक वस्तुको अपनेही क़ब्ज़ेमें करलेता है, फिर वह ठेकेसे करे या सारी पैदाइशको ख़रीदकर करे। इससे उस वस्तुका व्यापार उसके हाथमें आजाता है और फिर वह उस वस्तुको मनमाने मोलपर बेचता है। एक समय ऐसा हुआ कि कुछ पूंजीवालोंने एका कर, जितना कोनेन पैदा हुआ, सब-का-सब ख़रीद लिया। जब कोई कोनेन बेचनेवाला बाक़ी न रहा तब उन्होंने सलाह करली और दूने दाम कर लिये। किसी व्यापारको हाथमें करलेनेसे ऐसेही लाभ उठाया जासकता है। ज्यादा लाभ होनेके जो कारण हमने यहां बताये हैं यदि इनमेंसे कोई कारण उपस्थित न हों तो निश्चय मानिए कि सब कामोंमें पूंजीपर बराबर होनेकी ओरही लाभका झुकाव होगा।

पूंजीका स्वरूप हम बतला चुके हैं। इससे यहांपर इतनाही कहना बस है कि ज़मीन, मिहनत और पूंजीके मिलनेसे जो सम्पत्ति पैदा होती है, उसमेंसे जो हिस्सा पूंजीपर मिलता है, उसका नाम पूंजीका लाभ या व्याज है। यह लाभ अलग २ समयमें और अलग २ देशोंमें अलग २ होता है। कितनेही देश ऐसे हैं जिनमें ज़िम्मेवरी और देखरेख रखनेकी एवज़में जो कुछ मिलता है उसके सिवाय व्यापारमें लगाई हुई पूंजीपर भी ।।) आने सैंकड़ा व्याज मिलता है। अर्थात् ६) रुपये साल प्रति सैंकड़ा व्याज मिलता है। यह छह रुपये सैंकड़ा, ९–१२ तक हो जाता है, अर्थात् १२) रुपये सैंकड़े तक व्याज हो जाता है।

और बहुत देश ऐसे होते हैं कि जहां ब्याज कम मिलता है। विलायतमें ३) तीन रुपये सैंकड़ेसे भी कम ब्याज मिलता है।

क़ीमत और नफ़ेका सम्बन्धः—चीज़ोंकी क़ीमतका निर्णय करते वक़्त यह बात ध्यानमें रखनेके लायक़ है कि उस क़ीमतमें पूंजी और परिश्रमका बदला निकल आना चाहिए। यदि ऐसा न होगा तो कोई पूंजीवाला उस चीज़के बनानेमें अपने पैसे न फंसायगा और कोई कारीगर मज़दूरी न करेगा। वे अपनी पूंजी और मिहनतको ऐसे काममें लगांयगे कि जिससे उन्हें बदला मिल जाय—अर्थात् उन्हें घटी न सहनी पड़े। इसपरभी यदि पूंजी और परिश्रमकी उत्पादक शक्ति कम होती है तो चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ जाती है। थोड़ासा विचार करेंगे तो हमें मालूम हो जायगा कि पूंजी और परिश्रमकी उत्पादक शक्तिके अच्छे बुरे होनेपर नफ़े और तनख़्वाकी घटती-बढ़तीका दारोमदार है। यह किसीको न समझना चाहिए कि चीज़ोंकी क़ीमत ज़्यादा होती है तो नफ़ा ज़्यादा होता है और क़ीमत कम होती है तो कम। कल्पना करो कि एक गांवड़े—गांवमें एकही खाती है। वह सन्दूक़ें बनाता है उसने एक ऐसा यंत्र बनाया कि जिसकी सहायतासे वह दस सन्दूक़ोंकी जगह पन्द्रह सन्दूक़ें बनाने लगा। उसके पूंजी और परिश्रमकी उत्पादक शक्ति ड्यौढ़ी होगई। जितनी पूंजी और मिहनतसे वह १० सन्दूक़ें बनाता था, पन्द्रह बनाने लगा। अब यदि पेटियोंकी क़ीमत कम न हो तो उसे पूंजी और परिश्रमके बदलेमें ड्यौढ़े दाम मिलेगें—उसे इतना ज़्यादा नफ़ा मिलेगा। इस काममें उत्पादक ख़र्च कम हुआ और तनख़्वा और ब्याज ज़्यादा मिले। परन्तु हमेशा यह बात नहीं निभेगी।

सन्दूक़ोंका संग्रह बढ़नेसे उनकी क़ीमत घटेगी। हम कई बार बतला चुके हैं कि खपती और संग्रह बराबर होने चाहिए। संदूक़ोंका संग्रह पहलेसे ड्यौढ़ा होगया। पहले संग्रह और खपती बराबर थी। अब खपती उतनी नहीं है। अतएव खातीको सन्दूक़ोंकी क़ीमत कम करनी पड़ेगी और ऐसा होगा तब संग्रह और खपती बराबर होंगे। १५) रुपये सैंकड़ा क़ीमत कम करदी। इससे उसकी सब सन्दूक़ें बिकने लग गई। उसे ३५) रुपये सैंकड़ा पहलेसे ज्यादा मिलने लग गया—अर्थात् उसकी पूंजी और परिश्रमपर ज्यादा लाभ होने लगा और उत्पादक ख़र्च कम होनेसे चीज़भी सस्ती विकी।

इस उदाहरणमें हमने यह मान लिया है कि उस गांवमें एकही खाती है। अतएव वहांपर उसके साथ स्पर्धा करनेवाला कोई नहीं है। परन्तु कल्पना करोकि उस गांवमें और भी चार पांच खाती हैं और उन्होंने वैसेही यंत्रकी सहायता लेकर खूब सन्दूक़ें बनाना शुरू कर दिया। इसका परिणाम क्या होगा? सन्दूक़ोंका संग्रह बहुत बढ़ जायगा। हरएक खाती अपना माल बेचनेकी कोशिश करेगा और एक दूसरेसे सस्ती सन्दूक़ें बेचनेको तैयार होगा, परिणाम यह होगा कि यंत्रके काममें लानेका सारा लाभ ग्राहकोंको पहुंचेगा। खातियोंको पूंजी और परिश्रमका बदला उतनाही मिलेगा जितना पहले मिलता था और ५०) रुपये सैंकड़ेका लाभ ग्राहकोंको मिलेगा क्योंकि सन्दूक़ोंकी क़ीमत कम हो जायगी। अर्थात् पहले १० सन्दूक़ें जितने दामोंमें बिकती थीं उतनेही दामोंमें अब १५ सन्दूक़ें बिकेंगी। इस बात से नीचे लिखे हुए नियम निकलते हैं।

(१) जब पूंजी और परिश्रमकी उत्पादक शक्ति बढ़ती है तब उनका बदला—व्याज और तनख्वा—बढ़ जाते हैं और उत्पादक ख़र्च कम होता है ।

(२) जब ऐसी उत्पादक शक्ति बढ़ती है तब तनख्वा और लाभ ज्यादा होजाते हैं और साथ ही मालकी क़ीमत कम हो सकती है ।

(३) जिस वक्त पूंजीवालों और कामवालोंमें असीम स्पर्धा चलती है उस वक्त पूंजी और मिहनतकी उत्पादक शक्ति बहुत ही बढ़ जाती है और इससे जो कुछ फ़ायदा होता है आखिरमें वह ग्राहकोंको हो जाता है । अर्थात् परिश्रम और पूंजीकी उत्पादक शक्ति बढ़नेसे मालकी क़ीमत कम हो जाती है और मिहनत और पूंजीके बदलेमें मिलते हुए तनख्वा और व्याजमें सदाके लिये बढ़ती नहीं होती ।

यद्यपि यह बात सही है कि उत्पादक शक्तिके बढ़नेसे हरएक चीज़की क़ीमत कम हो जाती है और पूंजी एवं परिश्रमको ज्यादा लाभ नहीं होता, तथापि यह कहना अनुचित नहीं होगा कि यदि वही चीज़ पूंजीवालों और मिहनत करनेवालोंके काममें आती हो तो पूंजी और परिश्रमके बदलेमें अवश्य लाभ-की वृद्धि होती है। क्योंकि व्याजके या तनख्वाके दामसे, पूंजी-वाला या कारीगर, पहले जितनी चीज़ और जगहसे पाता, यहांसे उसे ज्यादा चीज़ मिल जायगी । उदाहरणके लिये हम धोती जोड़ेके कारख़ानेको ही लेलें। कल्पना करो कि धोती जोड़े सस्ते हो गये । कारीगरोंको या पूंजीवालोंको लाभ पहले जितना ही होगा—टके उतनेही हाथ लगेंगे परन्तु धोती जोड़ेके लिये उन्हें

कम पैसे ख़र्च करने पड़ेंगे और बाक़ीके पैसोंसे वे और कोई आवश्यक चीज़ ख़रीदेंगे। योरपमें बहुतसे कामोंमें बाष्पयंत्र-स्टीमइंजिन काममें लाया जाता है। इससे उत्पादक शक्ति बहुत ही बढ़गई है। परन्तु उससे होनेवाला लाभ पूंजीवालों या कामवालोंके लिये नहीं क़ायम रक्खा जासकता क्योंकि दूसरे पूंजीवाले और कामवाले उनके मुक़ाबलेमें खड़े हो जाते हैं। तथापि यंत्र कल आदिके उपयोगसे सिद्धपदार्थोंकी क़ीमत कम होनेपर उन्हें कुछ न कुछ लाभ पहुंचाही है। इस बातको आगे चलकर बहुत कुछ समझांयगे।

क़ीमत पर खपती और संग्रहसे होनेवाले प्रभावका संक्षेपसे वर्णनः—ऊपर कही हुई तीनों प्रकारकी चीज़ोंपर खपती और संग्रहका क्या असर होता है इसका सारांश यहांपर लिख देते हैं। इस बातको अच्छी तरह ध्यानमें रखना चाहिए कि तीनों प्रकारके पदार्थोंकी क़ीमत ऐसी होती है कि जिसमें खपती और संग्रह बराबर होते हैं,।

(१) पहली श्रेणीकी चीज़ें जिनका संग्रह बढ़ ही नहीं सकता, उनके संग्रहके बराबर खपती करनेके लिये क़ीमत बढ़ाई जाती है और और इतनी बढ़ाई जाती है कि संग्रहके बराबर खपती रहजाय।

(२) दूसरी श्रेणीकी चीज़ें जिनकी खपती नहीं घट सकती (क्योंकि ये चीज़ें जीवनके लिये ज़ुरूरी होती हैं) और खपती, संग्रहसे ज्यादा होती है तो संग्रह बढ़ाना पड़ता है। परन्तु यह संग्रह तब बढ़ता है जब उत्पादक ख़र्च बढ़ाया जाय।

ऐसा होनेसे ऐसे पदार्थोंकी, संग्रह बढ़नेके साथही, क़ीमत बढ़ जाती है।

(३) तीसरी श्रेणीकी चीज़ें ऐसी हैं कि जिनका संग्रह, उत्पादक ख़र्च बढ़े बिना, बढ़ाया जासकता है। इन पदार्थोंकी खपती जब संग्रहसे ज्यादा होती है तब उनकी क़ीमत बढ़ती है और क़ीमतके बढ़नेसे खपती कम हो जाती हैं। परन्तु खपती और संग्रहके बराबर करनेकी यह परिपाटी बहुत समय तक नहीं चलती। ऐसी चीज़ोंके काम करनेवालोंको पूंजी और परिश्रमका जो बदला मिलना चाहिए यदि उससे ज्यादा मिलता है तो उस लाभको उठानेके लिये और २ लोगभी उस काम को करने लगते हैं—अपनी २ पूंजी और परिश्रम लगा देते हैं—फल यह होता है कि संग्रह खूब बढ़ता है और मालकी क़ीमत कम हो जाती है। क़ीमत कम होनेसे खपती (जो संग्रह बेहद बढ़नेसे कम हुईथी) बढ़ती है और संग्रहके बराबर हो जाती है।

अलग २ तरहकी चीज़ोंकी क़ीमत किस तरह निश्चित होती है सो हम बतला चुके। अब अगले प्रकरणमें हम सिक्केके मोलके विषयमें कहेंगे।

प्रश्न

(१) क़ीमत करनेके लिये चीज़ोंको कौनसी २ श्रेणियोंमें बाटा है?

(२) उत्पादक ख़र्च किसे कहते हैं?

(३) मिलके मतसे उत्पादक ख़र्चके मुख्य अंश कौनसे हैं?

(४) प्रोफेसर कियर्नसने उत्पादक ख़र्चकी क्या व्याख्या की है ?

(५) "खपती और संग्रह पर क़ीमतका आधार है" इस बातका सच्चा अर्थ क्या है ?

(६) उदाहरण देकर समझाओ कि खपती और संग्रह बराबर हो जांय इस तरहसे क़ीमत कैसे ठहरती है ?

(७) चीज़ोंकी क़ीमतका झुकाव इस तरहका कैसे होता है कि जिससे पूंजीवालोंको और काम करनेवालोंको केवल ब्याज और परिश्रमका फल ही मिलता रहे ?

(८) यह बात उन चीज़ोंके लिये ही होती है जिनका संग्रह बढ़ाया जासकता है परन्तु जिनका संग्रह नहीं बढ़ाया जासकता उनके संबन्धमें यह व्यवस्था कैसे निभेगी ?

(९) खपती किसे कहते हैं ?

(१०) जिन चीज़ोंका विनिमय मोल होता है उनमें कौनसे दो गुण होने चाहिए ?

(११) ये दो गुण सदा समान होते हैं या क्या ? अपना उत्तर उदाहरण पूर्वक दो

(१२) पुराने चित्रके समान चीज़ोंकी क़ीमत ठहरानेमें कौनसे गुणका ज़्यादा असर पड़ता है ?

(१३) संग्रह बढ़नेसे महँगी होती जाय ऐसी कौनसी चीज़ें हैं ?

(१४) अनाजके ज़्यादा पैदा करनेमें, परिमाणसे, पूंजी और

परिश्रम क्यों ज्यादा लगते हैं ? और किस तरह लगते हैं ? उदाहरण देकर समझाओ ?

(१५) अनाजकी खपती क्यों बढ़ती है ? और सब चीज़ों-की अपेक्षा अनाजकी क़ीमत किन कारणोंसे बढ़ना सम्भव है ।

(१६) इस तरह अनाजकी बढ़ती हुई क़ीमतको कैसे रोक सकते हैं ?

(१७) खेती बाड़ीकी चीज़ोंकी क़ीमत जिन नियमोंसे तै होती है, उन नियमोंसे, और जिन २ चीज़ोंकी क़ीमत तै होती हो उनके नाम गिनाओ ?

(१८) क़ीमतके सम्बन्धमें जो चीज़ोंको तीन श्रेणियोंमें बांट दिया उनमें अख़ीरी श्रेणी कौनसी है ?

(१९) सिद्ध-पदार्थोंकी क़ीमत खेतीबाड़ीकी चीज़ोंकी क़ीमतके नियमोंसे की जाती है या क्या ?

(२०) यदि नहीं तो इन दोनोंमें भेद होनेका कारण क्या है ?

(२१) सिद्ध-पदार्थोंका संग्रह बढ़नेसे कभी २ उनकी क़ीमत कम क्यों हो जाती है ?

(२२) श्रमकी उत्पादक शक्तिका उत्पादक ख़र्चपर क्या असर पड़ता है ?

(२३) तनख़्वा, व्याज, उत्पादक-ख़र्च और क़ीमतका आपसमें क्या सम्बन्ध है ?

(२४) उदाहरण देकर समझाओ कि कैसे २ प्रसंगोंमें

तनख्वा और ब्याज बढ़ सकते हैं परन्तु क़ीमत नहीं बढ़ती ?

(२५) जब ऐसा है तो ब्याज तनख्वा और क़ीमतके सम्बन्धमें क्या अनुमान किये जासकते हैं ?

(२६) पूंजी परिश्रमकी उत्पादक शक्तिमें सामान्य रीतिसे बढ़ती हो तो पूंजीवालों, काम करनेवालों और ग्राहकोंको लाभ होनेके क्या क्या रास्ते हैं ?

(२७) तीनों प्रकारकी चीज़ोंकी क़ीमत, जिन जिन नियमोंसे होती है उन २ नियमोंको संक्षेपमें समझाओ ?

विशेष प्रश्न.

(१) अनाज पैदा करनेका ख़र्च यही रहे जो अब है और देशकी आबादी ६० वर्षमें दूनी हो जाय तो आबादी बढ़नेका क्या असर होगा ?

(२) कल्पना करो कि किसीने एक ऐसा यंत्र निकाला कि जिससे अमुक वस्तु बहुत ज्यादा तैयार हो सकती है। अब इस यंत्रको काममें जो लायगा उसे फ़ायदा होगा, इस ख़यालसे बहुतसे मनुष्य स्पर्धा करने लगेंगे। ऐसी सूरतमें उस उस यंत्रका निकालनेवाला, अपने यंत्रके हक़का परवाना सरकारसे हासिलकर सारा लाभ स्वयं उठावे या क्या ?

(३) किसी चीज़की खपतीसे उसकी क़ीमतपर असर

होता है। यदि एक भीखमंगा मोटर लेनेकी इच्छा करे तो उसकी इच्छासे मोटरकी क़ीमतपर कुछ असर पड़ेगा ?

(४) कल्पना करो कि अनाज बहुत सस्ता है और एक किसान अपने हालीको पहले जितना देता था उससे एक तिहाई कम देता है परन्तु पहले उस किसानके घरमें खानेवाले ६ मनुष्य थे और अब ९ हैं। ऐसी सूरतमें अनाजके सस्तेपनका किसानको सदाके वास्ते कुछ फ़ायदा होगा ?

चौथा प्रकरण।

सिक्केका मोल।

हम पहले कह चुके हैं कि किसी चीज़का मोल कहनेसे उस वस्तुकी विनिमय शक्ति, या, उसकी ऐवज़में जो दूसरी चीज़ आती है उसका परिमाण समझा जाता है। 'सिक्केका मोल' शब्दका अर्थ यह हुआ सिक्केकी विनिमय शक्ति। सिक्केका मोल बढ़गया, उस वक्त कहा जायगा, जिस वक़्त सब चीजें उसकी एवज़में सस्ती मिलेंगी और जब सब चीजें महंगी मिलती हैं तब सिक्केके मोलका कम हो जाना समझा जाता है।

जिन नियमोंसे और २ खनिज पदार्थोंका मोल निश्चित किया जाता है उन्हीं नियमोंसे सिक्केका मोलभी निश्चित होता है। कितनी ही बार मनुष्य ऐसा माननेकी भूल करते हैं कि सिक्केकी क़ीमत सदा एकसी रहती है। वे समझते हैं कि पदार्थोंकी क़ीमत कम हुई हो या ज्यादा, सरकारी टकसालसे हमेशा १६८५३.९२५ ग्रीन चांदी देनेसे १००) रुपये मिलही

जांयगे। इस बातको कह कर मनुष्य ऐसा समझते हैं कि रुपये की मालियतमें कुछ फेर नहीं पड़ता। ये ऐसीही भूल करते हैं, जैसे कोई कहे कि एक बीघे ज़मीनके बराबर बीस बिस्वे होते हैं इस लिये ज़मीनका मोल सदा एकसा रहता है। अच्छा, १६८५३.९२५ ग्रीन चांदीके सौ रुपये टकसालसे मिलते हैं। इससे क्या हुआ ? इससे तो इतनाही सिद्ध होता है कि उतनी चांदीके, बराबर २ वजनके, सौ टुकड़े ही होते हैं। विशेष कुछ नहीं।

यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि क़ीमती धातुओंका मोलभी उन्हीं नियमोंसे निश्चित होता है जिन नियमोंसे दूसरे खनिज पदार्थोंका मोल स्थिर किया जाता है—अर्थात् खपती और संग्रहके बराबर होनेसे निश्चित किया जाता है। जैसे २ खपती बढ़ती है मोल ज्यादा होता जाता है। खपतीके बराबर संग्रह करना पड़ता है। उसके लिये नई नई खानोंसे उत्पादक ख़र्च ज्यादा करके माल निकाला जाता है अतएव क़ीमती धातुओंका मोल बढ़ जाता है। परन्तु जो थोड़े ख़र्च करनेसे बहुत माल निकल सके ऐसी खानें मिल गईं तो क़ीमती धातुओंका मोल कम हो जायगा। अमेरिकामें ऐसीही खाने निकल आईं। उनमें से, थोड़ासा ख़र्च करनेसे बहुतसा माल निकलने लगा, फल यह हुआ कि चांदीका भाव गिर गया। सन् १८४९ से १८५८ तक अमेरिकाकी खानोंसे १०००००) रुपये क़ीमतकी चांदी आती थी। सन् १८६१ से, वहांसे चांदीकी आय बढ़ने लगी। सन् १८७३ में ७१५०००००) रुपये की और १८८२ में तो ९३६०००००) रुपये की क़ीमतकी चांदी आई। और फिर

और २ जगहकी भी बढ़ी। इस चांदीकी बाढ़से, और-और भी कितनेही कारणोंसे चांदीका मोल घट गया। इस घटीसे हमारे देश भारतको बड़ी हानि हुई सो हम पहले बतला चुके हैं।

सोने और चांदीकी खपतीपर असर करनेवाले प्रसंग:— हम पहले कह चुके हैं कि किसी चीज़की खपती उसके मोलसे नियमित होती है। सिक्केके साथभी यही नियम काममें आयगा। किसी कामके चलानेके लिये जितना सोना चाहिए उससे २४—२५ गुनी चांदी चाहिए। किसी देशको कितने सिक्के—रुपये की ज़ुरूरत है, इस बातका आधार; सिक्केके उत्पादक ख़र्चपर और कितनी तेजीसे रुपया चक्कर लगाता है, इस बात पर है। सोने और चांदीका मुख्य उपयोग सिक्का बनानेमें होता है और ये धातु आभूषण आदि बनानेके काममेंभी आते हैं। किसी देशमें सोने चांदीकी कितनी खपती है अगर यह जानना हो तो पहले यह देखना चाहिए कि सोने चांदीका मोल क्या है? देशकी सम्पत्ति और जनसंख्या कितनी है? मालकी बिकरी कितनी बार होती है और किस-किस काममें सोना चांदी उठते हैं? इत्यादि। क्योंकि ऐसे-ऐसे कार्योंपर सोने चांदीकी खपतीका आधार है। हमने कहा है कि देशकी सम्पत्तिपर सिक्केकी खपतीका आधार है, इससे यह नहीं समझना चाहिए कि जिस देशमें, जितना सोने चांदीका चलन हो, वह देश उतनाही सम्पत्तिशाली है। किसी मनुष्यकी सम्पत्तिका अन्दाज़ इस बातसे नहीं लगाया जासकता कि उसके हाथसे कितना रुपया इधर-उधर होता है। बड़े-बड़े शहरोंमें बड़ी-बड़ी रक़मोंकी लेन-देन; हुंडी, चिक और नोटोंसे हो जाती है और रुपया तो

छोटे-छोटे कामों में, काम में लाया जाता है। इससे यह नहीं कहा जासकता कि जो शख्स जितना रुपया दे ले वही उसकी सम्पत्ति है, परन्तु यह जुरूर जान पड़ता है कि जो जितना ज्यादा सम्पत्तिशाली है, वह उतनाही ज्यादा रुपयोंको भी काममें लाता है। क्योंकि सम्पत्तिवाले ही के यहां नोकर-चाकर, गाड़ी-घोड़ा, आदिके फुटकर खर्चोंमें रुपया ज्यादा उठेगा।

जैसे एक मनुष्यकी वात है वैसे ही देशकी भी बात है। किसी देशकी सम्पत्ति जाननेका यह ठीक-ठीक साधन नहीं है कि उसमें कितना रुपया चलता फिरता है। परन्तु इतना ठीक है कि जिस देशमें सम्पत्ति और मनुष्यसंख्या ज्यादा होती है वहांपर रुपया भी ज्यादा फिरता है। उज्जैनकी सम्पत्ति और आबादीसे इंदोर की सम्पत्ति और आबादी ज्यादा हो तो यह निश्चय है कि उज्जैनसे इंदोरमें ज्यादा रुपया इधर उधर फिरेगा। परन्तु विलायतमें सम्पत्ति और आबादी ज्यादा बढ़नेपरभी—उस हिसाबसे जिस हिसाबसे कि सम्पत्ति और आबादी बढ़ी है—सिक्केकी लेन-देन नहीं बढ़ती। क्योंकि वहांपर सिक्केकी जगह चिक और नोट-या-ऐसेही और किसी साधनसे-लेन-देन हो जाती है। हमारे भारतमें बंबई-कलकत्ता जैसे बड़े शहरोंको छोड़कर और जगह प्रायः रुपयाही काममें लाया जाता है और प्रतिदिन हजारों लाखों रुपये इधरके उधर और उधरके इधर हो जाते है। विलायतमें अनाज बेचनेवाले किसान भी चिकसे काम चलाते हैं। ऐसा होनेके कारण वहां रुपया कम काममें आता है। इस विषयका विशेष वर्णन हम आगे चलकर करेंगे।

क़ीमती धातुओंकी खपतीका आधार और एक बातपर है, और वह यह है कि चीजें वाराफेरी कर कितनी बार विकती हैं। कल्पना करो कि एक कारीगरने एक कपड़ा वनाया और एक शहरके सोदागरको वेच दिया, उसने एक गांवके महाजनको वेचदिया और उसने किसी किसान को। इस तरह एकही कपड़ा तीन बार विका और तीन वार विकनेसे उस कपड़ेके लेन-देनमें तिगुनेसे ज्यादा सिक्का काममें आया। यदि किसान को वह कपड़ा कारीगरसे मिला होता तो एकही बार सिक्का काममें आता परन्तु उस कपड़ेके इधर-उधर फिरनेसे तिगुनेसे ज्यादा सिक्का व्यवहारमें आया। कल्पना करो कि उस कारीगरने १) रुपयेमें कपड़ा वेचा। शहरी महाजनने १-)में और गांवके महाजनने १≡)में। इस तरह उस कपड़ेके तीन बार विकनेके कारण ३।) सवातीन रुपयेको इधर-उधर होना पड़ा।

इस बातके समझानेकी कोई जुरूरत नहीं है कि आभूषणादिमें, सोने चांदीके कम ज्यादा उठनेसे उनकी खपतीपर क्या असर पड़ेगा, क्योंकि हम वतला चुके हैं कि और-और खनिज पदार्थोंकी तरह ही सोने चांदीका मोल निश्चित होता है। अतएव जो आभूषणादिमें सोने चांदी ज्यादा उठेंगे, और, अन्यान्य स्थितियोंमें कुछ फ़र्क न होगा—अर्थात् खानोंसे उत्पादक व्ययके हिसावसे वहुत ज्यादा माल न निकल पड़ा—तो उनकी खपती वढ़ेगी और मोल वढ़ जायगा।

खपती और संग्रहके बढ़नेसे सिक्केके मोलपर जो असर होता है उसे वतानेवाले उदाहरणः—खपती और संग्रहसे

सिक्केके मोलपर क्या प्रभाव पड़ता है, यह बात नीचे लिखे हुए उदाहरणोंसे साफ़ तोरपर समझमें आजायगी। कल्पना करो कि एक देश है। वहांपर हुंडी, चिक, नोट वग़ैरा नहीं चलते और रुपयोंसे ही व्यवहार चलता है। सोने चांदीका संग्रह बढ़ाया नहीं जासकता। चीज़ें दूनी पैदा होगईं और मनुष्यसंख्याभी बढ़गई। इस देशमें सिक्केका मोल बढ़ जायगा, क्योंकि वह तो जितना पहले था उतनाही रहेगा और उसके एवज़में दूनी चीज़ें मिलने लगेंगी अर्थात् चीज़ोंकी क़ीमत आधी रह जायगी। यह तो हुआ पहला उदाहरण। अब दूसरा उदाहरण लें। कल्पना करो कि किसी देशमें जनसंख्या, चीज़ोंकी उत्पत्ति और व्यापारमें कुछ घट-बढ़ नहीं हुई, वे वैसे-के-वैसे बने हुए हैं। सिक्केके सिवाय; हुंडी, पुर्जे, चिक, नोट आदि चलते नहीं है। और, सोने और चांदीकी खानें निकल आनेसे रुपया दूना होगया। ऐसी सूरतमें क्या होगा? रुपयेका मोल कम होगा? पहले जो काम एक रुपयेमें होता था अब उसके लिये दो रुपये देने पड़ेंगे। क्योंकि सिक्केका संग्रह बढ़जाने-और-और-और बातोंमें कोई फेर न पड़नेसे, चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ गई और रुपयोंका मोल घट गया। पहले उदाहरणसे यह सिद्ध होता है कि यदि सम्पत्ति बढ़े और उसीके बराबर देशमें चलता फिरता सिक्का न बढ़े तो सिक्केका मोल बढ़ जायगा, या, यों कहिए कि उसकी विनिमय शक्ति बढ़ जायगी, परन्तु चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ जाय तो उससे यह नहीं कहा जासकता कि देशकी जनसंख्या बढ़ी है, या, सम्पत्ति बढ़ी है।

इन दोनों प्रकारके उदाहरणोंमें हमने यह मान लिया है कि

चांदी और सोनेके खपती और संग्रहके सिवाय और सब स्थितियोंमें समानता बनी रही, परन्तु व्यवहारमें ऐसा नहीं होता है। सम्पत्ति और सिक्केके बढ़नेके साथही साथ, उसके होनेवाले प्रभावको रोकनेवालेभी कई एक कारण होते हैं, जिनके कारण हमेशा वैसा असर नहीं होता, जैसा कि हमने ऊपर बयान किया है। बल्कि ऐसा होता है कि जब सिक्केका मोल बढ़ता है तब उसका संग्रह बढ़नेकी तरकीबें होती हैं। जैसे-जैसे व्यापार बढ़ता है, वैसे-वैसे सिक्केकी जगह; हुंडी, पुर्जे, चिक, नोट वग़ैरा काममें लाये जाते हैं। इनकी उत्पत्तिही ऐसे कारणोंसे हुई है। इन्हींके कारण—ऊपर जो हमने उदाहरण दिया वैसे समयमेंभी—सिक्केके मोलमें व्यवहारमें बहुत फेर फार नहीं होता।

केलीफ़ोर्निया और आस्ट्रेलियामें सोना निकल आनेसे हुआ प्रभावः—हमने दूसरे उदाहरणमें सोचा था कि देशमें चलते फिरते सिक्केके एकाएक बढ़ जानेसे सम्पत्ति और मनुष्य-संख्यामें कुछ वृद्धि नहीं होती। सन् १८५० में आस्ट्रेलिया और केलीफ़ोर्नियामें ख़ूब सोना मिल जानेसे देशोंमें फिरता सिक्का बहुत बढ़ गया था। सन् १८५० से पहले १०००००००) रुपयेका सोना प्रतिवर्ष (सब ठौर मिलकर) पैदा होता था परन्तु १८५२—१८५७ तक पांच वर्षमें इतना सोना तो केवल आस्ट्रेलिया और केलीफ़ोर्नियामें पैदा होने लग गया। उस वक़्त बड़े बड़े अभिज्ञ आदमी सोचने लगे थे कि सोनेकी उत्पत्तिमें जो यह उन्नति हुई है इससे सोनेका मोल बहुत कम हो जायगा और सामान्य चीज़ोंकी क़ीमतें बहुत चढ़ जाँयगी। परन्तु उन लोगोंका यह अनुमान अभीतक पूरा नहीं पड़ा है। कितनेही

समयतक तो यह जान पड़ा कि सोनेकी बाढ़से चीज़ोंकी क़ीमत-पर कुछ असर पड़ाही नहीं। परन्तु बारीक निगाहसे देखनेपर मालूम हुआ कि १८५० की अपेक्षा सन् १८७० में सोनेका मोल $\frac{१५}{१००}$ कम हो गया। इतना होने पर भी यह कहा जासकता है कि सोनेकी बाढ़के हिसाबमें यह कमी कुछभी नहीं है। अब यह विचारना चाहिए कि सोनेकी बहुत बढ़ती होने पर भी मोलमें कमी नाममात्रकी क्यों हुई ? वैसीही कमी मोलमें भी क्यों न हुई जैसी उत्पत्तिमें बाढ़ हुई ? ऐसा होनेका कारण सोनेकी अक्षय्यता है। यद्यपि सोनेकी बढ़ती $\frac{३००}{१००}$ हुई परन्तु इससे उस सोनेमें जो संसारमें काममें आरहा था बहुतही कम बढ़ती हुई। १८५० के पहले कितना सोना संसारके व्यवहारमें चल रहा था इस बातके जाननेका कोई साधन नहीं है परन्तु प्रामाणिक पुरुषोंका कहना है कि ५,६००००००००) पांच अरब साठ करोड़ रुपयेका था*। इस सारे सोनेमें नया सोना प्रतिवर्ष $\frac{५\frac{१}{२}}{१००}$ से ज्यादा न बढ़ा। सोनेकी नई खाने निकलने बाद सारी दुनियाका सोना कहीं बीस वर्षमें जाकर दूना हुआ।

और सोना थोड़ेही वर्षों तक ज्यादा निकला। सन् १८५६ में ३२०००००००) बत्तीस करोड़ रुपयेका सोना निकला परन्तु

---

* सन् १८९४–९५ में संसारमें ७२००००००००) सात अरब बीस करोड़का सोना होगया और १९०० सनमें ८४७०००००००) आठ अरब सैंतालीस करोड़ का। इसमेंसे २५००००००००) दो अरब पचास लाखका कारीगरी और कलाकौशल के कामोंमें लगा (इस संख्याके देनेमें १०) दस रुपयेका पौंड माना है) स्टेटिस्टिकल सोसाईटीका मासिकपत्र, पृष्ठ ४२३ सितम्बर १९०१.

सन् १८६० में १८००००००० करोड़काही निकला। सन् १८८१ में २१,५०,००००० इक्कीस करोड़ पचास लाखका निकला[1]। ग़रज कि सोनेकी उत्पत्ति खूब हुई परन्तु मोल बहुत कम घटा इसका कारण-नीचे लिखे हुए कारणोंसे—व्यापार बहुत बढ़ गया और सोना उसमें लग गया, यह है।

(१) काम धंदोंमें, मनुष्योंके आने जानेमें और चीज़ोंके भेजने मंगवानेमें वाष्पयंत्र बड़ा भारी साधन हो गये और इनकी वजहसे सुधरे हुए देशोंका खूब व्यापार चमका।

(२) विलायतमें अप्रतिबद्ध व्यापारके होनेसे व्यापार एकदम आगे बढ़ा। सन् १८४८ में विलायतका निकास ६०००००००० रुपयेकी क़ीमतका था वह सन् १८६० में १३५००००००० की क़ीमतका होगया और १८८३ में २५००००००००) का हो गया[2]। इस तरह व्यापार बढ़ताही गया और इससे खूब लेन, देन हुई और बहुत कुछ-नये सोनेकी, इस लेन देनमें खपती हो गई।

(३) हमारे भारतमें रेलवे और बहुत कामोंमें विलायती

---

१ यह सोना निम्नलिखित एवरेजके लगभग बढ़ाः—

सन् १८८६—१८९०=२२६४००००००)
,, १८९१—१८९५=३१००००००००)
,, १८९६—१९००=५०४३२००००)
,, १९०४—१९०८=७७०००००००००)

(Gold) गोल्ड शब्द, इंसाइल्कोपीडिया ब्रिटेनिका ११ वां संस्करण.

२ सन् १९०० में यह संख्या २९११९१९९६० की हो गई और सन् १९०७ में ४२६०३५०८३० की। अमेरिकाकी निकास इसमें आगई। वहां की आयात इस सालकी ५५३८६५८५८० हुई।

पूंजी लगाई गई । उस २ कामको करनेवाले मज़दूरोंके लिये वहांसे करोड़ों रुपयोंकी चांदी यहांपर भेजी गई । यह चांदी, फ्रांस और कई देशोंमें चांदीके सिक्के चलते थे, उन्हें गलाकर इकट्ठी की गई और उन २ देशोंमें चांदीके सिक्केकी जगह सोनेके सिक्के चल गये । ऐसी गिनतीकी गई थी कि सिर्फ़ सात सालमें ४३००००००) रुपये इन कामोंमें विलातियोंने लगा दिये ।

(४) फ्रांस जर्मनी और दूसरे देशोंने भी चांदीके सिक्केकी एवज़ सोनेका सिक्का चलाया । इटली और युनाइटेडस्टेटमें कागज़ी रुपयेसे व्यवहार चलता था इन्होंने भी सिक्केसे लेन-देन करना शुरू किया । इस तरह सोनेकी खपती बढ़ी ।

बहुतसे विद्वानोंकी तो यह राय हैकि १८५० में जो सोना मिला था उसकी असर ऊपर बताये हुए कारणोंसे नष्ट होगई और १८७४ से १८८३ तक सोना बढ़नेके बजाय कम हुआ है अतएव उसका भाव बढ़कर चीज़ोंकी क़ीमत कम हो गई है । यह कहना उनका ठीक हो या न हो परन्तु इतनी बात तो सही है कि सोना बढ़ा और उसका मोल बहुत कम न हुआ इसके कारण ऊपर बताई हुई बातोंमें हैं । यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि नये सोनेके एकदम काममें लग जानेके जो कारण बताये हैं, उनका सम्बन्ध सोनेके मिलनेके साथ कुछ नहीं है, सोना न मिलता तोभी व्यापार तो बढ़ताही । अप्रतिबद्ध व्यापार होनेसे सम्पत्ति, जनसंख्या और पूर्वके साथ व्यापार बढ़ताही । सोनेके मिलनेसे कुछ ये बातें पैदा नहीं हुई थीं । व्यापार और जनसंख्या बढ़ती पर न होते, ऐसी हालतमें सोना निकल आता तो-उस देशके सिवाय जिसमें कि सोना निकला है-

किसी देशको लाभ न होता। और उस देशकोभी तब फ़ायदा होता जब सोनेका मोल न घटा होता। प्रोफेसर केयर्नसका कहना है कि आस्ट्रेलिया और केलीफ़ोर्नियाने अपना सोना देकर दूसरे देशोंसे जितनी और-और चीज़ें ली हैं उतनाही उन्हें लाभ हुआ है। दूसरा लाभ उन्हें यहभी हुआ है कि सोनेकी खानोंकी वजहसे वहुतसे मनुष्य वहां जा रहे हैं। विक्टोरिया नामक स्थानकी आवादी १८५१ से १८५७ तक ७७००० से ४१०००० हो गई। इस तरह शीघ्र आवादी वढ़नेसे अच्छे उपजाऊ स्थानोंकी खूब सुख सम्पत्ति वढ़ती है।

नया सोना मिलनेसे व्यापारियोंको वड़ा लाभ हुआ, क्योंकि व्यापार चमक उठनेसे उस वक्त इस वातकी वड़ी ही ज़रूरत थी सिक्केका संग्रह वढ़े। वैसेही समय सोना निकल आया और सिक्केका संग्रह वढ़ गया। यदि व्यापारकी मंदीके वक्त सोना निकला होता तो वड़ी मुश्किल हो जाती। लोगोंको भारी नुक़सान उठाना पड़ता। सोनेका मोल कम होजानेसे सिक्के संबन्धी करारोंमें वड़ी गड़वड़ मच जाती। कल्पना करो कि सिक्केका मोल इतना कम होगया कि अव चीज़ें दूने दामोंपर मिलती हैं। ऐसी सूरतमें पहले जिसको ५०) मिलते थे अव पचीसही मिले। अर्थात् पहले जिस चीज़को वह पचीसमें ख़रीद लेताथा और पचीस वचाकर और किसी कामके लिये रख लेता था अव उसे उसी चीज़के लिये ५०) ख़र्च करने पड़ेंगे। ऐसी सूरतमें यदि पचासकी जगह उसे १००) दिये जांय तवभी कोई फ़ायदा नहीं होता। किसी शख़्सने, किसीसे, एक लाख रुपया नक़्द, इस शर्तपर लिया कि १ सालके वाद दे दूंगा।

एक सालके बाद सिक्केके मोलमें कमी हो गई, इतनी कमी कि जितनी हमने ऊपर बयान की है। इसके परिणाममें क्या होगा ? रुपये देनेवालेको पचास हज़ारका नुकसान रहेगा। और लेनेवालेको पचास हज़ारका लाभ। व्यापारकी स्थिरताके समय सोना चांदीकी बाढ़ होनेसे ऐसी ही गड़बड़ हुआ करती है।

प्रश्न

(१) "सिक्केकी क़ीमत" शब्द व्यर्थ क्यों है ?

(२) सिक्केके मोलका क्या अर्थ है ? कई लोग समझते हैं कि सिक्केका मोल घटता बढ़ता नहीं है क्या यह बात सच है ? और ग़लत है तो किस तरह ?

(३) सिक्केको उसके मोलके विषयमें कौनसी श्रेणीकी चीज़ोंमें गिनोगे ?

(४) क़ीमती धातुओंका मोल किस तरह निश्चित किया जाता है ?

(५) सोने चांदीके मोलमें अर्थात् उनकी विनिमय शक्तिमें किन-किन कारणोंसे कमी होती है ?

(६) सोने और चांदीकी खपती बढ़ानेवाले क्या कारण है ?

(७) सिक्केका उपयोग किये बिना व्यापारमें भारी भारी रक़में कैसे दी ली जाती है ?

(८) देशकी सम्पत्ति और आबादीपर सिक्केकी खपतीका आधार कैसे है ?

(९) काममें आजानेके पहले चीज़ोंकी कई बार इधर-उधर बिकरी होते रहनेसे सिक्केकी खपती कैसे बढ़ती है ? उदाहरण देकर समझाओ

(१०) खपती बढ़नेसे सिक्केके मोलपर क्या असर होता है ? उदाहरण देकर बताओ

(११) संग्रह बढ़नेसे सिक्केके मोलपर क्या असर पड़ता है ? उदाहरण देकर बतलाओ

(१२) इन उदाहरणोंमें बताये हुए परिणाम व्यवहारमें हों तो उसके कारण क्या हैं और न हों तो उसके कारण क्या हैं ?

(१३) सोने और चांदीकी खपती बढ़नेसे होता हुआ असर किन कारणोंसे रुक जाता है ?

(१४) सोनेकी नई खानोंके मिल जानेसे सिक्केके मोलपर क्या प्रभाव पड़ा ?

(१५) सोनेके मोलमें उसके संग्रहके प्रमाणमें घटी न होनेके कारण बताओ और उन कारणोंका सोनेकी खपतीपर जो असर होता हो सो भी बताओ

(१६) सोनेकी नई खानोंके मिलनेसे विलायतकी आबादी और व्यापार बढ़े या क्या ?

(१७) सोनेकी बाढ़ जिस वक्त हुई उस वक्त सम्पत्ति और आबादी न बढ़ी होती तो उसका क्या परिणाम होता ?

विशेष प्रश्न

(१) कल्पना करो कि एक ऐसा द्वीप है जिसका किसी और देशके साथ व्यापार-सम्बन्ध नहीं है । अब एक धनकुबेरकी ऐसी इच्छा है कि उस द्वीपके रहनेवालोंको लाभ पहुंचावे । इस इच्छासे उसने वहांके निवासियोंको इतना रुपया देदिया कि हरेकके पास दूना रुपया हो गया । इस कामसे उस धनकुबेरकी इच्छा पूरी होगई या क्या ?

(२) कल्पना करो कि व्यापार और आबादी बढ़ती जाती है, तनख्वा लेनेवाले मज़दूरोंकी संख्या दूनी होगई, मालकी दूनी बिकरी होती है, और सिक्केका संग्रह उतनाही है जितना कि पहले था । ऐसी सूरतमें तनख्वा और चीज़ोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ेगा ?

(३) कल्पना करो कि दो जहाज़ है । एकमें सोना चांदी भरा हुआ है और दूसरेमें अनाज कपड़े आदि । इसके साथही यहभी निश्चित किया गया है कि एक जहाज़का नाश किया जाय । इन दोनों में से तुम कौनसे जहाज़को नाश करना पसंद करते हो ?

(४) विलायतमें कोयले और लोहेकी खानें न होकर सोनेकी खानें होतीं तो वहांकी सम्पत्ति बढ़ती या क्या ?

तीसरा भाग।

सम्पत्तिका विभाग।

विषयप्रवेश.

सम्पत्तिकी उत्पत्ति तीन कारणोंसे होती है; ज़मीन, परिश्रम और पूंजी: अतएव उसका विभागभी तीनही तरहसे होता है। ज़मीनका किराया, परिश्रमकी तनख्वा और पूंजीका नफ़ा। इन तीनोंका नाम; लगान, मज़दूरी और व्याज हैं। ज़मीनके मालिकको लगान मिलता है, मिहनत करनेवालेको मज़दूरी और पूंजीवालेको व्याज। अगले प्रकरणोंमें हम यह वतलांयगे कि इन तीनोंको, किस परिमाणमें सम्पत्ति वांटी जाती है और कैसे-कैसे प्रसंगोंमें एकमें कमी और दूसरेमें ज्यादती हो जाया करती है। जैसे, व्याज कम हो जाता है तो लगान क्यों बढ़ जाता है? इत्यादि विषय समझाये जांयगे। सम्पत्ति विभागके निश्चय करनेवाले नियम अच्छी तरह समझनेसे ऐसे-ऐसे अनेक मनोरञ्जक प्रश्नोंका उत्तर देना सहज हो जाता है।

लगान मज़दूरी और व्याज अलग-अलग देशोंमें अलग-अलग तरहसे बांटा जाता है:—विलायतमें, खेतीके धंदेमें, लगान, मज़दूरी और व्याज लेनेवाले तीनों जुदा जुदा होते हैं। हमारे भारतमें वहुतसी ज़मीनकी मालिक सरकार वनी हुई है, ऐसा वहां नहीं है। वहांपर पूंजीवाले ज़मींदारोंके पाससे ज़मीन ठेके लेते हैं और मज़दूरोंको रखकर खेती करवाते हैं। स्वीजरलेंड, नारवे और योरपके औरभी कितनेही देशोंमें, ज़मीनका मालिकही पूंजी

लगाकर खेती करता है। अर्थात् वहांपर किसानही ज़मीनका मालिक होता है और वह अपनीही पूंजी और मिहनतसे खेती करता है। ऐसी जगह किसानोंकी दशा वहुतही अच्छी होती है, क्योंकि उन्हें विश्वास होता है कि जितना परिश्रम और पूंजी मैं अपनी ज़मीनमें लगाऊंगा उतनाही लाभ मुझे पहुंचेगा। यद्यपि स्वीजरलेंड और नारवेमें ज़मीन बिल्कुल अच्छी नहीं है, परन्तु किसानोंकी मालिकीकी ज़मीन होनेसे उन्होंने बहुतही अच्छी बना ली है—ऐसी अच्छी कि अच्छी-से-अच्छी ज़मीन उसका मुक़ाबला नहीं कर सकती। वहांपर मामूलीसे मामूली किसानका मकानभी पक्का है। विलायतमें यह बात नहीं है। वहांपर ज़मीनका मालिक और है, पूंजीवाला और, और मज़दूरी करनेवाले किसान अलगही हैं। इससे वहांपर स्पर्धासे काम होता है। अतएव खेती अच्छी नहीं होपाती और किसानोंकी बुरी हालत है। पूंजीवाले पैसेको फंसाना नहीं चाहते, क्योंकि वे जानते हैं कि खेती अच्छी होगी तो पूंजी तो हमारी लगेगी और फ़ायदा—लगान बढ़ाकर—ज़मींदार उठा लेगा। हमारे भारतमें सरकार बहुतसी ज़मीनकी मालिक बनी हुई है और ज़मीनका लगान लेती हैं। बंगालमें पक्का बन्दोबस्त हो गया है। वहांपर यह निश्चित कर दिया गया है कि इससे ज्यादा महसूल न लिया जायगा। ऐसा होनेसे ज़मीनमें सुधार किया गया है, क्योंकि वहांपर लोगोंको विश्वास है कि जितना खर्च हम अपनी ज़मीनपर करेंगे लाभ हमें ही होगा सरकार उसमेंसे कुछ न ले सकेगी। इससे बंगालके ज़मींदार मालामाल हो गये हैं परन्तु ज़मीन हांकनेवालोंकी हालत वैसी अच्छी नहीं हैं। क्योंकि

स्वीजरलैंडकी तरह वहांपर पूंजीवाले और परिश्रम करनेवाले एक नहीं हैं। ज़मींदार अपनी ज़मीनको, थोड़ी-थोड़ी, किसानों को देते हैं। परन्तु किसान उस ज़मीनपर अच्छी मिहनत नहीं करते, क्योंकि इन्हें इस बातका भरोसा नहीं होता कि उस ज़मीनको हमेशा वेही बोहेंगे-जोतेंगे और उनके परिश्रमसे जो विशेष लाभ होगा सो उन्हें ही पहुंचेगा। वे जानते हैं कि उपज ज्यादा हो जानेसे ज़मींदार लगान ज्यादा बढ़ा देगा या उस किसानको ज़मीन दे देगा जो लगान ज्यादा देनेको तैयार हो जायगा। खेती करने-वाले किसानोंकी इस तरहकी तकलीफ़को दूर करनेके लिये सरकारने १८८५ ई० में "टेनन्सी एक्ट" पास किया है। इसमें किसानोंके दुःख दूर करनेके लिये बहुतसे स्थायी हक़ मुक़र्रर किये हैं और यहभी ठहराया है कि कोई ज़मींदार किसी किसानको योंही निकाल न सके। ज़मीनका लगान सदाके लिये एकसा स्थिर कर देना बहुत अच्छा हुआ है परन्तु "कई-एक अर्थशास्त्रियोंका कहना है कि इसमें बड़ी भारी भूल है। ज़मींदार खेतीको सुधारकर जो विशेष सम्पत्ति उत्पादन करे, उसका लाभ उसे मिलनाही चाहिए, नहीं तो वह वैसा करेगाही नहीं। परन्तु खेतीकी पैदाइशकी क़ीमतके बढ़नेसे जो लाभ ज़मीं-दारको हो उसमेंसे सरकारकोभी हिस्सा मिले तो ज़मींदारको 'हाय–तोबा' मचानेकी कोई ज़ुरूरत नहीं है। क्योंकि यह लाभ उसके पूंजी और परिश्रमसे नहीं हुआ है, अनायासही हुआ है। इस तरह अनायास होते हुए लाभमें से ज़मीनकी मालिक सरकारको भी विभाग मिले तो कुछ बुरा नहीं है। हमेशाके लिये लगान मुक़र्रर करते वक़्त ही यहभी ठहरा लिया जाय कि खेतीकी

पैदावारकी क़ीमत बढ़ जाय तो उसीके मुआफ़िक लगानभी बढ़ाया जायगा। ऐसी सूरतमें ज़मींदारपर कुछ सख़्ती नहीं होती और प्रजाको लाभ होता है, क्योंकि इस वक़्त अनाज वग़ैरा खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बहुत बढ़ गई है। यदि इसमें से सरकारको हिस्सा मिलता तो उतनाही कर लोगोंपरसे उठा दिया जासकता। मुम्बई प्रान्तमें, और, और-और प्रान्तोंमें लगान मुक़र्रर किया जाता है और तीस साल तक वैसाही रहता है। परन्तु इसमें ख़ास हानि यह है कि किसान ज़मीनमें पूंजी और परिश्रम लगाना नहीं चाहता। क्योंकि वह समझता है कि मेरे परिश्रम और पूंजीका लाभ हमेशा मुझे न मिलेगा। तीस वर्षके बाद औरही कोई उठावेगा। अतएव इस विषयमें ऐसा ठहराव किया जाय कि ज़मीनका लगान हमेशाके लिये ठहरा दिया जाय और खेतीकी पैदावारकी क़ीमतमें फेरफार हो तो लगानमेंभी उस साल फेरफार किया जाय। इससे किसानकोभी सुभीता हो और सरकारी हक़भी क़ायम रहे।

प्रश्न

(१) सम्पत्तिके कितने विभाग होते हैं ? उनके नाम क्या-क्या है ? और वे सम्पत्तिकी किस-किस उत्पादक शक्तिका पलटा है ?

(२) इन विभागोंके लेनेवाले हमेशा जुदा जुदा होते हैं या क्या ?

(३) अपनी मालिकी की ज़मीनमें खेती करनेवाले किसानोंकी और दूसरोंकी मालिकीकी ज़मीनमें खेती करने-

वालोंकी स्थिति (हालत)में क्या फ़रक होता है ? और उस फ़रकके होनेके क्या कारण हैं ?

(४) बंगालमें और भारतके और २ प्रान्तोंमें ज़मीनका लगान लेनेकी एकसी रीति है या क्या ? अगर अलग २ रीति है तो अच्छी कौनसी है । और इन रीतियोंका असर किसानोंकी हालतपर क्या पड़ा ।

पहला प्रकरण ।

लगान ।

लगानकी व्याख्याः–सम्पत्तिका जो विभाग ज़मीनके मालिकको मिलता है उसे लगान कहते हैं । यह लगान कहींपर रिवाज़के मुआफ़िक निश्चित होता है और कहींपर स्पर्धासे । जहांपर रिवाज़के मुआफ़िक लगान लगता है, वहां, पैदावारका अमुक हिस्सा, या, इतने रुपये बीघा लगान लगता है; और जहांपर स्पर्धासे लगान लगता है वहांपर, जो ज्यादा लगान देता है उसेही ज़मीन मिलती है । विलायतमें ऐसाही होता है । वहांपर ज़मीनदार और ज़मीनको ठेके लेनेवालोंमें बात चीत होती है और जो ठेकेवाला ज्यादा रुपये देता है उसे ही ज़मीन मिलती है ।

स्पर्धासे नियमित होनेवाला लगान किन २ मुख्य नियमोंके अनुकूल निश्चित होता है हम पहले इसी बातको समझायंगे । और इसके बाद रिवाज़से निश्चित होनेवाली रीतियोंका संक्षिप्त वर्णन करेंगे । ज़मीन, जो इस समय उसके मालिक बने हुए हैं

उन्होंने, या उनके बड़े-बूढ़ोंने, या मनुष्योंने, पैदा नहीं की है फिर वे ज़मीनके मालिक कैसे कहे जासकते हैं। इस बातका विचार करना अर्थशास्त्रका विषय नहीं है। इसमें यह मान लेना चाहिए कि जितनी ज़मीन जिसके अधिकारमें है वह उसका मालिक है। इस मान लेनेपर ही इस प्रकरणमें किये हुए अनुमानोंका आधार है। लगान, ज़मीनको आधीन करनेका फल है। ज़मीन, दुनियामें जितनी है उतनीही रहेगी। उसका संग्रह बढ़ नहीं सकता परन्तु खपती बढ़ती जाती है। अतएव ज़मींदार उसका लगान पैदा करते हैं। इस विषयमें विद्वान् मिलका कहना है कि " ज़मींदार लगान लेते हैं उसका कारण यह है कि जमीनकी चाहना सबको होती है और वह ज़मींदारोंके सिवाय और किसीके पास नहीं मिल सकती. "

लगानका स्वरूपः—खेती करनेकी ज़मीनका लगान दो बातोंपर आधार रखता है (१) ज़मीनकी उपजके ऊपर (२) ज़मीनके सुभीतेकी जगह होनेपर। इन दोनों बातोंमेंसे एकभी बात नहो तो उस ज़मीनका लगान कोई न देगा। अगर ज़मीन ऐसी हो कि जिसमें लगाई हुई पूंजी और मिहनतका भी पूरा २ बदला न मिले तो उसे कोई किरायेपर न लेगा और न हांके-जोतेगा इसी तरह ज़मीन बेसुभीतेकी जगहपर होगी तो उसका लगान देनेकोभी कोई खड़ा न रहेगा।

किसी भी देशमें सारी ज़मीन एकसी नहीं होती। एकही देशमें उपजाऊपन और सुविधा अलग २ ज़मीनमें कम या ज़्यादा होता है। ऐसी सूरतमें ज़्यादा उत्पादकशक्ति (उपजाऊपन और सुविधा) वाली ज़मीनका लगान ज़्यादा मिलता है

और कम उत्पादकशक्तिवालीका कम—यदि स्पर्धासे लगान मुक़र्रर होता हो। कल्पना कीजिए कि दो खेत हैं। एकमें उत्पादकशक्ति ज्यादा है और एकमें कम। परिश्रम और पूंजीका पहलेमें ज्यादा बदला मिलता है और दूसरेमें कम। पहलेका उतनाही ज्यादा लगान मिल जायगा जितना उसमें बदला ज्यादा मिलता है। इस बातमें कुछ सन्देह नहीं है कि कम उत्पादक खेतकी अपेक्षा ज्यादा उत्पादक खेतका लगान ज्यादा मुक़र्रर होगा परन्तु विचार यह करना है कि उस दूसरे कम उत्पादक खेतका लगान ही कौनसी परिपाटीसे स्थिर किया जाता है? इन २ बातोंको समझनेके लिये अर्थशास्त्री रिकार्डोंके लगान सम्बन्धी सिद्धान्तोंके जाननेकी ज़ुरूरत है।

रिकार्डोंके लगान सम्बन्धी सिद्धान्तः—ऊपर जो कम उत्पादक खेतका ज़िक्र आया है उसका लगान जाननेके लिये हमें एक ऐसे खेतका दृष्टान्त लेना पड़ेगा जिसकी ज़मीन सबसे ख़राब है और जिसका लगान नाम मात्रको उत्पन्न होता है। इस नाम मात्र लगानवाले खेतसे जितनी उस कम उत्पादकशक्तिवाले खेतकी उत्पादकशक्ति ज्यादा है और उस विशेष मालकी जो क़ीमत है वही उसका लगान है। रिकार्डोंके सिद्धान्तका यही सार है। अब हम इसे सिद्ध करके बतलाते हैं। हरेक देशमें ऐसी ज़मीन होती है कि वह मिहनत और पूंजीके बदलेके सिवाय कुछ नहीं देती। ऐसी ज़मीन यातो ख़राब होती है या बहुतही बेमौक़े पर होती है। ऐसी ज़मीनका कुछ लगान नहीं पैदा हो सकता। क्योंकि उसकी उपज काम करनेवालों और पूंजी लगानेवालोंकोही बदला देनेमें पूरी

हो जाती है। अगर ऐसी ज़मीनपर लगानभी देना पड़ता होगा तो मिहनत और पूंजीके बदलेमें कमी होगी। इसका परिणाम यह होगा कि यह ज़मीनही पड़त रह जायगी क्योंकि कोई मनुष्य अपनी पूंजीको ऐसे काममें नहीं फंसायगा कि जिसमें उसे साधारण बदलाभी न मिले और न ऐसे काममें कोई परिश्रमही करेगा।

खेती होनेकी सीमाः—खेती होनेके काममें आती हुई ज़मीन जिसका—कम उत्पादक होनेके कारण—कुछ लगान नहीं आता इसकी अपेक्षा और २ ज़मीनमें जितनी ज्यादा पैदा होगी उतनाही ज्यादा लगान आयगा। रिकार्डोका मत है कि यही ज़मीन जिसका कुछ लगान नहीं आता खेती होनेकी सीमापर है। क्योंकि यदि इससे भी कोई ज़मीन कम उत्पादक होगी तो—चाहे लगान न भी देना पड़े—उससे साधारणतया परिश्रम और पूंजीका बदलाभी न मिलेगा परन्तु यह बात उस समयकी है जिस समय खेतीकी पैदाइशसे इस उत्पन्न हुई चीज़ोंका भाव एकसा रहे—उसमें कुछ घट बढ़ न हो।

खेती होनेकी सीमापर आई हुई ज़मीन उत्पादकशक्तिमें किस दरजेपर है इसी बातपर खेतीके करनेसे उत्पन्न हुई चीज़ोंकी क़ीमतका आधार है। यह बात तो साफ़ही है कि अलग २ समय और अलग २ देशमें खेती होनेकी सीमापर आई हुई ज़मीनकी उत्पादकशक्तिमें बहुत कुछ फेरफार हो जाता है। खेती बाड़ीकी पैदाइशका मंहगेसे महंगा हिस्सा तैयार करनेमें जो ख़र्च होता है उस परसे खेतीसे उत्पन्न हुई वस्तुओंकी क़ीमत ठहराई जाती है। अर्थात् खेती होनेकी सीमापर आई हुई ज़मीन

उत्पादकशक्तिके विषयमें किस दरजेकी है इसी बातसे खेतीकी चीज़ोंकी क़ीमत स्थिर की जाती है। अब दो प्रश्न खड़े होते हैं। अव्वल तो यह कि खेती होनेकी सीमापर आई हुई ज़मीन उत्पादकशक्तिके विषयमें किस दरजेकी है यह कैसे जाना जाय और दूसरे यह कि खेती होनेकी सीमापर आई हुई ज़मीनका, यदि वह किसी दूसरी जगह हो तो बहुत अच्छा लगान आसकता है। इसका क्या कारण है? खेती बाड़ीकी पैदाइशकी क़ीमतके सम्बन्धमें विचार करनेसे इन दोनों प्रश्नोंका उत्तर मिल सकेगा। कौनसी ज़मीन खेती होनेकी सीमापर है इसका विचार प्रत्येक देशकी आवश्यकता और उसे पूरा करनेके उसके पास साधन क्या है इस बातपर है। कल्पना करो कि एक देश ऐसा है कि वहां पर अनाज बाहरसे नहीं लाया जासकता। अगर इस देशकी जनसंख्या बढ़ेगी तो इसे उस ज़मीनको भी बोना पड़ेगा जो पहले नहीं बोई जाती थी और जिसमें खूब अनाज नहीं पैदा होता था। ऐसा होनाही खेती होनेकी सीमाका उतर जाना है। खेती होनेकी सीमाके उतर जानेसे ज़मीनका लगान बढ़ जायगा। अब जो अनाज दूसरे देशोंसे आसकता हो तो बस्तीके बढ़नेसे भी खेती होनेकी सीमाको उतारे बिनाही अनाजकी बढ़ी हुई खपतीको बराबर किया जासकता है। विलायतमें १८७४ से १८८४ तक ऐसाही हुआ। वहांपर बस्ती बढ़नेसे बढ़ी हुई अनाजकी खपती, और देशोंसे सुगमता पूर्वक अनाज आजानेसे पूरी की गई। इस तरह सुगमतापूर्वक अनाज आजानेसे उसकी क़ीमत कम होगई। और खेती होनेकी सीमा बढ़ गई। इस बातका ज्ञान तब हुआ जब

कितनीही ज़मीन पड़त रह गई और कितनीकाही लगान कम हो गया ।

जहां खेतीकी पैदाइश सस्ती होती है वहां खेती होनेकी सीमा बहुत ऊंची होती है और वहांपर खूब फल देनेवाली ज़मीनको बोनाही निभ सकता है और ज्यों ज्यों खेतीकी पैदावार महँगी होती है त्यों त्यों खेती होनेकी सीमा उतरती जाती है क्योंकि पैदावारकी क़ीमतके बढ़ जानेसे कम पैदावारकी ज़मीनके बोनेमेंभी फ़ायदा रहता है । इस बातको समझानेके लिये हम एक उदाहारण देते हैं । कल्पना करोकि खेतीकी पैदावारकी की क़ीमत ½ बढ़ गई । इससे किसानोंको सामान्य लाभसे बहुत ज्यादा लाभ होगा । परन्तु इस लाभको और २ लोगभी लेना चाहेंगे इससे यह लाभ किसानोंको बहुत समय तक न मिलेगा । ज़मीनका लगान बढ़ जायगा और पहले जो ज़मीन खेती होनेकी सीमापर थी (जिसका कुछ लगान नहीं था) वह भी लगान देने लगेगी और खेती होनेकी सीमापर वह ज़मीन आजायगी जिसमें लगान न देनेपर भी साधारण लाभ नहीं होता था अतएव पड़त थी—अर्थात् वहभी हँकने लगेगी । यों खेती होनेकी सीमा नीची उतरेगी ।

मनुष्यसंख्या बढ़नेसे खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ती है:—यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ती है तभी खेती होनेकी सीमा नीची उतरती है क्योंकि खेती होनेकी सीमासे नीचेकी ज़मीनका बोना तभी निभ सकता है जब पैदावारके टके अच्छे आवें । पहले हम बतला चुके हैं कि पैदावारकी क़ीमत उसकी खपती

बढ़ेगी तो बढ़ेगी। खपती तभी बढ़ेगी जब मनुष्यसंख्या बढ़ेगी। मनुष्यसंख्या बढ़नेसे अनाजकी खपती बढ़नीही चाहिए और खपतीके बढ़नेसे पैदावारकी क़ीमत बढ़ेगीही। पैदावारकी क़ीमत बढ़नेसे खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीनसे कम उत्पादक ज़मीनमें भी लाभ होने लगेगा अतएव खेती होनेकी सीमा वह न रहकर उतरेहीगी।

मनुष्यसंख्या बढ़नेसे लगान दो तरह बढ़ता है। एक तो खेतीकी पैदावारकी खपती बढ़नेसे उसकी क़ीमत बढ़ जानेसे और दूसरे खेती होनेकी सीमाके नीचे उतर जानेसे ज़मीनके मालिकको पहलेकी अपेक्षा ज़्यादा लगान देनेसे। क्योंकि हम पहले लगानकी व्याख्या करचुके हैं कि लगान, अमुक ज़मीनकी उत्पादकशक्ति और खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीनकी उत्पादकशक्तिके अन्तरका मोल है। अर्थात् खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीनमें जो पैदावार होती है उससे जितनी ज़्यादा क़ीमतकी पैदावार दूसरी ज़मीनमें होती है वही उस ज़मीनका लगान है। जब खेती होनेकी सीमा नीचे उतरती जाती है तब यह अन्तर बढ़ता जाता है और ज्यों ज्यों अन्तर बढ़ता जाता है त्यों-त्यों ज़मीनोंका लगान बढ़ता जाता है। कल्पना करोकि एक खेतकी उत्पादकशक्तिकी क़ीमत १००) रुपये हैं और खेतीकी सीमापर आये हुए खेतकी उत्पादक शक्तिकी कीमत ३०) ऐसी सूरतमें १००) वाले खेतका लगान ७०) होंगे। अब सोचो कि खेती होनेकी सीमा नीची उतर गई। ३०) की जगह २०) रह गई। ऐसी सूरतमें १००) वाले खेतका लगान ७०) से बढ़कर ८०) हो जायगा।

रिकार्डोके सिद्धान्तका सारः—ज़मीनका लगान वह है कि जो अन्तर उसकी उत्पादकशक्ति और खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीनकी उत्पादकशक्तिमें है। अतएव किसीभी कारणसे खेतीकी सीमा नीची उतरेगी तो उतनाही लगान बढ़ जायगा जितना अन्तर बढ़ा होगा और खेतीकी सीमा ऊपर चढ़ जायगी तो उतनाही लगान कम हो जायगा जितना अन्तर कम हुआ होगा।

मनुष्यसंख्याका बढ़ना प्रजाके अमन-चैनका चिह्न नहीं हैः—रिकार्डोका लगान संबंधी सिद्धान्त अच्छी तरह समझ लिया जाय तो अर्थशास्त्रके बहुतसे जटिल प्रश्न हल किये जासकते हैं। यह सिद्धान्त और पहले भागमें कहा हुआ—वस्तुओंकी खपती कुछ मिहनतकी खपती नहीं है—सिद्धान्त, अच्छी तरह समझ लेनेपर बहुतसे मनुष्य अपने भूलभरे विचारोंको समझ जांयगे और भविष्यतमें ऐसी भूलें न होंगी। जैसेः—प्रायः हम मनुष्योंको ऐसा कहते हुए सुनते हैं और अख़बारोंमें पढ़तेभी हैं कि कौन देश कैसा अमन-चैनमें हैं इस बातका अनुमान उसकी जनसंख्यापरसे हो जायगा। इस पर से यह जान पड़ता है कि ये मनुष्य या ये अख़बार ऐसा मानते हैं कि जिस देशकी जनसंख्या जितनी ज्यादा है वह देश उतनाही ज्यादा अमन-चैनसे है। इस तरहका कहना आस्ट्रेलिया जैसे देशके लिये ठीक हो सकता है क्योंकि वहांकी ज़मीन बहुतही उपजाऊ है। अतएव जीवनके लिये जो आवश्यक वस्तुएं हैं वहांपर सस्ती मिल सकती हैं। ऐसे देशमें मनुष्यसंख्या बढ़नेसे देशकी सम्पत्ति बढ़ती है क्योंकि देशकी सम्पत्ति बढ़नेके लिये

परिश्रममें वृद्धि होनी चाहिए। परन्तु हमारे देशकी यह बात नहीं है। यहां पर जनसंख्या जितनी चाहिए उससे ज्यादा बढ़ गई है। और जितनी जनसंख्या बढ़ी उतनी सम्पत्ति नहीं बढ़ी। प्रजाके चित्तसे सुखकी आशा कम होती जाती है। बहुतसे ग़रीब तो बिचारे बड़े परिश्रमसेभी अपना पेट अच्छी तरह नहीं भर पाते। कुछ इकट्ठा किया हुआ धन होता नहीं है। एक फ़सलभी जो ठीक नहीं होती तो खाने पीनेके सांसे पड़ जाते हैं। तंगीके वक़्तमें ऐश आरामकी चीज़ें लेना बंद करके आवश्यक चीज़ें लेकर अपना गुज़रान करें ऐसा होही कैसे? वे लोग कुछ ऐश आराम में हों तो ऐसा करें भी। विचारे अच्छे समयमेंभी जब कठिनतासे अपना वक़्त काट रहे हों तब फिर ज़रा ख़राब वक़्त आनेपर अगर भूखों न मरें तो और करें क्या? | अब इससे यह सिद्ध हुआकि जिस देशकी ऐसी हालत हो उस देशमें जनसंख्याका बढ़ना कुछ अमन-चैनकी निशानी नहीं है।

लगान देना पड़े इससे खेतीकी पैदावारकी क़ीमत बढ़ गई ऐसा नहीं समझा जासकताः—रिकार्डोके सिद्धान्त-परसे एक आवश्यक अनुमान किया गया है कि खेतीकी पैदा-वारकी क़ीमतमें लगानका समावेश नहीं होता अर्थात् सारी ज़मीनका लगान माफ़ कर दिया जाय तबभी खेतीकी पैदावार सस्ती न होगी। यह बात थोड़ासा विचार करनेसे साफ़ हो जायगी। हम पहले बतलाचुके हैं कि हरेक देशमें सदा ऐसी ज़मीनभी रहती है कि जो खेती होनेकी सीमापर होती है और जिसका कुछ लगान नहीं होता। कल्पना करोकि सब

ज़मीनका लगान माफ़ हो गया। ऐसा होनेपर जमीनदारोंको हानि अवश्य होगी परन्तु खेतीकी पैदावारकी खपतीमें फेरफार न होगा। अनाज जितना पहले उठता था अबभी उठेगा। ज़मीन पहले जितनी बोई जाती थी अबभी बोनी पड़ेगी। अर्थात् वह ज़मीनभी बोनीही पड़ेगी जो पहले खेती होनेकी सीमापरथी और जिसका कुछ लगान नहीं दिया जाता था क्योंकि अनाज तो उतना ही अबभी चाहिए। परन्तु लगान माफ़ होजाने से ज़मीनकी पैदावार सस्ती हो जाय तो खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीन पड़त रह जायगी क्योंकि किसी मनुष्यको साधारण लाभ भी न हो तो वह उस काममें न पूंजी लगायगा, न श्रमही करेगा। परन्तु खेतीपर आई हुई ज़मीन उस वक्त तक पड़त नहीं रहेगी जबतक अनाजकी खपती कम न हो जाय। यदि अनाजकी खपती कम न होगी तो वैसी ज़मीन हँकेहीगी और और न खेतीकी पैदावारकी क़ीमत घटेगी। इससे सिद्ध हुआकि लगान माफ़ करदेने पर भी खेतीकी पैदावारकी क़ीमत नहीं घट सकती।

स्पर्धासे मुक़र्रर हुआ जो ज़मीनका लगान है (काश्त होती हुई सबसे ख़राब जमीनकी पैदावारसे जितनी ज़्यादा पैदावार हो) वह स्पर्धा सिद्ध लगान है।

रिकार्डोके सिद्धान्तके विरुद्ध बहुतसे मनुष्य दलील करते हैं। उनमेंसे एक यह है कि ऐसी हकत ज़मीन होती ही नहीं है कि जिसका कुछ-न-कुछ लगान न देना पड़ता हो क्योंकि हरेक किसानको लगान देनाही पड़ता है। निस्सन्देह यह बात सही है कि ऐसा कोई खेत नहीं मिल सकता कि जिसकी सारी

ज़मीन ऐसी अनुत्पादक हो कि जिसका कुछ लगान न पैदा हो, परन्तु कितनेही खेतोंके कुछ विभागकी ज़मीन ऐसीभी पाई जातीही है। यद्यपि लगान जितने बीघेका खेत हो उतनेही बीघेका गिना जाता है, तथापि वह लगान, अनुत्पादक विभागको छोड़ देनेपर भी बाक़ी रहे खेतमें पैदा होजायगा। अर्थात् उस अनुत्पादक विभागको अलग करदें तोभी बाक़ी रहे खेतका उतनाही लगान मिल जायगा। रिकार्डोके सिद्धान्तके विरुद्ध दूसरी आपत्ति यह खड़ी कीजाती है कि ज़मीनके मालिक और किसान कुछ इस सिद्धान्तको जानते नहीं है। वे तो इस सिद्धान्तको जाने विनाही लगानका निश्चय कर लेते हैं। अतएव ऐसे सिद्धान्तकी आवश्यकताही क्या है। परन्तु यह कहना ऐसाही है जैसे कोई कहेकि "बहुतसे मनुष्य इस बातको नहीं जानते कि शरीरकी रचना किस प्रकारकी है और अपनी उम्रभर शरीरसे काम लेते हैं अतएव शारीरिक शास्त्र व्यर्थ है।" मनुष्य अन्न पचनेकी क्रिया कैसे होती है? इस विषयमें कुछ नहीं जानते और उन्हें जो चीज़ मुआफ़िक पड़ती है उसे खानेके लिये ढूंढ लेते हैं; ऐसेही रिकार्डोके सिद्धान्तोंको स्वप्नमेंभी न जाननेवाले ज़मीनके मालिक और किसान स्पर्धा सिद्ध लगान ठहरा लेते हैं

अभीतक जो कुछ कहा गया वह स्पर्धासे लगान मुक़र्रर होता है ऐसा मानकर कहा गया है। इंग्लेंड और स्काटलेंड सब ठौर स्पर्धासे लगान मुक़र्रर होता है। परन्तु और २ देशोंमें और हमारे देशमें बहुत जगह लगान रिवाज़से मुक़र्रर होता है। देशी राज्योंमें बहुत जगह रिवाज़ से लगान ठहराया जाता है। राजा किसानोंकी पैदावारमें से अमुक अंश लेता है। यूरोपमेंभी

कई जगह ऐसाही है । पहले यहांपर छट्ठा हिस्सा रईस लेताथा इसीसे राजाका नाम "षष्ठांशवृत्ति" भी है । ज़मीनका मालिक जहां आधा हिस्सा लेताहै उस जगह अधबटाईके नामसे खेती होती है । पूंजी अर्थात् खाद बीज बैल वग़ैरा जमींदारके हों या किसानके इस विषयमें अलग २ जगह अलग २ रिवाज़ होता है । जहां पर इसतरह (चाहेजैसे रीत रिवाज़के मुआफ़िक) सम्पत्तिका विभाग होता है उसके बारेमें अर्थ-शास्त्र कुछ नियम नहीं मुक़र्रर करता ।

इसतरह अंश विभागकी रीतसे काम करनेमें **किसान**—अपनी मालिकीकी ज़मीन जितना नहीं तोभी—परिश्रम करता है क्योंकि वह जानता है जितनी पैदावार ज्यादा होगी उतनाही मुझे ज्यादा फ़ायदा पहुंचेगा । जैसा स्पर्धासिद्ध लगानकी ज़मीनमें किसान ज्यादा लक्ष नहीं देता वैसी इसकी बात नहीं है । परन्तु अपनी मालिकीकी ज़मीन में जितना ध्यान देता है उतना इसमें नहीं देता क्योंकि वह समझता है कि मेरे विशेष परिश्रमका फल मुझे तो अमुक अंशमेंही मिलेगा और ज़मींदार मुफ़्तमें बाक़ीका लाभ पाजायगा । इस प्रकरणमें हमने लगानका विचार किया अर्थात् ज़मीनवालेके लाभकी बंटाईका विचार किया अगले प्रकरणमें मज़दूरीका—परिश्रमके विभागका विचार करेंगे ।

प्रश्न ।

(१) लगान किसे कहते हैं ? समझाओकि लगान स्पर्धासे मुक़र्रर होता है इसका क्या अर्थ है ?

(२) ज़मींदारोंको किन २ कारणोंसे लगान मिलता है ?

(३) जिस ज़मीनका लगान आवे उसमें कौनसे दो गुण होने चाहिए ?

(४) अमुक ज़मीनका लगान किस बातसे निश्चित होता है ?

(५) "खेती होनेकी सीमा" किसे कहते हैं ?

(६) खेती होनेकी सीमा कहांपर होनी चाहिए और वह कैसे ठहराई जाती है ?

(७) खेतीकी पैदावारकी क़ीमतमें फेरफार होनेसे खेती होनेकी सीमामें किस तरह फेरफार होता है ? उदाहरण देकर बताओ

(८) खेतीकी पैदावारकी क़ीमत कैसे ठहराई जाती है ?

(९) खेती होनेकी सीमाके नीचे उतरनेसे लगान, कौनसे दो प्रकारसे बढ़ता है ?

(१०) संक्षेपमें रिकार्डोके लगान विषयक सिद्धान्त बताओ.

(११) थोड़ी मज़दूरीसे हमेशा किसान और ज़मीनदारको फ़ायदा नहीं होता इस बातको समझाओ.

(१२) आस्ट्रेलिया जैसे देशके अमन-चैनपर मनुष्य-संख्याके बढ़नेसे क्या असर होता है ?

(१३) भारत जैसे देशपर जनसंख्याके बढ़नेसे अमन-चैन के सम्बन्धमें क्या असर होता है ?

(१४) लगान खेतीकी पैदावारकी क़ीमतका हिस्सा नहीं है यह बात बतलाओ

(१५) लगान क्या सदा स्पर्धासे ठहराया जाता है ?

विशेष प्रश्न.

(१) किसान स्पर्धासिद्ध लगान देता हो तो ज़मीनके उत्पादक या अनुत्पादक होनेका किसानको कुछ फ़र्क पड़ेगा?

(२) विलायत जैसे देशमें १०० चौरस माईल उपजाऊ ज़मीनके हकत होनेसे खेतीकी पैदावारकी क़ीमतपर क्या असर पड़ेगा ?

(३) वह असर हमेशा क़ायम रहेगा या क्या ?

(४) अगर तुम किसान होना पसन्द करो तो स्पर्धासिद्ध लगान देना चाहोगे या बंटाई के रिवाज़को पसन्द करोगे ?

(५) सारे हिन्दुस्थानमें किसानों को लगान माफ़ कर दिया जाय तो अनाज सस्ता हो जायगा या क्या ?

(६) हिन्दुस्थानमें बहुत जगह किसान सरकारको लगान देते हैं उसकी जगह बंगाले के मुआफ़िक खानगी ज़मींदारों को लगान देना पड़े तो देशकी सामान्य सम्पत्तिपर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

दूसरा प्रकरण।

परिश्रमकी तनख्वा।

सम्पत्तिका जो हिस्सा मिहनत करनेवालेको मिलता है उसका नाम तनख्वा है। तनख्वा पूंजीमेंसे दी जाती है इसके विरुद्ध कितनेही मनुष्य आपत्ति उठाते हैं। इस विषयमें हम पहले कह चुके हैं। वास्तवमें यह बात याद रखने लायक़ है कि मिहनत और

पूंजी मिलकर जो कुछ पैदा करते हैं उसके मोलमेंसेही तनख्वा और लाभ होते हैं परन्तु पैदा की हुई चीज़ बाज़ारमें पहुंच जाय उस समयतक पूंजीवाला धीरज रख सकता है और वर्तमान स्थितिके मुआफ़िक प्राय: कारीगर धीरज नहीं रख सकता। इससे पैदा हुई चीज़मेंसे कारीगरको मिलनेवाले विभागका मोल, पूंजीवाला कारीगरोंको रोज़ाना, या माहवार, या जैसे ठहर जाय, तनख्वाके रूपमें दे देता है। ऐसा होनेसे तनख्वा पूंजीमेंसे दी जाती है और वह उत्पादक ख़र्चेका एक हिस्सा समझी जाती है।

स्पर्धासे मुक़र्रर हुई तनख्वा:—लगानकी तरह तनख्वाभी रिवाज़से या स्पर्धासे मुक़र्रर होती है। हमारे देशमें बहुतसे कामोंमें तनख्वा रिवाज़से मुक़र्रर होती है। सिलावट, सुतार, दरजी वग़ैरह कारीगरोंका रोज़ाना (नितमजूरी) मुक़र्रर होता है। उसमें प्राय: कमीबेशी नहीं होती। जिस जगह इस तरहकी रीत जारी हो वहांके लिये हम कोई नियम नहीं बतला सकते। परन्तु जहांपर मनुष्य नौकरी करते हैं या फ़ुटकर मज़दूरी करते हैं वहांपर तनख्वा स्पर्धासे ठहरती है। स्पर्धासे मुक़र्रर होते हुए नियम—जिनका बयान हम करनेवाले हैं—वैसेही लोगोंके मुतल्लिक होते हैं, तथापि इतनी बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि ये नियम प्रचलित रीत-रिवाज़ोंके कारण पूरा २ अपना प्रभाव नहीं डालते। जहांपर स्पर्धासे काम होता है वहांपर काम करनेवालों और काम करानेवालोंमें अमुक चीज़के बेचनेवालों और ख़रीदनेवालोंका सम्बन्ध होता है। काम करानेवालोंको मिहनतके ख़रीदनेकी ज़ुरूरत होती है और काम

करनेवालोंको बेचनेकी। काम करानेवाले इस बातका प्रयत्न करेंगेकि जैसे बने वैसे मिहनतके दाम कम देने पड़ें परन्तु वे मिहनतको ख़रीदनेके लिये भीतरही भीतर स्पर्धा करेंगे। एक कहेगा "मेरा काम हो जाय" दूसरा कहेगा "मेरा" तीसरा कहेगा "मेरा" इस तरह इनकी आपसकी स्पर्धा बढ़ेगी और इसके परिणाममें मिहनतकी क़ीमत बढ़ जायगी अर्थात् तनख्वा बढ़ जायगी। कल्पना करोकि व्यापार ख़ूब तेज़ीपर चल रहा है। मिहनतकी खपती ख़ूब बढ़ी हुई है। ऐसी सूरतमें काम करानेवाले ज्यादा तनख्वा देकरभी काम करनेवालोंको अपने यहां रक्खेंगे और नफ़ा उठांयगे। इसी तरह काम करनेवाले यह चाहेंगे कि जैसे बने वैसे मिहनतके दाम ज्यादा मिलें परन्तु इनकी आपसकी स्पर्धाके कारण मज़दूरीका भाव घट जायगा। कल्पना करोकि कहीं अमुक काम करनेकी आवश्यकता है। उसके लिये पांच उम्मीदवार हैं। इनमें न कोई घटकर है न कोई बढ़कर। पांचों एकसे होशियार हैं। पांचोंमें स्पर्धाभी हैं। हरेक चाहता है कि मैं काम करने लग जाऊं। ऐसी सूरतमें जो सबसे कम तनख्वा लेगा उसीको काम मिलेगा। अब इससे उलटा उदाहरण देखिए। कल्पना करोकि कारीगर एकही है और कामवाले पांच। ऐसी सूरतमें जो सबसे ज्यादा तनख्वा देगा उसीके यहां कारीगर काम करेगा। जिन देशोंमें स्पर्धासे तनख्वा मुक़र्रर होती है वहांपरभी कुछ सब प्रकारके कारीगरोंमें स्पर्धा नहीं होती क्योंकि स्पर्धा प्रायः एकही काम करनेवालोंमें होती है। एक तरहका काम करनेवाले दूसरी प्रकारका काम करनेवालोंसे भला स्पर्धा करेंगेही क्यों कर?।

डाक्टर बैरिस्टरकी स्पर्धा क्यों करने लगा और सुनारको खातीकी स्पर्धा करनेसे मतलब? जिसको शारीरिक श्रमसे काम करना है वह बुद्धिसे काम करनेवालेकी स्पर्धा करेगा क्या? कभी नहीं। अलग २ प्रकारके कामोंमें अलग २ तनख्वाका दर मुक़र्रर होनेका यह एक कारण है और मुख्य कारण है।

तनख्वाका भाव निश्चित करनेवाले कारणः—कईएक काम ऐसे हैं कि जिनमें लगाई हुई पूंजीका ज्यादातर हिस्सा तनख्वा देनेमें जाता है—अर्थात्—कितनेही काम ऐसे होते हैं कि जिनमें और २ कामोंकी अपेक्षा ज्यादा मिहनत करनी पड़ती है, अतएव किसी देशके तनख्वाके भंडारका आधार, इस बातपर है कि उसमें कौनसे २ काम धड़ाके के साथ होते हैं—कौनसा २ धंदा तेजीपर है। अगर किसी देशमें ऐसे धंदे तेजीपर हों कि जिनमें खूबही मिहनत होती हो, तो उस देशकी पूंजीका अधिक भाग तनख्वा देनेके भंडारके रूपमें काममें आवेगा और ऐसा होनेसे वहांपर तनख्वाका भाव भी बढ़ा हुआ होगा (उन देशोंके मुक़ाबलेमें कि जहांपर ऐसे काम नहीं होते) क्योंकि हरेक देशकी तनख्वाके भावका आधार इस बातपर है कि तनख्वाके भंडार और काम करनेवाले मजदूरोंकी संख्याका क्या परिमाण है। जब किसी देशमें काम चलानेकी रीतभांतमें बड़ा भारी फ़रक पड़ जाता है तब (जैसे विलायतमें बहुतसे काम धंदोंमें बाष्पयंत्र—स्टीम इंजिनका उपयोग होने लग गया) मजदूरोंको थोड़े बहुत समयतक नुक़सान उठाना पड़ता है। जब विलायतमें बाष्पयंत्र चलने लगे तब, तनख्वाके भंडारका बहुतसा हिस्सा, स्थायी पूंजीके रूपमें परिवर्तित हो गया। इससे

तनख्वाका भंडार जितना कम हुआ उतनीही कारीगरोंकी तनख्वाभी कम होगई। परन्तु इस तरहका नुक़सान उन्हें बहुत कम समयतक भोगना पड़ा क्योंकि यन्त्रोंकी सहायतासे सम्पत्तिकी उत्पत्ति ख़ूब होने लगी और फिर वह पूंजीके तौरपर उत्पादक ख़र्चमें लगाई गई। इससे मिहनतकी खपती ज़्यादा हुई, परिणाम यह हुआ कि तनख्वा कम होनेके बजाय ज़्यादा होगई। यंत्रोंके चलनेसे सारी प्रजाको लाभ हुआ उसके साथ काम करनेवालोंको भी हुआ। क्योंकि यंत्रोंके कारण वे चीज़ें सस्ती हो गईं जो पहले महँगी थीं। वास्तवमें देखा जाय तो मज़दूरोंको इससे दो तरहसे लाभ हुआ, एक तो तनख्वा बढ़नेसे और दूसरे चीज़ोंके सस्ती मिलनेसे। क्योंकि पहले जितने रुपयेकी जितनी अमुक चीज़ आती थी अब वह उतने ही रुपयेमें ज़्यादा मिलने लगी।

जनसंख्याका तनख्वापर प्रभावः—बहुतसी जगह तनख्वाका भंडार बढ़नेके साथ ही तनख्वा लेनेवाले बढ़ जाते हैं। इससे मज़दूरोंकी स्थिति नहीं सुधरती। विलायतमें परदेशसे आनेवाले मालपर भारी कर लिया जाता था। उसे उठा दिया गया। जिस वक़्त कर उठाया गया उस वक़्त यह उम्मीदकी गई थी कि अनाज ख़ूब सस्ता मिलने लगेगा इससे मज़दूरोंकी हालत सदाके लिये ठीक हो जायगी। कितने ही मनुष्य कहने लगे थे कि अब कोई भूखों न मरेगा, अब भिखारियोंका नामोनिशान न रहेगा। परन्तु हाल हुआ इससे बिल्कुल उलटा। अनाज सस्ता मिलनेके साथ ही साथ मनुष्यसंख्या बढ़ी और वह अनाज उनके पोषणमें उठने लग गया। खुराक सस्ती होनेके

कारण मज़दूर पहलेकी अपेक्षा कुछ सुखी अवस्थामें न आये, उन्हें अपने ज्यादा बालकोंको परवरिश करना पड़ा। इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्यकी स्थितिका सुधार तब हो सकता है जब मनुष्यसंख्याकी वृद्धिको रोका जाय।

अमनचैन बढ़ानेवाली तरक़ीबोंकी ज़ुरूरतः—ग़रीब आदमियोंमें सामान्य तोरपर अमनचैनका बढ़ाना जनसंख्यामें रोक लगानेवाला एक प्रभावशाली साधन है। क्योंकि जो उन्हें एक बार आरामसे रहनेकी आदत पड़ जायगी तो फिर वे उस आरामको छोड़ना न चाहेंगे। हरेक आदमी इस बातको जानता है कि खानेवाले जितने ज्यादा होंगे ख़र्चभी ज्यादा बढ़ेगा और आराम कम मिलेगा। अतएव मज़दूरोंमें अमनचैन की रीत-भांत बढ़े तो उनके ध्यानमें आजायगा कि मनुष्यसंख्या न बढ़ने से लाभ है। और मज़दूरोंको तालीम दी जाय तो भी बड़ा फ़ायदा हो। शिक्षित मनुष्य सदा आरामसे रहना चाहते हैं उन्हें जनसंख्याकी वृद्धिसे झुंझलाहट होती है। शिक्षाके प्रभावसे वे मिताहारी होते हैं और दुर्व्यसन छोड़ देते हैं। अगर मज़दूर लोगोंको भी शिक्षा मिले तो वे सुधर जांय। इनमेंसे बहुतोंका धन शराबख़ोरी वग़ैरामें उड़ जाता है सो न उड़े और वे आरामसे रहें। शिक्षाके प्रतापसे ये होशियार हो जाँय तो इनका श्रम ज्यादा उत्पादक हो और पूंजीवालेके लाभको घटाये विना ही इन्हें ज्यादा तनख्वा मिले। शिक्षा पाकर होशियार हुआ मज़दूर—अगर उसे अपने गांव या देशमें अच्छी तनख्वा न मिलेगी तो—जहां उसे ख़ूब तनख्वा मिलेगी वहीं जायगा और

आरामसे रहेगा न कि आजकलके अशिक्षित मज़दूरोंकी तरह हाथपर हाथ रखकर बैठ रहेगा।

आबादीके बारेमें मेलथसका मतः—मेलथसने अपने मनुष्यसंख्यावाले निबंधमें बतलाया है कि प्राणियोंकी ऐसी प्रकृति होती है कि वे जितनी ख़ुराक होती है उससे बहुत ज़्यादा बढ़जाना चाहते हैं, अतएव मनुष्यसंख्याकी बाढ़में रोक न लगती हो तो इतने मनुष्य बढ़जाँय कि उनके लिये ख़ुराक पूरी न पैदा हो। कितनेही लोग ऐसा कहते हैं कि मेलथस भूल करते हैं, ऐसा सम्भव नहीं है कि जगतके लोगोंकी ख़ुराकमें कमी पड़े, परन्तु इन लोगोंने मेलथसके मतलबको ठीक न समझा। उसने यह नहीं कहा कि जगतके लोगोंके लिये पैदा होती हुई ख़ुराक कम होगी, परन्तु उसका कहना ऐसा है कि आबादीकी बढ़तीपर किसी तरहकी रोक न हो तो ऐसी तंगी हो जाय। परन्तु हरेक देशमें ऐसी रोक जारी है और इससे वैसा नहीं होने पाता—अर्थात्—प्रत्येक देशमें या तो जितने बच्चे बच्ची पैदा हो सकते हैं उतने पैदा होतेही नहीं और जो कुछ पैदा होते हैं उनमेंसे भी बहुतसे मर जाते हैं। आबादीकी बाढ़में रोक लगानेवाले कारण दो तरहके हैं। क़ुदरती और बनावटी। क़ुदरती कारणोंमें प्लेग, हैज़ा, आदि भांत—भांतकी बीमारियां और दुर्भिक्ष जंग वग़ैरा हैं और बनावटीमें शादी न करना, शादी की भी जाय तो कम बच्चोंका पैदा करना इत्यादि हैं। कितने ही देशोंमें राज्यकी ओरसे ऐसी रुकावटें होती हैं। वहांपर क़ानून होता है कि अमुक अवस्था तक स्त्री पुरुषका विवाह न किया जावे, और, उतनी उम्र हो जानेपरभी

तभी शादी हो जब पुरुष इस बातको साबित कर दे कि उसमें स्त्री और बालबच्चोंको आरामसे रख सकनेकी शक्ति है। हमारे देशमें पहले प्रकारकी—क़ुदरती रोक तो है परन्तु दूसरे प्रकारकी नहीं। छोटे २ बच्चोंका विवाह करदिया जाता है। इससे औलाद ज़्यादा बढ़ती है। कुंआरा रखनेमें बदनामी समझी जाती है। और दुनियामें ख़ियाल फैला हुआ है कि पुत्र बिना मनुष्यकी सुगति नहीं होती, अतएव किसी भी तरह, अनेक स्त्रियोंसे विवाह करकेभी; पुत्र पैदा करनेकी फ़िकर मनुष्यको होती है और होवे क्यों नहीं जब उनके कानोंपर "अपुत्रस्य गतिर्नास्ति" इत्यादि वाक्योंकी ध्वनि पड़ती हो। परन्तु वे दूसरे वाक्योंको नहीं देखते भारतीय महर्षियोंने कब लिखा है कि बालविवाह हो। उन्होंने ब्रह्मचर्य पालनके बाद गृहस्थाश्रममें प्रवेश करना लिखा है। गृहस्थाश्रममेंभी ऋतुगामी होनेकी व्यवस्था की है और इसके बादभी एक पुत्र हो जाने बाद आनन्द आनन्द। इन महापुरुषोंकी व्यवस्थाओंको वर्तमान समयके अनुकूल उचित रीतिसे फेरफार कर न चलनेसे भारतकी दुर्दशा हो रही है। मुरदार बच्चोंकी तादाद बढ़रही है और तेजस्वी बालक नहीं पैदा होते। इस तरह देशका अमनचैन नष्ट होता जारहा है, भिखमंगे, गुलामी करनेवाले, बढ़ रहे हैं और स्वावलम्बी सिंह नहीं पैदा होते। बालविवाह, अशक्तविवाह, बेजोड़विवाह, ब्रह्मचर्यका अभाव और इसी प्रकारकी औरभी अनेक कुरीतियोंका प्रचार (जिनका यहां ज़िक्र करना अप्रासंगिक होगा) बड़ी ही ख़राबीकी बातें हैं। इन २ बातोंको चतुर्विध पुरुषार्थ तत्त्वज्ञोंके आदेशानुकूल फ़ौरन् देशसे निकाल डालना चाहिए। जो शीघ्र ऐसा न हो

सकता हो तो धीरे धीरे ऐसे रिवाज़ोंको रोकना चाहिए और जगह जगह आदर्शविद्यालय खोलकर बड़े ज़ोरशोरके साथ विद्याका प्रचार करना चाहिए। यहां तक कि सारे देशका कोई प्रान्त, कोई शहर, कोई गांव; विद्यालयोंसे खाली न रहे और किसीभी कुटुम्बका, कोईभी प्राणी (चाहे वह स्त्री हो या पुरुष) विद्याहीन—उपयुक्त विद्यारहित—न रह जाय। इससे संसारमेंसे कूड़ा करकट हट जायगा और दुनिया आरामसे रहेगी। नहीं तो प्राणी और उद्भिजोंमें वंश बढ़ानेकी इतनी लालसा होती है कि उसकी बाढ़में रुकावटें न हों तो मेलथसके मतानुसार थोड़ेही हज़ार बरसोंमें ऐसे करोड़ों संसार भरजाँय। परन्तु ऐसा नहीं होता इसका कारण; रोग, खुराककी कमी आदि रुकावटेंही है।

मनुष्यसंख्याकी बढ़तीके रोकनेवाले कारण न हों तो कारीगरोंकी हालत बहुत बुरी तरहसे बिगड़ती है। आबादी बढ़नेसे अनाजकी खपती बढ़ती है। उस खपतीके लिये कम उत्पादक शक्तिवाली ज़मीनको काममें लाना पड़ता है। इससे अनाज महँगा हो जाता है, और दूसरे, मज़दूर ज्यादा हो जाते हैं। इससे उनमें स्पर्धा बढ़ जाती है। परिणाम यह होता है कि तनख्वाका भाव कम हो जाता है। अब मज़दूरोंको तनख्वा कम मिलती है और अनाज मिलता है महँगा, इस प्रकार आबादीके बढ़नेसे दो तरहकी मार पड़ती है।

विदेशगमनः—किसी देशमें आबादी ज्यादा बढ़ गई हो तो वहांके कुछ मनुष्योंको परदेशमें चला जाना चाहिए। इससे देशका दुःख कम होगा। ऐसा बहुतसे मनुष्योंका कहना है।

परन्तु यह उपाय बहुत अच्छा नहीं है। क्योंकि बिल्कुल कंगाल आदमियोंके पास तो इतना भी पैसा नहीं होता कि वे परदेश जासकें। और यदि सरकार खर्च देकर उन्हें भेजे तो दूसरे देशकी सरकार ऐसे कंगालोंको अपनी हदमें रखना नहीं चाहती। जिन्हें हम दूर करना चाहते हैं उन्हें कोई बाहर भी नहीं लेता और जो अच्छी हालतमें हैं वे बाहर जानेको तैयारही नहीं होते। कल्पना करोकि अनेक अड़चनोंको उठाते हुएभी, हमने किसी तरह बढ़नीके मनुष्योंको विदेशमें भेज दिये, परन्तु ऐसा होनेपर भी सदाके लिये कुछ लाभ न होगा। क्योंकि जब तक मनुष्योंकी बाढ़में दूसरी प्रकारकी रुकावट न लगाई जायगी मनुष्यसंख्या फिर उसी तरह बढ़ जायगी। मनुष्योंको परदेश भेजनेमें एक बात और भी है। पहले पहले तो मनुष्योंकी कमी होनेके कारण उस देशमें मनुष्योंके जानेसे लाभ होगा परन्तु वहांकी भी आबादी बढ़ेगी और फिर मनुष्योंका वहांपर जाना फ़ायदेमन्द न होगा।

मिहनतकी उत्पादकशक्ति बढ़नेका तनख्वाके भाव-पर प्रभावः—जो किसी कारणसे मिहनतकी उत्पादकशक्ति बढ़े तो उसके साथही तनख्वा भी बढ़नाही चाहिए। ज़मीन मिहनत और पूंजीके योगसे ज्यादा सम्पत्ति पैदा हो तो ज़मीनके मालिकको लगानके तोरपर, कारीगरोंको तनख्वा (मज़दूरी रोज़ाना मुशाहरा या वेतन)के तोरपर और पूंजीवालेको लाभके तोरपर ज्यादा हिस्सा मिलेगा। अच्छी तालीमके पानेसे या और प्रकारसे यदि कारीगर ज्यादा होशियारी या प्रामाणिकपनेसे काम करसकें तो उनकी मिहनतकी उत्पादकशक्ति बढ़ेगी।

होशियारी बढ़नेके कारण कारीगर भातभांतके औज़ारोंका या और २ चीज़ोंका अच्छा उपयोग कर सकेंगे और प्रामाणिकता बढ़नेसे देखरेखका ख़र्च कम हो जायगा । ऐसा होनेसे सम्पत्तिकी ज्यादा पैदायश रहेगी और कारीगरोंकी तनख़्वा बढ़ जायगी । क्योंकि ऐसे कारीगरोंके कारण कामवालेका उत्पादकख़र्च कम होता है-यानी देखरेख रखनेवाले मनुष्यकी तनख़्वा कम होती है।

कारीगरोंकी मिहनत विशेष उत्पादक होगी तो उसका लाभ उन्हें मिलना चाहिए । अगर कारीगरोंके ध्यानमें यह बात आजाय कि हमारे परिश्रमकी उत्पादकशक्ति बढ़ानेमें हमाराही लाभ है तो वे विशेष मिहनत करेंगे, विशेष चतुराईसे काम करेंगे और अपनी प्रामाणिकताको बढ़ाँयगे । अतएव ऐसा करना चाहिए कि उन्हें मालूम होजायगा कि वे विशेष चतुराईके साथ शीघ्रतासे उत्तम काम करेंगे तो उन्हें तनख़्वाके सिवाय अमुक रक़मभी मिलेगी । ऐसा होनेसे वे अपने परिश्रमको विशेष उत्पादक करनेकी इच्छा करेंगे । उनका हौसला बढ़ेगा । क्योंकि उनका यह ख़ियाल दूर हो जायगा कि हमें जो कुछ मिलता है उससे ज्यादा नहीं मिलेगा । और उन्हें ठीक तोरपर मालूम हो जायगा कि हम जितना क़ीमती काम करेंगे उतना लाभ हमेंही होगा । इस प्रकारकी लाभदायक व्यवस्थाओंके उदाहरण हम इसी भागके चौथे प्रकरणमें देंगे ।

स्थानिक और तात्कालिक कारणोंसे तनख़्वाकी कमीबेशी होती रहती है—हम कारीगरोंको उनकी मिहनतका मुशाहरा मिलनेके साधारण कारण ऊपर बतला चुके हैं। परन्तु

यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है कि स्थानिक और तात्कालिक कारणोंसे तनख्वाहमें बहुत कुछ फेरफार हो जाता है। जैसे कभी अमुक चीज़के व्यापारमें उसके उत्पन्न करनेमें जो कुछ लगा उसका सामान्य लाभभी पूरे तोरपर नहीं होता और कभी बहुत लाभ होता है। इस तरहकी घटबढ़ प्रायः हुआही करती है। इसीके अनुकूल अमुक प्रकारके परिश्रमकी तनख्वाभी, उस परिश्रमकी खपती और परिश्रम करनेवाले मनुष्योंकी संख्याके परिमाणमें, सामान्य तनख्वाकी अपेक्षा, कम या ज्यादा होती है।

क्या चीज़ें महँगी होजानेसे तनख्वा बढ़ती है?:—कितने ही मनुष्योंका कहना है कि चीज़ोंकी क़ीमतके बढ़नेसे तनख्वाभी बढ़ती है। इस बातमें कितना अंश सत्य है इसका निर्णय करनेके पहले, यह बात ध्यानमें रखलेना चाहिए कि तनख्वाके भंडार और तनख्वा लेनेवाले लोगोंमें जबतक घट-बढ़ नहीं तबतक, मज़दूर लोगोंकी स्थितिपर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। इस बातको अपने ध्यानमें रखकर हम इस बातकी तलाश करें कि वस्तुओंकी क़ीमतके घटनेसे तनख्वामें फेरफार होता है या क्या? और होता है तो कैसी सूरतमें? तथा नहीं होता तो कैसी सूरतमें? ऐसे बहुतसे उदाहरण तलाश करनेपर मिल जांयगे कि जिनमें चीज़ोंकी क़ीमत बढ़नेपरभी तनख्वामें कुछ फेरफार नहीं होता। जिन चीज़ोंका संग्रह बढ़ाया जासकता है उनकी क़ीमतका आधार उनके उत्पादकख़र्चेपर निर्भर है। उत्पादकख़र्चेमें तीन अंश मिले हुए हैं। मिहनत, अनुपभोग और ज़िम्मेवरी। कोईभी मनुष्य हो वह इन तीनों अंशोंका

ज़्यादासे ज़्यादा जितना बदला मिल सकेगा लेगा; एकभी अंशका कम बदला बरदाश्त न कर सकेगा। अतएव चीज़ोंकी क़ीमत ऐसी होनी चाहिए कि जिसमेंसे तनख़्वा और नफ़ा साधारण तोरपर मिल जावे। अब जिस चीज़के पैदा करनेमें ज़्यादा अनुपभोग, ज़्यादा मिहनत और ज़्यादा ज़िम्मेवरी हो उसकी क़ीमत बढ़ना ही चाहिए। और एक बात है कि किसी मौक़ेपर उस २ वस्तुके बनानेवाले अपने कामके लिये ज़्यादा बदला रखसकें तबभी उस २ वस्तुकी क़ीमत बढ़ेगी। पहली रीतसे चीज़ें पैदा करनेमें अर्थात् श्रम अनुपभोग और ज़िम्मेवरी ज़्यादा बढ़नेपर चीज़ोंकी क़ीमत बढ़नेसे कुछ पूंजीका नफ़ा या मिहनतकी तनख़्वाका भाव तेज़ नहीं होगा। किसी चीज़पर कर डालनेसे भी वह महँगी होती है—उसके टके ज़्यादा आते हैं। ऐसी सूरतमेंभी परिश्रमका भाव नहीं बढ़ेगा। परन्तु कितने ही प्रसंग ऐसेभी होते हैं कि पदार्थोंकी क़ीमतके बढ़नेसे तनख़्वामें तात्कालिक (थोड़े समयके लिये) वृद्धि होती है। कल्पना करो कि कपड़ेका व्यापार खूब तेज़ीपर हो गया। ऐसी सूरतमें उसका संग्रह और खपती तब बराबर होंगी जब कपड़ोंकी क़ीमत बढ़ जायगी। इस प्रकार क़ीमतके बढ़नेसे कपड़ेवालोंको खूब फ़ायदा होगा। इस फ़ायदेको उठानेके लिये कपड़ेके संग्रह बढ़ानेमें नई पूंजी लगाई जायगी। कपड़ेके व्यापारी नई नई मिलें खोलेंगे-कारखाने चलायँगें, इन कारखानोंमें कारीगरोंकी ज़ुरूरत पड़ेगी, मिहनती लोगोंकी खपती बढ़ेगी, अतएव मिहनतका भाव चढ़ जायगा और काम करनेवालोंको ज़्यादा तनख़्वा मिलेगी। इस उदाहरणमें क़ीमत बढ़नेसे तनख़्वा बढ़ी ऐसा माना

जायगा । परन्तु यह स्थायी नहीं है । नफ़ा और तनख़्वा ज्यादा मिलता होनेसे अन्यान्य व्यापारी और कारीगर भी इधरही झुकेंगे। और और व्यापारमें लगाई हुई पूंजी कपड़ेके व्यापारमें लगाई जाने लगेगी । परिणाममें कपड़ेका संग्रह बढ़ जायगा । कारीगरोंके, कपड़ेके काममें आपड़नेसे उनका भी संग्रह बढ़ जायगा। इस सब कार्रवाईका फल यह होगा कि कपड़ोंकी क़ीमत कम हो जायगी और सम्भव है कि कभी तो वह इतनी कम हो जाय कि पहले जो साधारण दर मिलती थी उतनीभी न रहे । ऐसा होनेपर तनख़्वा और नफ़ा घटतेही जाँयगे । तनख़्वामें कमी होनेकी यह सूरत होगी । खपतीसे संग्रह अधिक होनेपर उत्पादन कम किया जाता है । क्योंकि माल बनानेवालोंको भारी नफ़ा नहीं मिलता भारी नफ़ा मिलना दूर रहा कभी कभी तो उन्हें साधारण लाभकी अपेक्षाभी कम मिलनेकी नोवत आपहुंचती है । ऐसी सूरतमें माल बनानेवाले इस फ़िक्रमें होते हैं कि क्योंकर संग्रह कम किया जाय। वे नये नये काम नहीं छेड़ते कारीगरोंसे ख़ूब माल नहीं तैयार कराते । कम माल तैयार कराते हैं। इसका मिहनतकी तनख़्वापर क्या असर पड़ेगा ? पहले हम कहचुके हैं कि जिस वक़्त व्यापार चमका उस वक़्त बहुतसे कारीगरभी ज्यादा तनख़्वा पानेकी लालचसे उसी काममें आकूदते हैं परन्तु अब अमुक व्यापारकी मंदी हो गई । माल बनवाना है कम और काम करनेवाले हैं बहुत । ऐसी स्थितिमें मिहनतके मुशाहरेका भाव कम हो जायगा । अगर तनख़्वाके भावमें कमी हो जानेसे कारीगर लोग काम करनेसे इंकार कर देंगे तो कामवालोंके लिये "सोती थी और बिछौना पाया"

वाली बात होगी । क्योंकि उनका फ़ायदा इसीमें है । अब साधारण लाभ भी ठीक ठीक न हो तो वे अपने कारखानोंको कुछ समयके लिये बंद रक्खेंगे या उनसे माल कम पैदा करेंगे। ऐसा होनेसे हज़ारों कारीगर मारे मारे फिरेंगे । क़ीमतोंके बढ़नेसे जो तनख्वाका भाव बढ़ता है वह बहुत समयतक स्थिर होकर नहीं रहता इस बातको जतानेके लिये हमने बहुतही ग़ैर मामूली उदाहरण दिया है परन्तु इतना तो हर हालतमें होगा कि जो कारीगर आपसमें स्पर्धा रखते होंगे तो तनख्वाका भाव बढ़नेपर मिहनतका संग्रह बढ़ जायगा—अर्थात्—हरेक कारीगर चाहेगा कि मैं इस फ़ायदेको उठाऊं, परिणाम यह होगा कि तनख्वाका भाव उतर जायगा और अपनी असली हालतपर आजायगा । खपती और संग्रहका जो सिद्धान्त हम पहले भागमें बतला चुके हैं उसीका यहभी एक उदाहरण है । जब मिहनतकी खपती उसके संग्रहसे ज्यादा होती है तब उसकी क़ीमत बढ़ जाती है और खपती एवं संग्रह बराबर हो जाते हैं। परन्तु ज्यादा क़ीमतके लालचसे मिहनतका संग्रह बहुत बढ़ जाता है, उसकी क़ीमत कम होकर संग्रह और खपती बराबर होते हैं, अर्थात्—मिहनत करनेवाले मज़दूर कम होते हैं तो तनख्वा बढ़ जाती है और वे ज्यादा होते हैं तो तनख्वा कम हो जाती है ।

ख़ूब स्पर्धा चल रही होती है तब व्यापारमें स्थान विशेषपर मंदी होनेसे तनख़्वापर जो असर पड़ता है वह थोड़े समयतकही रहता है:—जब कभी कोई व्यापार मंद हो जाता है और मज़दूरी साधारण भावसेभी सस्ती हो जाती है तब हमेशा

इस तरहकी प्रवृत्ति हुआ करती है कि तनख़्वा और नफ़ा अपनी असली हालतपर आजावें । व्यापारी लोग नुक़सान उठानेके लिये पहलेके परिमाणमें ही माल क्यों तैयार करेंगे ? वे माल बनाना कम कर देते हैं और कारीगरोंकाभी ऐसाही होता है। वे उस कामको करना बंद कर देंगे । क्यों कोई थोड़ी तनख़्वामें पड़ा रहेगा अगर उसे और जगह ज्यादा मिलता हो। इससे मंदीवाले व्यापारमें पूंजी और परिश्रमका संग्रह कम होगा। मालकी उत्पत्तिमें कमी होनेसे उसका संग्रह नहीं बढ़ेगा और मालकी क़ीमत बढ़ेगी । ऐसा होनेसे मज़दूरीकी उजरत फिर अपनी असली हालतपर आजायगी ।

परोपकारकी बुद्धिसे जो सहायता दीजाय वह अर्थ-शास्त्रीय नियमोंके प्रभावको रोकनेवाली न होकर उसके फैलानेवाली होनी चाहिएः—प्रायः ऐसा देखा जाता है कि जब कोई व्यापार मन्द पड़ जाता है तब मज़दूरी और नफ़ा बहुतही कम हो जाते हैं । ऐसी सूरतमें मज़दूर लोगोंको थोड़े-बहुत समयतक बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ती है, क्योंकि उनमेंसे बहुतसे मज़दूरोंको कुछ काम न मिलनेसे ठाली बैठे रहना पड़ता है । ऐसे समयमें जो स्पर्धा जारी हो और उसे रोकनेका कोई प्रयत्न न किया गया हो तो बहुतसे मज़दूर उस कामको छोड़कर दूसरा काम करने लगेंगे या दूसरे गांवोंमें जाकर रोज़ी हासिल करेंगे, उनपर पड़ी हुई मुसीबत इस तरह बिना किसी प्रकारकी परोपकारी सहायताकेभी टल जायगी । अब कल्पना करो कि अमुक व्यापारके बैठजानेमें जिनकी रोज़ी मारी गई उनपर दया कर लोगोंने उन्हें दान दिया । इसका परिणाम

क्या होगा ? होगा यही कि वे लोग रोज़गार प्राप्त करनेके लिये प्रयत्न करना छोड़ देंगे। वे वहाँपर जानेका विचारभी न करेंगे जहाँपर उनके पेशेकी चलती हो। वे माथेपर हाथ रखकर वहीं बैठे २ हाय हाय किया करेंगे। इस तरहकी ख़ैरात करनेसे उन लोगोंका नुक़सान करना है। इस बातको लिखनेसे हमारी यह इच्छा नहीं है कि हम यह कहते हों कि मनुष्यको मनुष्यकी सहायताही न करना चाहिए। ऐसा कहना घोर निर्दयताका काम होगा—मनुष्यत्वका द्योतक न होगा। हमारा कहना इतनाही है कि अर्थशास्त्रके नियमोंके प्रतिकूल दान करना ठीक नहीं हैं। हां, तो सहायता करनेकी यह रीत ठीक होगी कि ऐसे कारीगरोंको उनका रोज़गार ख़ूब चल रहा हो ऐसी जगह भेजनेमें सहायता देना चाहिए, या, किसी दूसरे उद्योग धंदेके सिखानेमें मदद देना चाहिए। इससे, देशमें सम्पत्तिकी बढ़ती भी होगी कारीगर लोग भूखोंभी न मरेंगे, आपको दान करनेका सौभाग्य प्राप्त होगा। हमारे भारतमें बहुतसे बावा फिरते हैं कोई तेली है, कोई तम्बोली है, कोई कालबेले हैं, कोई सांसरी है। न मालूम कौन २ हैं। राख चुपड़ २ और भगवाँ पहन २ कर "बाबाजोगी" बन बैठे हैं। एक दो नहीं, सौ दो-सौ नहीं, हज़ार दो हज़ार नहीं, बावन लाखसे ऊपर हैं। करोड़ों रुपया भारतकी कमाईका हरसाल चट कर जाते हैं। इनके गुण देखो तो हरे! हरे! कुछ पूछियेही मत। चोरी करते ये नहीं चूकते, लुटेरे ये हैं। क्या क्या कहें ये दुर्गुणोंकी खान हैं। इन लोगोंने भारतके हृदयके स्वामी, सच्चे साधु—महात्माओंको छुपा दिया है और देशकी भारी हानि कर रक्खी है।

इन लोगोंने विचारवान पुरुषोंकी आँखोंकोभी ख़राब कर दिया है। क्योंकि वे; इन लोगोंकी करतूतोंके कारण, सच्चे साधुसंत, सच्चे ब्राह्मण, सच्चे सन्यासी, और सच्चे महानुभाव महापुरुषोंकोभी बुरा भला समझ, संदेहकी निगाहोंसे देखकर, अपनी और देशकी, आध्यात्मिक, नैतिक व धार्मिक ही क्या, आर्थिक हानि भी करने लगे हैं। यह परितापकी बात है। हम नहीं कहते कि सभी बाबा ऐसेही हैं और सारे विचारवानोंकी निगाह ऐसी हो गई है परन्तु जहांतक हमारा अनुभव है अधिकांशमें ऐसाही है। अच्छा तो अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे ऐसे भिखमंगोंको भीख देना बंद होना चाहिए। अगर उन्हें खानेको न मिलेगा तो अवश्य काम करेंगे काम करनेसे सम्पत्ति पैदा होगी। सम्पत्तिके पैदा होनेसे उन्हें और देशको दोनोंको लाभ पहुंचेगा, भारतका जो हरसाल करोड़ों रुपया नष्ट हो जाता है, न होगा और वह अच्छे कामोंमें लगाया जा सकेगा। परन्तु अफ़सोस है कि हमारे भारतीय भाई ऐसे भिखमंगोंको भीख देनेमें अपना बड़प्पन समझते हैं और पुण्य हुआ मानते हैं!!! ये भोले बन्धु नहीं जानते कि हम बड़ा भारी देशद्रोह कर रहे हैं! जिस शाखापर बैठे हैं उसीको काट रहे हैं! खेतको खानेवाली बाड़ लगा रहे हैं! आत्मघात कर रहे हैं। यहांपर हमें केवल अर्थशास्त्रका विचार करना है अतएव पुण्य पाप आदिका विचार नहीं करते हैं। हमारी इच्छा है कि हम एक स्वतन्त्र ग्रन्थ इस बातपर लिखकर भारतीय प्रजाके साम्हने "आर्यजाति" नामका प्रस्तुत करेंगे। जिसमें हमारे आदर्श—सामाजिक, राजकीय, आर्थिक और धार्मिक जीवनका विचार करेंगे। यहाँपर हम इतना ही

लिखते हैं कि ऐसी भीख देनेमें कुछ पुण्यभी नहीं है, ऐसे दानोंके बन्द होनेसे देशकी भलाई होती है, आलसियोंकी संख्या कम होती है और काम करनेवालोंकी संख्या बढ़ती है।

कारीगरोंमें अनियंत्रित स्पर्धा होती है तो बढ़ी हुई उजरत कम होने लगती है और उजरत कमीपर होती है तो उसके असली हालतपर आनेकी तरकीब होती है । परन्तु स्पर्धाकी वजहसे अलग २ जगहपर चीज़ोंकी क़ीमत जितनी जल्दी बराबर हो जाती है उतनी जल्दी मिहनतकी क़ीमत (यानी तनख्वा) अलग २ जगह बराबर नहीं होती । भवानीगंज (पचपहाड़ झालावाड़) और दिल्लीमें बहुत अर्सेतक गेहूं चने जैसी चीज़ोंके भावमें ज्यादा फ़र्क नहीं रह सकता । फ़र्क उतनाही रहेगा कि एक जगहसें दूसरी जगह माल पहुंचानेमें जितना ख़र्च लगता होगा । परन्तु मिहनतका यह हाल नहीं है । भवानीगंजके कारीगरको यह मालूमभी हो कि दिल्लीमें जानेसे ख़ूब तनख्वा मिलेगी परन्तु वह नहीं जायगा । क्योंकि अव्वल तो उसके पास इतने दाम ही न होंगे कि वह अपने घरबार सहित वहां चला जाय और दूसरे जिस जगह उसने अपनी उम्र बिताई होती है वहांपर उसके मेल जोलके बहुतसे मनुष्य होते हैं और उसके सगे सम्बन्धी वहाँपर हो जाते हैं, उन्हें छोड़कर वह जाना नहीं चाहता । यही कारण है कि तनख्वाका भाव सब जगह बहुत शीघ्र क़रीब २ बराबर नहीं हो जाता ।

परन्तु हमारे भारतमें कारीगरोंमें प्रायः इस प्रकारकी स्पर्धा नहीं है । अव्वल तो उन्हें अपने गांवको छोड़कर दस-बीस कोसपर जाना लंका जानेके बराबर होता है और दूसरे

जाति जातिके पैशे न्यारे न्यारे हैं। और बहुतसे काम धंदोंकी निर्ख़ रिवाज़के मुआफ़िक मुक़र्रर होती है । इससे स्पर्धा नहीं चमकती। भंगी, भंगीका काम करता है, चमार चमार का, और, और २ जातिवालेभी अपना २ काम करते हैं। लेकिन अब, इसमें कुछ फेरफार होने लगा है।

अलग २ कामोंमें मिहनतकी उजरत कमी बेशी होती है। इस विषयमें अर्थतत्वज्ञ एडमस्मिथके बतलाये हुए कारणः— अगर प्रत्येक तरहके कारीगरोंमें अनियंत्रित स्पर्धा जारी होगी तो एक ही प्रकारके कामके लिये अलग २ जगहपर मिलती हुई तनख़्वामें कुछ फ़रक नहीं पड़ेगा। परन्तु अलग २ तरहके कामोंमें तो तनख़्वामें कमी बेशी होवेहीगी। अलग २ तरहके कामोंमें तनख़्वाकी कमी बेशी क्यों होती है इसके बारेमें अर्थशास्त्री एडमस्मिथ पाँच कारण बतलाता है:—

(१) कामका रुचिकर होना या अरुचिकर होना.

(२) थोड़े ख़र्च और कम परिश्रमसे कामका आजाना या अधिक ख़र्च और बड़े परिश्रमसे आना.

(३) काममें रोज़ीका स्थिर होना या अस्थिर होना.

(४) काम करनेवालोंपर अविश्वास होना या पूर्ण विश्वास होना.

(५) कामकी सफलता का निश्चय होना या न होना.

इन कारणोंके साथही तनख़्वाकी कमी बेशीका कारण और भी है। वह यह है कि जो कारीगर जिस तरहके काम करने-

वाले कुलमें पैदा होता है वैसे ही काम करनेमें उम्र व्यतीत करता है दूसरे प्रकारके काम करनेवाले कारीगरोंसे स्पर्धा नहीं करता। बहुत करके किसानका लड़का खेती ही करता है और सुनारका लड़का सुनारी। कदाचित् ही ये लोग दूसरे कामपर लगते हैं।

(१) कामके रुचिकर होने या न होनेका कारीगरोंकी तनख़्वापर क्या असर पड़ता है इसका उत्तम दृष्टान्त खानके धंदेमें मिल जायगा। कुछ लोग खानके भीतर काम करते हैं और कुछ बाहर। भीतर काम करना बहुत कम आदमी पसन्द करते हैं क्योंकि उसमें जानकी जोखम है। ऐसी जोखमके काम करनेवालोंको ज़ुरूर तनख़्वा ज्यादा मिलेगी। अगर उन लोगोंको ज्यादा तनख़्वा न मिलेगी तो वे क्यों तन्दुरुस्तीको ख़राब करनेवाले जोखमके कामोंको करेंगे। कोयलेकी खानमें कारीगरोंकी जान बड़ी ही जोखममें होती है। अतएव उन्हें साधारण तनख़्वासे ज्यादा तनख़्वा मिलती है और वे उस तनख़्वाकी लालचसे वैसे कामको भी करते हैं। और बातें ठीक हों तो जो खान ज्यादा जोखमवाली होगी उसमें काम करनेवालोंको ज्यादा तनख़्वा मिलेगी।

कामकी रोचकता या अरोचकतामें वे भी सब काम शामिल हैं जिनके करनेसे मनुष्यका सम्मान बढ़े या सम्मान कम हो। कितने ही काम ऐसे होते हैं कि जिनके करनेसे मनुष्यको तनख़्वा तो मिले कम परन्तु इज्जत बहुत बढ़ जाय। ऐसे काम रुचिकर होते हैं। इन्हें करनेको लोग तैयार रहते हैं। क्योंकि कम तनख़्वाका बदला उन्हें सम्मानसे मिल जाता है। परन्तु बहु-

तसे काम ऐसे होते हैं कि जिनके करनेसे मनुष्य लोकनिन्दाका पात्र होता है—धिक्कारा जाता है ऐसे काम अरुचिकर होते हैं। इन्हें करनेको दुनिया तैयार नहीं होती। ऐसे काम करनेवालेको उसकी बे-इज्जतीके एवजमें ज्यादा तनख्वा मिलती है। बड़े बड़े शहरोंमें एक हाकिम कुत्तोंको मारनेके लिये रहता है। ऐसे काम करनेके लिये दुनिया तैयार नहीं होती। क्योंकि ऐसा काम करनेवाला निन्दापात्र होता है। अब इस जगहपर ज्यादा तनख्वा मिलनेकी आशासे लोकनिन्दाको सहते हुए भी कोई न कोई खड़ा हो जाता है। इस काममें उसे बहुत कम श्रम करना पड़ता है परन्तु तनख्वा खूब मिलती है। यह तनख्वा उसे उसके परिश्रमके हिसाबकी नहीं मिलती परन्तु बे-इज्जतीके बरदाश्त करनेकी मिलती है।

(२) कुछ काम ऐसे हैं कि जिनके सीखनेमें ज्यादा मिहनत नहीं होती, न ज्यादा खर्च ही होता है और हर कोई उन्हें सीख सकता है। कुछ काम ऐसे हैं कि जिनके सीखनेमें बड़ा श्रम होता है, बहुत खर्च पड़ता है और हरकोई नहीं सीख सकता। इन दोनोंमें दूसरे प्रकारके काम करनेवालोंको ज्यादा मुशाहरा मिलना ही चाहिए। यदि ज्यादा तनख्वा न मिले तो कौन ऐसा बेवकूफ होगा जो व्यर्थ ही समय वितावेगा और खर्च करेगा? जहाज और काँचके बर्तन बनानेकी विद्या प्राप्त करनेमें बहुत समय तो उम्मीदवारीमें बीत जाता है। इस समयमें कुछ प्राप्ति नहीं होती उल्टी सिखानेवालेको कुछ दक्षिणा देनी पड़ती है। इतना करनेपरभी उस काममें निपुणता प्राप्त करना बहुत कठिन होता है। इतनी कठिनाई और खर्चसे

तैयार हुए कारीगरोंको—उन कारीगरोंकी अपेक्षा जो सहजमें ही किसी धंदेको सीख गये हैं—ज्यादा तनख्वा मिलना ही चाहिए।

जिस काममें कौशल प्राप्त करनेके लिये दीर्घ कालके अनुभवकी और क़ुदरती दैनकी आवश्यकता होती है उसमें तनख्वाके मुक़र्रर करनेका बहुत कुछ आधार "काम सीखनेकी कठिनता" पर है। सबसे अच्छे गानेवालेको बहुत बड़ी आमदनी होती है। इसका आधार इसी बातपर नहीं है कि उसने इस गुणके प्राप्त करनेमें बड़ा ही ख़र्च किया है। उसके बराबर ख़र्च और २ गानेवालोंने भी किया होगा, उसीके बराबर गुणके लिये परिश्रम भी किया होगा परन्तु फिर भी ये सब उसकी न तो बराबरी कर सकते हैं और न कमाते ही उतना हैं। इसका कारण यह है कि इन्हें क़ुदरतकी ओरसे वैसे कंठ और बुद्धिकी दैन नहीं मिली होती। वह ज्यादा कमाता है इसका कारण यही है कि उसे ईश्वरकी कृपासे अच्छा सुरीला कंठ मिला है और नई नई बातें पैदा करनेवाली बुद्धि। ऐसे मनुष्योंकी कमी होती है और मांग होती है ऐसे श्रेष्ठ गुणियोंकी ही अधिक, अतएव उन्हें ज्यादा तनख्वा मिलती है। इसी तरह घड़ी बनाने करने जैसे बारीक़ कामोंमें जिनको अच्छा अभ्यास हो जाता है उन्हें भी भारी मुआवज़ा मिलता है।

(३) किसी काममें सदा रोटी मिलनेकी खातरी होने या न होनेका भी असर तनख्वापर पड़ता है। जो काम बारों महीने न चलकर नो महीने तक चले ऐसा ही हो उस कामको ज्यादा उजरत मिले बिना कोई न करेगा। अगर हमें कोई नोकर रखना होता है तो वह सस्ता तब रहता है जब उसे यह विश्वास

हो जाता है कि मैं बहुत समय तक रह सकूंगा। अगर आप किसी नोकरको बरस छह महीनेके लिये ही रक्खेंगे तो वह ज्यादा तनख्वा लेगा, महीने दो महीनेके लिये रखनेसे और ज्यादा लेगा और दस पाँच दिनके ही लिये रखनेसे और भी ज्यादा तनख्वा लगेगी। यह ज्यादा तनख्वा उसके परिश्रम की नहीं है परन्तु उस जोखमकी है कि जो उसे आपका काम छोड़नेके बाद दूसरा काम पानेके समय तक बेरोज़गार रहनेमें उठानी पड़ती है।

(४) किसी भी काममें काम करनेवाले मनुष्योंपर जितना विश्वास रखनेकी ज़ुरूरत पड़ती है उतना ही उनकी तनख्वापर असर पड़ता है. जितनी ज्यादा विश्वासपात्र मनुष्यकी आवश्यकता होगी उतनी ज्यादा तनख्वाभी देनी पड़ेगी। राजके खज़ानची, सेठोंके मुनीम रोकड़िये, जौंहरीके गुमाश्ते, रेलके ड्राइवर गार्ड वगैरा, ऐसे विश्वासपात्र होना चाहिए कि जिन का पूरा २ विश्वास आनन्दसे किया जासके। जो मनुष्य प्रामाणिक और उत्तम हों उन्हें ही ऐसी जगहोंपर रखना चाहिए। अब जो आदमी ऐसी जगह रक्खा जायगा उसपर बड़ी भारी ज़िम्मेवरी होगी, उसे उस ज़िम्मेवरीकी तनख्वा ज्यादातर मिलेहीगी।

(५) बहुतसे काम ऐसे होते हैं कि जिनमें सफलताका विश्वास होता है। किसान, दरजी, लुहार, सुनार आदिके काम इसी तरहके हैं। इन्हें अपनी कामयाबीमें बहुतही कम सन्देह होता है। परन्तु बैरिस्टरी या डाक्टरी जैसे काममें पड़नेवाले मनु-

क्योंकि अपने काममें सफल होनेका बहुत सन्देह होता है। वे इस जोखमको अपने माथे लेते हैं कि कार्य सिद्ध होगा या नहीं। अतएव उन्हें जिसमें कार्य सिद्धि निश्चित है ऐसे काम करनेवालोंकी अपेक्षा ज्यादा तनख्वा मिलती है।

एडमस्मिथके बतलाये हुए जो पाँचों कारण हैं उनका प्रभाव तभी पड़ेगा जब अलग २ कामवालोंकी एक दूसरेके साथ स्पर्धा नहीं हो। यह बात ध्यानमें रखने लायक़ है। कोई काम अरुचिकर है तो उसके करनेवालोंकी संख्या कम हो जायगी। जो काम बड़ी झुंझलाहटवाला है, उसे करनेके लिये बहुत ज्यादा तनख्वा मिलनेपर भी, बहुत कम आदमी तैयार होंगे। हमने जो ऊपर कुत्तेमारकी जगहका उदाहरण दिया है। ऐसे कामको करनेके लिये बहुत ज्यादा रोज़गार मिलनेपर भी बहुत कम आदमी तैयार होंगे। वैसे ही, जिन कामोंके सीखनेमें परि-श्रम और रुपया ज्यादा लगता है, उन कामोंके करनेवालोंको जो ज्यादा तनख्वा मिलती है, उसका भी कारण यही है कि ऐसे कामोंमें परिश्रम और ख़र्चकी अधिकताके कारण बहुत कम मनुष्य लगते हैं। अर्थात् किसी कामके सीखनेमें परिश्रम और ख़र्च होता है उसीपर तनख्वाका आधार नहीं है परन्तु इस बातपर भी है कि परिश्रम और ख़र्चके डरसे बहुतसे मनुष्य उस काममें स्पर्धाके लिये नहीं बढ़ जाते। परन्तु जब वैसी स्पर्धा बढ़जाती है तब यह हाल नहीं रहता। पहले मिडिल तक अंग्रेज़ी पढ़े लिखे आदमियोंको जो तनख्वा मिल जाती थी अब बी. ए. एम. ए. तक पढ़ों लिखोंको मुश्किलसे मिलती है। परिश्रम और ख़र्च इन्हें बहुत ज्यादा होता है परन्तु तनख्वा

कुछ नहीं। इसका कारण यही है कि स्पर्धा करनेवाले कम न होकर बढ़ गये हैं। यही हाल प्रामाणिकपन और विश्वासपात्र-ताका भी है। जबतक ऐसे गुणवाले आदमी ज्यादा नहीं होते ऐसे लोगोंको ज्यादा तनख्वा मिलती है और जब ऐसे गुण-वाले बहुतसे मनुष्य मिलने लगेंगे तब तनख्वा कम हो जायगी। अलग २ प्रकारके कामोंमें अलग २ तनख्वाका दर होनेके जो पाँच कारण एडमस्मिथने बयान किये हैं उन्हें ठीक तोरपर समझनेके लिये हमारी कही हुई बातें याद रखना चाहिए। क्योंकि यदि ये सिद्धान्त बिना किसी प्रकारके उपनियमके मान लिये जाँय तो अरुचिकर काम (जिनमें जानकी जोखिम होती है या जो मैले होते हैं) करनेवालोंको—भंगी चमार कोयलेकी खानोंमें काम करनेवालोंको और इसी प्रकारके और-और मज़-दूरोंको जज और कलेक्टर वगैरासे भी ज्यादा तनख्वा मिलना चाहिए। एडमस्मिथके बतलाये हुए कारणोंका अलग-अलग धंदोंमें काम करनेवाले कारीगरोंकी तनख्वापर क्या असर होता है, इसका विचार करनेके पहले यह बात जान लेना लाज़मी है कि उन २ कारणोंसे स्पर्धा करनेवालोंकी संख्या कितनी कम होती है।

प्रश्न.

(१) "तनख्वा"का क्या मतलब है ? उसका साधारण-भाव किससे निश्चित होता है ?

(२) मज़दूरोंकी स्थिति सुधारनेकी क्या रीति है ?

(३) किन २ कारणोंसे विलायतमें तनख्वा भंडार (चल-पूंजी) ख़ूब बढ़ा ?

(४) तनख्वा भंडार बढ़नेसे कारीगरोंकी स्थितिमें क्या फेरफार होता है ?

(५) विलायतमें परदेशके आते हुए माल परसे कर उठा दिया गया इससे मज़दूरोंकी स्थितिपर क्या ख़ास असर हुआ ?

(६) मनुष्यसंख्याके विषयमें मेलथसका क्या कहना है ?

(७) उसने मनुष्यसंख्याकी बाढ़ रोकनेके कितने प्रकारके भेद माने हैं ?

(८) शिक्षाके फ़ैलनेसे किस प्रकारकी रोक बढ़ती है ?

(९) आबादी बढ़नेसे कारीगरोंकी हालत कौनसी दो रीतिसे बिगड़ती है ?

(१०) आबादीके बेहद बढ़जानेका क्या यह इलाज ठीक होगा कि ज्यादतीके आदमियोंको विदेशमें भेज दिया जाय ? अगर नहीं तो क्यों ?

(११) नफ़ेके साधारण भावका तनख्वाके भंडारपर क्या असर होता है ?

(१२) तनख्वा बढ़नेसे अगर काम करानेवालोंको साधारण नफ़ेसे कम मिलने लगे तो आख़िरकार काम करके तनख्वा लेनेवालोंको फ़ायदा होगा क्या ?

(१३) मिहनतकी उत्पादकशक्तिके बढ़नेसे तनख्वाके भंडारपर किस तरह असर पड़ता है ?

(१४) मिहनतकी क़ीमतमें फेरफार होना चाहिए या क्या ?

(१५) मालकी क़ीमत बढ़नेसे क्या तनख्वा बढ़ जाती है ? उदाहरण दो.

(१६) तनख्वाका भाव—मजदूरीका दर खूब बढ़ गया हो या कम होगया हो तो वह किस तरह ठीक होता है ? बतलाओ ।

(१७) स्पर्धाका प्रभाव मालकी क़ीमतपर जितनी जल्दी होता है मिहनतकी उजरतपर नहीं होता इसका क्या कारण है ?

(१८) परोपकार बुद्धिसे मदद किस तरह देना चाहिए ? भारतमें कैसे दी जाती है ? उदाहरण देकर समझाओ।

(१९) अलग २ प्रकारके कारीगर एक दूसरेके साथ क्यों नहीं स्पर्धा करते ? इसके कुछ कारण बतलाओ ।

(२०) अलग २ तरहके कामधंदोंमें तनख्वाका भाव अलग २ होता है । इस विषयमें एडमस्मिथने कौनसे पाँच कारण बतलाये हैं ?

(२१) इन पाँचों कारणोंका तनख्वापर जो असर होता हो उदाहरण देकर समझाओ ?

(२२) बतलाओकि इन कारणोंके असरका विचार करनेके पहले क्या बात ध्यानमें रखनी चाहिए ?

विशेष प्रश्न ।

(१) कल्पना करो कि अमुक देशकी मनुष्यसंख्या दस

वर्षमें बहुत बढ़ गई और इसके साथही भिखारियोंकी तादाद भी ३० फ़ी सदी बढ़ गई। अच्छा इस विषयपर कोई कड़ा लेख तो लिखो कि दुनियाकी तबीयत इन भिखारियोंको कामपर लगानेकी ओर होवे।

(२) व्यापारकी मंदीके वक्त कारीगरोंको ख़ैरात लेनेसे फ़ायदा होगा या जहांपर व्यापार चलरहा हो वहांपर जाकर काम करनेसे ?

(३) हमने एक जगह पढ़ा है कि "लोहे और कोयलेकी खानोंपर काम करनेवाले लोग व्यापारकी मंदीके असरसे मुक्त होते जाते हैं और पहलेके मुआफ़िक़ ब्याह शादी करते जाते हैं" बतलाओ यह बात ठीक हो तो कारीगरोंके अमनचैनपर क्या असर होगा ?

तीसरा प्रकरण।

पूंजीका नफ़ा।

सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें पूंजी जो काम करती है उसके एवज़में जो प्राप्ति होती है उसका नाम नफ़ा है। सम्पत्तिका जो भाग भविष्यतमें सम्पत्ति पैदा करनेमें सहायता देनेके लिये इकट्ठा कर रख लिया जाता है उसे पूंजी कहते हैं। यह बात हम पहले ही बतला चुके हैं। अर्थात् पूंजी इकट्ठीकी जासकती है परन्तु वह अपना काम करनेके लिये थोड़ी बहुत लग जानी चाहिए। यह बात तो स्पष्ट है कि भविष्यतमें जो सम्पत्ति उत्पन्न हो उसमें से कुछ अपनी सम्पत्तिकी कमीका हिस्सा न

मिले तो सम्पत्तिके मालिक अपनी सम्पत्तिका देना ही क्यों क़ुबूल करेंगे ? अर्थात् नहीं करेंगे। पूंजीवालोंको इस तरह जो भाग मिलता है उसे नफ़ा कहते हैं। वहुतसे मनुष्य इस वातके माननेवाले होते हैं कि पूंजी, सम्पत्तिके उत्पन्न करनेमें जो काम करती है उसका कुछ वदला मिलना योग्य नहीं है। वहुतसे मनुष्य पूंजीवालोंका; व्याज खानेवाले, सूदखोर, स्वार्थी इत्यादि नाम धरते हैं और समझते हैं कि व्याज लेना और दुनियाके मालको चुरा लेना वरावर है। इनके ये विचार भूल भरे हुए हैं। पूंजीवालोंको जो नफ़ा मिलता है वह वाजवी है। न्याय-सिद्ध है। वह सदा मिलना ही चाहिए। इस वातको फ्रांस देशके विद्वान् गृहस्थ वाशियाने नीचे लिखी हुई कहानीमें अच्छी तरह वतला दिया है। "एक गांवमें जेम्स नामका एक खाती था। वह वड़ा ही मिहनती था। एक दिन उसे ख़ियाल हुआ कि मेरे पास वसेला करोती और हथोड़ी ही है इससे काम उमदा नहीं होता और कमाई भी अच्छी नहीं होती। अगर मैं काम उम्दा बनाकर अपने ग्राहकोंका मन ख़ुश कर सकूंगा तो मुझे वहुत लाभ होगा। यों सोचकर उसने आठ दस दिनमें अपने लिये एक रद्दा वना लिया। रद्दा वना चुकनेके दूसरे दिन वह यह सोचता हुआ वैठा था कि इसके उपयोग करनेसे काम सफ़ाईसे होगा। इतनेमें ही पासके ही एक गांवका जान पहचानवाला खाती विलियम किसी कामके लिये आया। उसने इस रद्देको देखा और वहुत पसन्द किया। उसे यह भी मालूम हुआ कि इसके रखनेसे फ़ायदा होगा। उसने जेम्सको कहा:—

"आप मेरा एक काम कीजिए, यह रद्दा एक साल भरके लिये मुझे दीजिए"। जेम्सने कहा "यह कैसे हो सकता है ? मैं तुम्हारे इस कामको करूंगा इसके एवज़में तुम मेरा क्या काम करोगे ?"

बिलियम—"कुछ नहीं ? क्या आप नहीं जानते कि कोई वस्तु मांगी दी जाती है उसके एवज़में कुछ नहीं लिया जाता।"

जेम्स—"मैं यह कुछ नहीं जानता। मैंने जो रद्दा बनाया है सो कुछ किसीको देनेके लिये नहीं बनाया है।"

विलियम—"न बनाया सही, आपकी मरज़ी। अच्छा तो बतलाइये आप मेरा इतना काम करेंगे उसके एवज़में क्या चाहते हैं ?"

जेम्स—"अव्वल तो यह कि आप सालभर तक इस रद्देको काममें लावेंगे और इससे वह ख़त्म हो जायगा, अतएव आपको ऐसेका ऐसा नया रद्दा मुझे बना देना पड़ेगा"

विलियम—"यह बात वाजबी है। मुझे यह शर्त मंजूर है। मैं ख़्याल करता हूं कि आपको इतनेसे ही संतोष हो जायगा। ज़्यादा कुछ न चाहोगे। क्यों ठीक है न ?"

जेम्स—"नहीं भैया ऐसा नहीं है। मैंने रद्दा आपके लिये नहीं बनाया है, अपने ख़ुदके लिये बनाया है। और वह इस लिये बनाया है कि इसके ज़रियेसे कुछ फ़ायदा उठाऊं। अपना काम ज़्यादा सफ़ाईसे करके ग्राहकोंको रिझाऊं और ज़्यादा कमाऊं। साल भरके बाद अगर आप मुझे वापस रद्दाका रद्दा ही दें तो साल भरतक इसकी वजहसे होता हुआ फ़ायदा

सिर्फ़ आपको ही होगा, मुझे कुछ भी नहीं । अतएव कुछ बदला मिले बिना ऐसा लाभ आपको पहुंचानेके लिये मैं बँधा हुआ नहीं हूं । अगर आप सालभरके बाद रद्दा देनेके साथही साथ—साल भरतक रद्देको काममें न ला सकनेसे लाभ मैं न उठा सकूंगा उसके एवज़में एक पट्टा भी दें तो मैं रद्दा देता हूं ।" ये शर्तें दोनोंने क़ुबूल करलीं । परन्तु ज्यादा ख़ूबीकी वात तो यह है कि सालभरके बाद जब जेम्सके पास वापस रद्दा वग़ैरा आगया तब उसने फिर रद्दा किराये पर दिया और हमेशा ऐसा करने लगा ।" इस किस्सेसे क्या मतलव लेना है सो हम देखें । "रद्दा" पूंजीके तोरपर है और पट्टा सूदके तोरपर । जेम्सने अपना रद्दा विलियमको काममें लाने दिया । इसके एवज़में उसे "पट्टा" ज्यादा मिला । यह पट्टा उसे बिल्कुल वाज़वी तोरपर मिला इस बातको हम मानते हैं । इसी तरह पूंजीवाले अपनी पूंजी दूसरोंको काममें लानेके लिये देते हैं । उन्हें भी उसके एवज़में मूलके सिवाय व्याज मिलना ही चाहिए । यह बात कुछ अनुचित नहीं है । इस बातसे एक अनुमान और निकलता है । वह यह कि व्याज देनेसे उधार लेनेवालेको कुछ नुक़सान नहीं होता । जेम्स और विलियमने जो शर्तें कीं वे उन्होंने अपनी राज़ी ख़ुशीसे कीं । विलियमने जो जेम्सकी शर्तोंको मान लिया इसीसे सिद्ध होता है कि उसने ऐसा करनेमें अपना लाभ ही देखा होगा । उसे इस बातका विश्वास होना ही चाहिए कि सालभरके बाद जो मैं रद्दा" और विशेषतामें "पट्टा" दूंगा इसकी अपेक्षा साल भरतक रद्देको काममें लानेसे विशेष लाभ होगा.

पूंजीपर जो नफ़ा मिलता है उसमें तीन अंश मिले हुए होते हैं:—सूद, जोखमका पलटा और देखरेख रखनेके परिश्रमकी तनख्वा। किसी भी देशके सूदका दर जानना हो तो यह बात देखना चाहिए कि बे जोखम और बे परिश्रमवाले देन लेनमें क्या सूद मिलता है। हमारे देशमें, सेविंग बेंकमें रुपया रखनेवालेको रुपया डूबनेका कोई भय नहीं है और न उसे अपने रुपयेकी देखरेख रखनेका ही परिश्रम पड़ता है। इस रुपयेका व्याज उसे ३।।।) रुपये सैंकड़ा सालाना मिलता है। अर्थात् हमारे देशके साधारण व्याजका दर ३।।।) पौने-चार रुपये सैंकड़ा सालाना हुआ—यानी ।=) पाँच आने सैंकड़ा मासिक) हुआ। अब जो लेनदेन करनेमें इससे ज्यादा लाभ हो जाता है वह व्याजका साधारण भाव नहीं है। उसमें रुपया देनेवालेको अपना रुपया डूबनेके भयका जो जोखम होता है उसका पलटा होता है। रुपया उधार लेनेवालेकी जितनी साहूकारी कम होती है उसमें उतना ही ज्यादा रुपया डूबनेका भय रहता है। ऐसी सूरतमें रुपया देनेवाला ज्यादा पलटा चाहता है। अगर पूंजीका नफ़ा और पूंजीका सूद समानही हो तो कोई भी मनुष्य अपने रुपयेको किसी काम धंदेमें लगाकर जोखमको अपने सिरपर न उठावेगा। अगर व्यापार करनेमें ४) रुपये सैंकड़ेका ही लाभ सालभरमें होता हो तो व्यापारी वैसे जोखममें न पड़कर सरकारी प्रामेसरी नोट ख़रीदकर उतना व्याज सहजमें घर बैठे कमालेंगे। अगर ज्यादा प्राप्तिकी आशा न हो तो कौन अपने माथे जोखम उठावेगा? जिन कामोंमें जोखम और देखरेख रखनेका ज्यादा

परिश्रम पड़ता है उन कामोंमें पूंजीवालेको नफ़ा भी ज्यादा ही मिलता है। अलग २ काम धंदोंमें जितना इन दो बातोंमें फेर-फार होगा उतना ही उन २ कामोंमें लगी हुई पूंजीपर लाभ मिलनेमें भी फेरफार पड़ेगा।

साहूकारको थोड़े ब्याजपर ही रुपया मिल जायगा परन्तु औरोंको बहुत ब्याज देना पड़ेगा। इस लेखकने अपनी आँखोंसे यहां झालरापाटनमें देखा है कि कुंजलाल सनाढ्य ब्राह्मणके पास बहुतसे लोग आते थे और हाथ जोड़कर एक आना मासिक फ़ी रुपयेका लाभ देकर भी रुपये उधार लेजाते थे। अर्थात् सालभरमें एक रुपयेका पौने दो रुपया हो जाता था परन्तु इन लोगोंको कहीं भी रुपया न मिलता था। इनकी साख ही नहीं थी। ये लोग बहुत करके जुलाहे वग़ैरा होते थे। आखि-रकार कुंजलालको इन लोगोंने खा डाला, एक कोड़ी उसके पास न छोड़ी। उसे मन्दिरोंपर पखावज बजा २ कर अपना पेट भरना पड़ा और अखीरी अवस्थामें उसे इस लेखकके यहाँ नोकरी करनी पड़ी। बहुतसे अमीरोंके उड़ाऊ लड़के थोड़ेसे रुपये लेकर ज्यादाका ख़त लिख देते हैं या दूने देनेकी शर्तें कर लेते हैं। यह बात कुछ छुपी हुई नहीं है। ऐसा क्यों होता है ? होता है इसी लिये कि दुनियाको अपना रुपया वसूल होजानेका भरोसा नहीं होता ; अतएव वह जोखममें उतरती है। इस कारणसे उसे ज्यादा लाभ होना ही चाहिए। ऐसा जोखम उठाकर भी लोग दुनियाको रुपया देते हैं इसका कारण यही है कि कुछ सबकी सब उगाई मारी नहीं जाती— सब देनदार नादिहन्द नहीं हो जाते। एकको दिया हुआ मूल

और ब्याज नष्ट हो जाता है तो दूसरेकी आमदनीसे वह घाटा पूरा हो जाता है, एक बात और भी इस ज्यादा लाभ मिलनेमें कारण है। ऐसे नादिहन्द आदमियोंके साथ लेनदेन करनेवालेकी इज्जत नहीं होती। इन्हें इस बातका भी बदला मिलनेकी इच्छा होती है।

एक देशमें, एक ही समयमें, सारे काम धंदोंमें, ब्याजका दर एकही होना चाहिएः—अलग २ काम धंदोंमें जो नफ़ा मिलता है उसमें से जोखम, बे इज्जती और देखरेखके परिश्रमका बदला अलहदा कर दिया जाय तो केवल पूंजीका ब्याज रह जायगा। यह ब्याज हरेक देशके हरेक काम धंदोंमें जो स्पर्धा चल रही होगी तो एक समयमें एकसा होगा। किसान, गंधी, तेली, मोची, आदिके काम धंदोंमें लगाई हुई पूंजीपर, एक ही समय और एक ही देशमें, ब्याज तो बराबर ही मिलेगा, परन्तु, नफ़ेमें, जोखम, आबरू और देखरेखके परिश्रमके फेरफारके मुआफ़िक फेरफार होगा। अतएव यह कहना भूल भरा हुआ है कि अलग २ कामधंदोंमें नफ़ा एकसा होनेकी चेष्टा हुआ करती है। एक धंदेसे दूसरे धंदेमें जोखमकी कमी या बेशी होती ही है। इसीके मुआफ़िक नफ़ा कम या ज्यादा होना ही चाहिए। कई काम धंदे ऐसे होते हैं कि जिनमें और की अपेक्षा ज्यादा देखरेख रखनी पड़ती है। उनमें पूंजी लगानेसे इस परिश्रमका पलटा भीं मिलेहीगा। इससे यह सिद्ध होगया कि स्वाभाविक रीतिसे जुदे २ काम धंदोंके नफ़ेमें फेरफार होता ही है। हां, एक ही देशमें एक ही समयमें अलग-अलग कामोंमें लगाई हुई पूंजीके ब्याजका दरमात्र बराबर होता है।

जैसे २ सम्पत्ति और मनुष्यसंख्याकी वृद्धि होती है वैसे ही वैसे व्याजके दरमें कमी होती हैः—अब हम इसके कारणोंको खोजें कि ऐसा क्यों होता है? अर्थशास्त्री रिकार्डो-के लगान विषयक सिद्धान्तका यह उमदा उदाहरण हैं। मिह-नत और पूंजीका क्या बदला मिलना चाहिए इस बातका आधार आखिरकार उनकी उत्पादकशक्तिपर ही निर्भर है। यानी किसी भी कारणसे, जितनी पूंजी और परिश्रमसे पहले जितनी सम्पत्ति पैदा होती थी उतने ही परिश्रम और पूंजीसे फिर ज्यादा सम्पत्ति पैदा हो (और, और और बातोंमें कुछ फेरफार न हो) तो पूंजी और परिश्रमके बदलेमें ज्यादती हो-गी ही। इसी तरह किसी कारणसे उतनी ही पूंजी और परिश्रम लगाये जानेपर भी सम्पत्ति कम पैदा हो तो व्याज और तनख्वा-की कमी होना ही चाहिए। कल्पना करो कि एक मनुष्य २००) दो सौ रुपये लगाकर खेती करता है और ३००) तीन सौ पैदा करता है। इसमें उसे ५०) पचास रुपये सैंकड़ा पूंजी और परिश्रमका बदला मिला। अब उसे किसी कारणसे कम कस-वाली ज़मीन बोना पड़े और वह ४००) लगाकर ५००) पैदा करे तो उसे २५) रुपये सैंकड़ा पूंजी और परिश्रमका कम बदला मिला। जैसे जैसे खेती होनेकी सीमा उतरती जाती है— अर्थात् वस्तीकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिये जैसे जैसे कम दर्जेकी ज़मीनको बोना पड़ता है वैसे ही वैसे पूंजी और परिश्रमका बदला कम होता जाता है और लगान बढ़ता जाता है। क्योंकि लगान, खेतीकी सीमापर आई हुई ज़मीन और फल देनेवाली ज़मीनकी पैदावारका अन्तर ही है। यह बात

हम पहले बता गये हैं। रिकार्डोंके सिद्धान्तका वर्णन करते हुए हम कह आये हैं कि मनुष्यसंख्याके बढ़नेसे ख़ुराककी खपती बढ़ती है। इसे पूरी करनेके लिये कमसल और असुविधावाली ज़मीनको भी हांकनेकी ज़ुरूरत पड़ती है। इससे अनाज पैदा करनेका ख़र्च बढ़ जाता है यानी मिहनत और पूंजी ज़्यादा लगानी पड़ती है। जब मिहनत और पूंजी ज़्यादा लगे तो उनकी उत्पादकशक्ति कम हुई। इस शक्तिके कम होनेसे ब्याज और तनख़्वा कम होने ही चाहिए।

कम होती हुई उत्पादकशक्तिः—मनुष्यसंख्याके बढ़नेसे जो ख़ुराककी खपती बढ़ती है उसे अगर उसी ज़मीनसे पूरी की जाय जो अभी तक हकती है तो भी वही असर होगा जो हमने ऊपर लिखा है। अर्थात् तनख़्वा और ब्याज कम होगा। क्योंकि अनाज पैदा होते रहनेसे ज़मीनका कस सालों साल कम होता जाता है। अतएव हम अमुक ज़मीनमें दूनी पूंजी और दूना परिश्रम लगा दें तो भी दूना अनाज नहीं पैदा होगा। जिस परिमाणमें पूंजी और मिहनत ज़्यादा लगाई जाय उसी परिमाणमें पैदावार भी हो जाती हो तो दुनियाकी हालत ही कुछकी कुछ हो जाय। एक ही खेतमें सारे देशके मनुष्योंका पेट भरनेका अनाज पैदा हो और मनुष्यसंख्या इतनी बढ़े कि तिल रखनेको भी जगह न मिले।

नफ़े और तनख़्वामें कमी होनेकी सूरत क्यों होती रहती है और पुराने देशकी अपेक्षा नये देशमें नफ़े और तनख़्वाका दर क्यों ज़्यादा होता है यह बात कम होती हुई उत्पादकशक्तिके

नियमोंसे समझमें आयगा हमारे देशमें बरसोंसे खेती होती है। इससे यहांकी ज़मीनका कस कम हो गया है और दिनों दिन कम होता जाता है। परन्तु नये देशमें ज़मीन ताज़ा होती हैं। पुराने देशमें जितने पूंजी और परिश्रमके लगानेसे जो माल पैदा होता है, नये देशमें उतने ही पूंजी और परिश्रमके लगानेसे उससे बहुत ज्यादा माल पैदा होता है। मालके ज्यादा पैदा होनेसे मिहनत और पूंजीका बदला ज्यादा मिलना ही चाहिए। यह बात इंग्लेंड और आस्ट्रेलियाके हालातका मुक़ाबला करनेसे सिद्ध हो जायगी। इंग्लेंडमें खेती होनेकी सीमा बहुत नीची उतरी हुई है और आस्ट्रेलियामें ऐसी ज़मीनभी हांकी जाती है जिसे कोई सूंघे भी नहीं। इंग्लेंडमें जितनी मिहनत और पूंजी लगाई जाती है उतनी ही मिहनत और पूंजीसे आस्ट्रेलियाकी खेतीमें इंग्लेंडकी अपेक्षा ज्यादा माल पैदा होता है। इसीसे आस्ट्रेलियामें मिहनत और पूंजीका बदला (तनख्वा और नफ़ा) ज्यादा मिलता है। इससे यह पाया जाता है कि मिहनतके बदलेमें जो तनख्वा मिलती है उसकी कमी व बेशीपर नफ़ेका आधार नहीं है; नफ़ेका आधार तो—अगर और और बातोंमें कुछ फ़रक न हुआ हो तो—मिहनतकी उत्पादकशक्ति और तनख्वाके अन्तरपर है। अच्छा, सोचिए कि एक देशमें अमुक धंदेमें तनख्वा १) एक रुपया रोज़ दी जाती है और दूसरे देशमें २) दो रुपया रोज़। इस हालतमें यह नहीं कहा जासकता कि पहले देशमें दूसरे देशकी अपेक्षा ज्यादा नफ़ा मिलेगा। क्योंकि नफ़ेका आधार काम-करनेवालोंकी उत्पादकशक्तिपर है। अगर पहले देशमें १) एक रुपया रोज़ लेनेवालेकी मिहनतसे ४) चार रुपये पैदा होते हों

और २) दो रुपया रोज़ लेनेवालेकी मिहनतसे १०) दस रुपये दूसरे देशमें, तो दूसरे देशका मज़दूर उलटा सस्ता हुआ। और २) दो रुपया रोज़ देनेपर भी ज़्यादा नफ़ा मिला। आस्ट्रेलियामें इंग्लेंडसे ज़्यादा तनख़्वा देनी पड़ती है। परन्तु फिर भी वहांपर उत्पादकख़र्च सस्ता पड़ता है, क्योंकि इंग्लेंडकी अपेक्षा वहांपर सम्पत्ति ख़ूब पैदा होती है। यह बात इस बातसे साफ़ तौरपर मालूम हो जाती है कि वहांपर इंग्लेंडकी अपेक्षा बहुत ज़्यादा लाभ होता है और व्याजभी ज़्यादा मिलता है।

चीज़ोंकी क़ीमतके बढ़नेसे यह नहीं कहा जासकता कि नफ़ा भी बढ़ जाता है:—चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ गई तो नफ़ा भी बढ़ गया यह मानना भूल है। हां, यह बात सही है कि किसी चीज़की एकाएक खपती बढ़ जाती है तो कुछ समयके लिये साधारण लाभ और तनख़्वाके दरसे ज़्यादा फ़ायदा होजाता है, परन्तु यह लाभ चिरस्थायी नहीं होता, क्योंकि और और लोग भी स्पर्धाके मैदानमें आखड़े होते हैं। जहांपर अनियंत्रित स्पर्धा होती है वहांपर क़ीमत सदा उत्पादकख़र्चके अनुसार स्थिर होती है। हम पहले बतला चुके हैं कि चीज़ोंकी क़ीमतके बढ़नेसे तनख़्वाका दर बढ़ता हो सो नहीं है। नफ़ेका भी यही हाल है। हम इस बातको समझनेके लिये सूती कपड़ेका ही उदाहरण लें। उत्पादकख़र्चमें तीन अंश होते हैं मिहनत, अनुपभोग और जोखम; और किसी चीज़का उत्पादकख़र्च कर लगनेसे भी बढ़ जाता है। इन चारों अंशोंमें किसीभी अंशके बढ़नेसे पदार्थोंकी क़ीमत बढ़ जायगी, कारण विशेषसे रूई पैदा करनेमें ज़्यादा मिहनत करनी पड़े और रूई महँगी होजाय, या

रूईपर अथवा सूती कपड़ोंपर कर लगजाय, तो सूती कपड़ोंकी क़ीमत ज्यादा होजायगी परन्तु इससे कपड़े बनानेके लिये लगाई हुई पूंजीपर कुछ ज्यादा नफ़ा न मिलेगा। कभी तो ऐसा हो जाना संम्भव है कि उत्पादकख़र्चके और अंशोंका ख़र्च ज्यादा होजानेसे पूंजीका नफ़ा और भी कम होजाय। अर्थात् पदार्थोंकी क़ीमत ज्यादा हो और नफ़ेका दर कम हो जाय। अमेरिकाकी लड़ाईके वक्त रूई मिलना कठिन होगया था उसका भाव बहुत तेज़ होगया था। इससे सूती कपड़ा बहुत महँगा होगया था। परन्तु उन कपड़े बनानेवालोंको नुक़सान रहता था। तनख्वाहें बहुत कम होगईं थीं, चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ जानेसे सदा ज्यादा लाभ नहीं होता रहता। यह बात थोड़ासा विचार करनेसे ही जान पड़ेगी। नफ़ेका दर भी एक परिमाण है। वह कितना है इस बातका ज्ञान केवल एक ही अंशके विचार करनेसे नहीं होसकता। इसके लिये यह देखना चाहिए कि इस अंशका और और अंशोंके साथ क्या सम्बन्ध है? वास्तवमें देखा जाय तो व्याजके दरका आधार उत्पादकख़र्च के अन्यान्य अंश सस्ते पड़ते हैं या महँगे, इस बातपर है और इन अंशोंमें भी मुख्यकर परिश्रमके बदलेके ख़र्चपर यानी तनख्वा पर। हम कई बार बतलाचुके हैं कि परिश्रम और पूंजीके योगसे उत्पन्न हुई चीज़की क़ीमतमें व्याज और तनख्वा वसूल होजाना चाहिए। अच्छा, तो इस उत्पन्न हुई सम्पत्तिमें जितना अधिक अंश तनख्वाका है उतना ही कम नफ़ा है और जितना कम अंश तनख्वाका है उतना ही अधिक नफ़ा है। मतलब यह है कि मज़दूरी और पूंजीसे बनी हुई चीज़में मज़दूरी ख़र्च कम हुआ

होगा तो नफ़ा ज़्यादा मिलेगा और मज़दूरी ख़र्च ज़्यादा हुआ होगा तो नफ़ा कम।

मज़दूरी ख़र्चका आधार किसपर है? अब इस बातको जानना ज़ुरूरी है कि पूंजीवालेको जो मज़दूरी ख़र्च करना पड़ता है उसका आधार किस बातपर है? विद्वान् मिल कहता है कि पूंजीवालेको जो मज़दूरी ख़र्च करना पड़ता है वह तीन बातोंसे निश्चय किया जाता है और उनमें हमेशा फेरफार होते रहते हैं

(१) मिहनत की उत्पादकशक्ति

(२) तनख्वा (यहांपर तनख्वासे मुराद वास्तविक तनख्वासे है यानी कारीगर जिससे अपने जीवनोपयोगी सामान ख़रीदते हैं)

(३) जीवनोपयोगी सामानके बनानेमें या ख़रीदनेमें कम या ज़्यादा ख़र्चका होना।

मिहनतकी उत्पादकशक्ति बढ़ जाय और तनख्वा एवं जीवनोपयोगी सामानके ख़र्चमें कुछ फेरफार न हो तो पूंजीवालेका मजदूरी ख़र्च कम होगा। इसी तरह तनख्वा बढ़ जाय और उत्पादकशक्तिमें बढ़ती न हो तो पूंजीवालेका मज़दूरी ख़र्च बढ़ जायगा।

जीवनोपयोगी सामान सस्ते हो जाँय और काम करनेवाले उन्हें ज़्यादा तादादमें काममें न लाने लगें तो तनख्वा कम लगेगी और पूंजीवालेका मज़दूरी ख़र्च घट जायगा।

अमुक मिहनत और पूंजीके योगसे जो सम्पत्ति पैदा होती है उसमेंसे मिहनतको कितना हिस्सा मिलता है इसपर नफ़ेका

आधार है और थोड़ासा विचार करनेपर यह भी मालूम हो जायगा कि नफ़ेके सामान्य दरमें जो फेरफार होता है वह ऊपर लिखे हुए कारणोंमें फेरफार होनेके कारण ही होता है।

एक उदाहरणः—आस्ट्रेलिया जैसे देशमें उत्तम पैदावाली मनमानी ज़मीन है। इससे वहांपर मिहनतकी उत्पादकशक्ति ख़ूब बढ़ी चढ़ी है और जीवनोपयोगी सामान भी वहाँपर सस्ता मिलता है। यही कारण है कि वहांपर नफ़ा भी ख़ूब होता है और तनख्वा भी ख़ूब मिलती है।

तनख्वा इतनी बढ़ जाय कि काम लेनेवालोंको साधारण नफ़ा भी न मिल सके तो आख़िरकार इससे काम करनेवालोंको कुछ फ़ायदा न होगा:—हम पहले ही यह बतला आये हैं कि किसी धंदेमें तनख्वाका भाव बहुत बढ़ जानेसे यदि नफ़ेका साधारण दर भी कम हो जाय तो आख़िरकार उस धंदेमें लगे हुए कारीगरोंको सदाके लिये लाभ न होगा। परन्तु इसपर कोई यह कहेगा कि देशके सब कारीगर एकाकर ज्यादा तनख्वा मांगे तो पूंजी और परिश्रमसे पैदा की हुई सम्पत्तिमें से ज्यादा लाभ उठा सकेंगे और पूंजीके नफ़ेका दर कम हो जायगा। अव्वल तो ऐसा करनेके लिये सब प्रकारके धंदोंके कारीगरोंको एकमत होना चाहिए और दूसरे इसमें भांति-भांतिकी अड़चनें आसकती हैं। अच्छा, कल्पना कीजिए कि ऐसा हो भी गया कि कारीगरोंको ज्यादा तनख्वा भी मिलने लगी और ब्याजका दर ।-) पांच आने सैंकड़ा मासिकसे कम होकर =) सैंकड़ा मासिक रह गया। अब इसका परिणाम क्या होगा? सो हम देखें। ब्याजके दरमें इस तरहकी कमी होनेसे देशकी पूंजी दो

तरहसे घटेगी और इससे तनख़्वा पीछी कम हो जायगी। ब्याजका दर ऊंचा होनेसे लोगोंकी इच्छा पूंजी बढ़ानेकी ओर होती है और कम हो जानेसे वैसी इच्छा नहीं रहती। भला कौन चाहेगा कि सिर्फ़ १॥) साल भरमें मिलनेके लिये पेटमें आंटी लगा लगाकर मनुष्य १००) रुपया इकट्ठा करे। और जिसके पास रुपया है वह भी इतनेसे लाभके लिये न तो रुपये-को ब्याजपर ही देगा और न किसी काम धंदेमें ही लगावेगा। या तो वह ऐशआराममें लगा देगा या ज़मीनमें गाड़ देगा। ऐसा होनेसे सम्पत्ति पूंजीके तोरपर काममें आती हुई रुक जावेगी। कुछ मनुष्य ऐसे भी होंगे जो रुपयेको इस तरह डाल रखना मुनासिब न समझेंगे परन्तु वे सोचेंगे कि इतने कम ब्या-जपर अपना पूरा नहीं पड़ता इस रुपयेको ऐसी जगह लगाना चाहिए जहांपर ज़्यादा ब्याज मिले, और अपने रुपयेको और और देशोंमें भेज देंगे। इस तरह देशकी पूंजी कम हो जायगी। देशकी पूंजीके दो भाग होते हैं, स्थावर पूंजी और जंगम पूंजी। देशकी पूंजी कम होनेसे दोनों प्रकारकी पूंजी कम होती है। जंगम पूंजीका ही दूसरा नाम तनख़्वा देनेका भंडार है। इसके कम होनेसे तनख़्वा कम हो ही जायगी। हमारे इस लिखनेसे यह बात ध्यानमें आजाती है कि देशमें ब्याजके दरकी बहुत कमी हो जानेसे पूंजीका बढ़ना रुक जाता है और पूंजी विदेश चली जाती है, ऐसा होनेसे देशकी सारी पूंजी कम होती है, उसीके अंगमें जंगम पूंजी कम हो जाती है और अन्तमें तनख़्वा कम हो ही जाती है।

कारीगरोंके ज़्यादा तनख़्वा मांगनेसे जो ब्याजका दर बहुत

कम हो जाय तो जंगम पूंजीकी कमी अवश्यम्भावी है और इससे मज़दूर लोगोंकी भारी दुर्दशाका होना निश्चित है। थोड़े काल तक जो उन्हें ज्यादा तनख्वा मिलती है, इससे उनकी संख्या बढ़ती है, इसका बुरा फल उस वक्त देख पड़ता है जब तनख्वा पीछी घट जाती है। एक ओर तनख्वा कम होजाती है और दूसरी ओर खानेवाले होते हैं ज्यादा, परिणाममें भूखों मरनेकी नोबत आपहुंचती है।

पूंजी परदेशमें जानेसे स्पर्धाका प्रदेश बढ़ता है:—हम पहले समझा आये हैं कि किसी धंदेमें जब बहुत लाभ मिलता होता है तब और पूंजीवाले उस धंदेमें आकूदते हैं और इनकी स्पर्धाके कारण उस धंदेमें साधारण लाभ रह जाता है। जैसे एक देशमें अलग काम धंदोंमें स्पर्धा होती है वैसे ही अलग २ देशोंमें भी थोड़ी बहुत स्पर्धा होती है। परन्तु जितने ज़ोर से अलग २ काम धंदोंकी स्पर्धा होती है अलग २ देशोंकी नहीं होती। अपने गांवमें या अपने देशमें ४) रुपये सैंकड़ा वार्षिक ब्याज मिलजाय तो बहुतसे मनुष्य अपने रुपयेको वहीं लगावेंगे परदेशमें नहीं। क्योंकि परदेशमें पूंजी लगानेसे उसकी देखरेख रखनेमें बड़ी मुसीबतें उठानी होती हैं। परन्तु जैसे जैसे विद्याकी उन्नति होती जाती है और परदेशका आना जाना सुगम होता जाता है, वैसे वैसे अलग अलग देशोंमें स्पर्धा होने लगी है। सम्पत्तिविभागकी मुख्य तीन बातोंका विचार हम करचुके। परन्तु इस भागको पूरा करनेके पहले महाजन और हड़ताल—पूंजी और परिश्रमके एकीकरणका, नफ़े और तनख्वा पर क्या असर होता है, इस बातका हम एक प्रकरणमें विचार करेंगे।

प्रश्न.

(१) पूंजीके नफ़ेका सच्चा स्वरूप क्या है ?

(२) उदाहरण देकर समझाओ कि पूंजीवालेको नफ़ा मिलना वाजबी है और वह सदा मिलना ही चाहिए।

(३) पूंजीके नफ़ेमें कौनसे तीन अंश है ?

(४) पूंजीका ब्याज किसे कहते हैं ? किसी भी देशमें अमुक समय ब्याज किस तरह निश्चित किया जासकता है ?

(५) अलग २ कामधंदोंके करनेमें कौनसे कारणसे नफ़ेमें फेरफार होता है ?

(६) मालकी रक्षा न हो तो नफ़ेपर क्या असर होगा ?

(७) एक ही देशमें एक ही समय, ब्याजके दरमें फेरफार होसकता है ?

(८) मनुष्यसंख्याके बढ़नेसे ब्याजका दर क्यों कम होता है ?

(९) उदाहरण देकर समझाओ कि "खेतीहोनेकी सीमा"के उतरनेसे ब्याजका दर कम होजाता है।

(१०) कभी कभी जो कहा जाता है कि तनख्वाके दर-पर नफ़ेका आधार है यह क्यों ठीक नहीं है ? और नफ़ेका आधार वास्तवमें किस बातपर है ?

(११) चीज़ोंकी क़ीमत ज्यादा होनेसे क्या ज्यादा नफ़ा भी होना ही चाहिए ?

(१२) उदाहरण देकर समझाओ कि चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ जानेपर भी कभी कभी नफ़ेका दर कम हो जाता है।

(१३) पूंजीवालेके मज़दूरी ख़र्चेका आधार किसपर है ?

(१४) किसी देशमें व्याजका दर कम होजानेसे उस देशकी पूंजी कौनसे दो प्रकारसे कम होती है ?

(१५) इस तरह पूंजीके कम होनेसे मज़दूरोंकी हालतपर क्या असर पड़ता है ?

(१६) पूंजीके परदेश जानेसे नफ़े पर क्या असर पड़ता है ?

(१७) एक देशके अलग २ काम धंदोंमें जिस ज़ोर शोरसे स्पर्धा चलती है अलग अलग देशोंमें क्यों नहीं चलती ?

विशेष प्रश्न.

(१) सट्टा करनेवालेको खेती करनेवालेकी अपेक्षा जब मिलता है तब ज्यादा नफ़ा क्यों मिल जाता है ?

(२) सूदख़ोर होना पाप है ? अमुक दरसे ज्यादा कोई व्याज न ले अगर ऐसा कानून पास कर दिया जाय तो कुछ फ़ायदा होना सम्भव है ?

(३) कल्पना करो कि दुनियाभरके कारीगरोंने एकाकर इतनी ज्यादा तनख़्वा लेना शुरू कर दिया कि सम्पत्ति पैदा करनेमें लगी हुई पूंजीको कुछ भी लाभका अंश नहीं मिलता। इस बातका सम्पत्तिके उत्पादन और सब लोगोंके अमनचैनपर क्या असर पड़ेगा ?

(५) इस बातको समझाओ कि नफ़ेका ज्यादा होना कभी देशकी उत्तम स्थितिको ज़ाहिर करता है और कभी अधम स्थितिको।

चौथा प्रकरण।

पञ्चायती, हड़ताल, और पूंजी व परिश्रम-के मेलमिलापका करना।

पञ्चायतीः—हमारे देशमें कहीं कहीं प्रत्येक काम धंदेमें लगे हुए मनुष्योंकी पञ्चायती होती है। जैसेः—सिलावटोंकी पञ्चायती, खातियोंकी पञ्चायती, सुनारोंकी पञ्चायती, नाइयोंकी पञ्चायती, धोबियोंकी पञ्चायती इत्यादि। इन पञ्चायतियोंमें यह निश्चय कर लिया जाता है कि अमुक कामके लिये मज़दूरी करनेमें इतना रोज़गार लेना चाहिए और यह भी ठहरा लिया जाता है कि इस बातका अमल कबसे और कैसे किया जाय? परन्तु इंग्लेंड-की हालत कुछ और ही है। वहांपर प्रत्येक धंदेकी पञ्चायतियाँ हैं। इन्हें एक तरहकी व्यवसाय-समितियाँ समझिये। इनमें एक ख़ास तरहकी ख़ूबी है और उसको भारतवालोंको अपना आदर्श बनाना चाहिए। कारीगर लोग इन समितियोंके मेम्बर हो जाते हैं और अमुक रक़म चंदेमें देते रहते हैं। इससे समि-तिके पास एक कोष हो जाता है। समिति अपने मेम्बरोंके स्वार्थकी रक्षा करनेमें बराबर लगी रहती है। अगर समितिका मेम्बर बीमार हो जाय, या उसे किसी कारणसे बेरोज़गार बैठा रहना पड़े तो समितिके कोषसे उसे सहायता दी जाती है और जो वह मर जाय तो उसके बाल बच्चे और स्त्रीको अमुक रक़म दी जाती है। हमारे देशमें भी इस तरहकी प्रथा पञ्चाय-तियोंमें जारी हो जाय तो बड़ा लाभ हो। क्योंकि मज़दूर लोग अज्ञान हैं और उन्हें भविष्यतकी कुछ चिन्ता न होनेसे कुछ

बचाकर नहीं रखते, शराब पीने करनेमें पैसा उड़ा देते हैं। अगर पञ्चायतियोंमें इस तरहकी रीति जारी हो जाय तो उन्हें अमुक रक़म तो अवश्य बचाकर जमा करना ही पड़े। इससे उन्हें दो प्रकारका फ़ायदा हो अव्वल तो दुर्व्यसन छूटकर उन्हें शारीरिक लाभ हो और दूसरे बेकारीके वक्त गुजरान चले। इसके सिवा अगर कोई मर भी जाय तो उसके बाल बच्चे और स्त्री आदिको घर घर न भीख माँगना पड़े। इंग्लेंडमें इस तरह व्यवसाय समितियोंके पास कारीगरोंके चंदोंसे इकट्ठा हुआ कोष होता ही है। अब ये समितियां देखती हैं कि कहीं कारखानेके मालिक कारीगरोंसे ज्यादा काम लेकर कम तनख्वा तो नहीं देते है। यदि वे ऐसा देखती हैं तो कारखानेवालोंसे लिखा पढ़ी कर तनख्वा बढ़वाती है और लिखा पढ़ी करने पर भी जो कारखानेवाले सुनी अनसुनी कर जाते हैं, तो ये समितियाँ कारीगरोंका पोषण अपने कोपसे करती हैं और हड़ताल डलवा देती हैं। फल यह होता है कि कारखानेवाले अपना भावी नुक़सान सोचकर तनख्वा बढ़ा देते हैं।

हड़तालः—कारखानेवाले कारीगरकी मिहनतको जितनेमें ख़रीदना चाहे उतनेमें अपनी मिहनतको बेचनेसे कारीगर इंकार करदे इसीका नाम हड़ताल हैं। कल्पना करो कि विष्णुदास बहुत अच्छी घड़ियां बनाता है और कहता है कि मैं अपनी घड़ी २५) रुपयेसे कममें नहीं बेचता तो उसे ऐसा कहनेका हक़ है। जो उससे घड़ी लेना चाहे वह २५) ख़र्च करे। उसे कोई मजबूर नहीं कर सकता कि तू अपनी घड़ी २४।।।≡ ११ चौबीस रुपये पन्दरह आने ग्यारह पाईमें भी दे दे। जिस तरह विष्णु-

दासका ऐसा कहनेका हक़ है, वैसे ही हरेक कारीगरका हक़ है कि वह अपनी मिहनतको जितनेमें चाहे बैचे-यानी जो चाहे तनख्वा मांगे। जब एक शख्सका ऐसा हक़ है तब, क्या सौका और क्या दो सौका, सभीका ऐसा हक़ है। जब बहुतसे लोग मिलकर इस तरह ज्यादा तनख्वा मांगते हैं और नहीं मिलनेपर एक साथ काम करना बन्द कर देते हैं तो हड़ताल कहलाती है। हड़ताल करना अच्छा है या बुरा? जो अच्छा भी है और बुरा भी है? तो किस हालतमें अच्छा है? और किस हालतमें बुरा? समझदारीका काम है या नहीं? इन सब बातोंको दूर रक्खें तो कोई यह नहीं कह सकता कि यह काम नीति-विरुद्ध है और छोड़ देने योग्य है। हमारे ख्यालमें हरेक मनुष्यको इस बातका अधिकार है कि वह अपनी इच्छाके अनुसार काम करे, परन्तु शर्त यह है कि उसे किसी दूसरोंके हक़पर हाथ न डालना चाहिए। जो मज़दूर इस विचारके मुआफ़िक काम करें तो उनके कट्टर दुश्मन भी कुछ ऐब नहीं बतला सकते। परन्तु मज़दूर लोग उन शख्सोंको भी अपनी टोलीमें शामिल करना चाहते हैं जो उनकी टोलीमें मिलना पसन्द नहीं करते। इस तरह औरोंकी स्वतन्त्रतापर ज़बरदस्ती करना ठीक नहीं। इंग्लेंडमें प्रायः इस तरहका हुआ है। मारामारी, लप्पा-डुक्की और खूनखच्चरतक हो गया है। अमुक काम करनेवालोंने हड़ताल की। अगर उस कामको करनेके लिये और २ तरहके कारीगर आये तो उन्हींके साथ ये लोग भिड़ बैठे और काम न करनेके लिये मजबूर किया। यद्यपि ऐसा होना ठीक नहीं परन्तु इससे यह बात नहीं कही जासकती

कि कारीगरोंका, एका करके अपने हक्कोंको पानेके लिये कानूनके अविरुद्ध उपाय करना—और वे भी अपनी इच्छाके अनुसार करना—अनुचित है।

ऊपर हमने व्यवसाय समितियोंका ज़िक्र किया है। ज़हांपर ऐसी समितियाँ होतीं हैं वहांपर मज़दूरोंको कारख़ानेवालोंके साथ अपनी तनख्वा वाजबी ठहरानेका सुभीता होता है। कारख़ानेवालोंको कारीगरके न मिलनेपर सिर्फ़ रुपये पैसेकी हानि होती है परन्तु कारीगरोंको अगर काम न मिले तो भूखों मरते फिरनेकी बारी आजाती है। अतएव अगर कारीगरोंमें एका न हो और समितिके कोषसे कारीगरोंके पोषणकी व्यवस्था न की गई हो तो बिचारे कारीगरोंको कारख़ानेवाले जो कुछ दें उसीमें काम करना पड़े। इंग्लेंडमें, जबतक हड़ताल रहती है तबतक कारीगरोंका गुज़ारा व्यवसाय समितियोंके कोषसे चलाया जाता है। और इसीसे वहांके मज़दूर कारख़ानेवालोंका मुक़ाबला कर सकते हैं। भारतमें ऐसी समितियाँ न होनेसे यहांकी हड़तालें वैसी कार्यकारिणी नहीं होती। इसका अनुभव तारबाबू व रेलवे कर्मचारियोंकी हड़तालसे हो चुका है।

व्यवसाय समितियाँ कारीगरोंको ज्यादा तनख्वा दिलानेके उपाय किया करती हैं:—हम ऊपर कह आये हैं कि समितियोंका काम अपने मेम्बरोंको जितना मुमकिन हो ज्यादा तनख्वा दिलानेका है। तनख्वाकी कमी वेशीका आधार जंगम पूंजी और तनख्वा लेनेवालोंके परिमाणपर निर्भर है। जंगम पूंजी ज्यादा है और तनख्वा लेनेवाले कम, तो तनख्वा बढ़ जायगी और जंगम पूंजी कम है और तनख्वा लेनेवाले ज्यादा

तो तनख्वा कम हो जायगी। अर्थशास्त्रका यह सिद्धान्त ही है। समितिवाले इस बातको जानते हैं। परन्तु इस सिद्धान्तको वे सारे देशके मज़दूरोंके साथ नहीं संघटित करते वे अपनी समितिके कारीगरोंके साथ ही इसको घटाते हैं। वे ऐसे ऐसे उपाय सोचते हैं कि अमुक काममें बहुतसे मज़दूर न भरजाँय। जैसे इंग्लेंडमें जहाज़ बनानेवाले कारीगरोंकी समिति इस बातका उपाय करेगी कि जहाज़ बनानेके काममें और और मज़दूर न आ घुसें। वह ऐसे ऐसे नियम बनाती है कि कोई शख़्स जिसने सात बरसतक जहाज़ बनानेका काम न सीखा हो जहाज़ बनवानेवालोंके यहांपर कामपर न रक्खा जावे। अगर कोई जहाज़ बनानेवाला व्यापारी ऐसे शख़्सको रखलेगा तो और सब कारीगर काम करना छोड़ देंगे। इस तरह कारीगरोंकी तादाद नहीं बढ़नेपाती और समितिके मेम्बरोंको ज्यादा तनख्वा मिलती है। हमारे भारतमें भी कहीं कहीं मज़दूरोंकी पञ्चायतियोंमें इस तरहके नियम होने लगे हैं, जैसे:—सुनारोंकी पञ्चायतीमें कुछ मनुष्योंके लिये सोनेका ही काम करनेका और कुछको चांदीका ही काम करनेका ठहराया जानेलगा है और कुम्हारोंमें कुछके लिये ईंटें केलू आदि बनानेका और कुछके लिये घड़ा मटकी वग़ैरा बनाने का। इस तरह कार्यविभाग होनेसे स्पर्धा कम होजाती है और कारीगरोंको अधिक लाभ होता है।

वकील, बैरिस्टर और डाक्टरोंमें भी मज़दूरीका दर अपनी आपसकी सलाहसे निश्चित किया हुआ होता है। इन लोगोंका नियम होता है कि कोई शख़्स ठहराली हुई फ़ीससे कम लेलेता है तो उसे अपनी समितिसे न्यारा करदेते हैं।

जैसे काम करनेवाले एकाकर ज्यादा तनख्वा लेनेके लिये हड़ताल कर देते हैं वैसे ही पूंजीवाले भी एकाकर द्वारावरोधके ज़रियेसे कारीगरोंकी तनख्वा कम करदेते हैं। इंग्लैंडमें जुदे जुदे कारखानेवालोंकी जुदी जुदी सभाएँ हैं। जैसे कपड़ोंके कारखाने-वालोंकी सभा, लोहेके कारखानेवालोंकी सभा इत्यादि। जब इन कारखानेवालोंको तनख्वा कम करना होता है तो सब मिलकर ठहराव कर लेते हैं और एकदम तनख्वा कम कर-देते हैं।

जब कारखानेवालोंमें भी एका होता है और कारीगरोंमें भी एका होता है तब इन दोनोंमें हित विरोध होता है। कारखाने-वालोंका जिसमें हित होता है कारीगरोंका नहीं होता और कारी-गरोंका जिसमें हित होता है कारखानेवालोंका नहीं होता—दोनों एक दूसरेके विरुद्ध होते हैं। जब कारखानेवाले कम तनख्वा देना चाहते हैं कारीगर लोग मिलकर हड़ताल कर देते हैं और जब कारीगर ज्यादा तनख्वा चाहते हैं कारखानेवाले मिलकर उन्हें कामसे छुड़ा देते हैं। ऐसी सूरतमें जबतक कोई एक पक्ष अपनी हार न मानले या दोनों पक्ष कुछ कमी बेशी-कर राज़ी न हो जाँय तबतक सम्पत्तिकी उत्पत्ति सर्वथा बंद रहती है।

मेल मिलापः—अभी हमने जो बतलाया कि कारखानेवाले और कारीगरोंका हित विरोध है। इसे दूरकर मेल मिलाप कर देने, या यों कहिए कि दोनोंके हितका एकीकरण कर-नेके लिये अर्थात् कारखानेवाले और कारीगरोंको अपना स्वार्थ एक ही बातमें मालूम हो इसके लिये बहुतसी तरकीबें निकाली

गई हैं। इन सब तरकीबोंकी जड़ यह है कि अमुक काम धंदेके खूब चलनेसे उस कामके करनेवाले कारीगरको अपना प्रत्यक्ष लाभ नजर आना चाहिए। यह तब हो सकता है कि जब उक्त काम धंदेमें सारी या किसी अंशमें कारीगरोंकी भी पूंजी लगी हो। जब सारीकी सारी पूंजी कारीगरोंकी ही होती है तब तो परिश्रम और पूंजीमें स्वप्नमें भी विरुद्धपक्ष नहीं होता और जब कारीगरोंका पूंजीमें कुछ हिस्सा ही होता है तब भी विरुद्धता नहीं प्रकट होती क्योंकि विरुद्धताकी हानि उन्हें भी तो उठानी पड़ती है। इसे साझेका व्यापार कहते हैं। इन दो तरकीबोंके सिवाय पूंजी और परिश्रमके स्वार्थ-का मिलाप करनेकी एक और तरकीब है। इस तरकीबमें कारी-गरका पूंजीमें हिस्सा रखनेकी भी कोई ज़ुरूरत नहीं है। वह यह है कि कारख़ानेवाले और कारीगरोंमें इस तरहकी शर्त पह-लेसे ही हो जाय कि अमुक रक़मसे जितना ज़्यादा फ़ायदा होगा उसे सिर्फ़ कारख़ानेवाला ही न ले लेगा बल्कि कारीगरों-को भी उसमेंसे हिस्सा देगा। इस शर्तसे कारीगर अपने स्वार्थके लिये ऐसी तनदिहीसे काम करेंगे कि जैसे बने वैसे ज़्यादा नफ़ा रहे। वे औज़ारोंका भी उपयोग बड़ी संभालसे करेंगे कि वे जल्दी ख़राब न हो जाँय। उत्पादनख़र्च कम होगा, नफ़ा ज़्यादा रहेगा और कारीगरोंको ज़्यादा लाभ पहुंचेगा। इस तरकीबमें एह बात ध्यान देने लायक़ है कि कारीगरोंको जो यह विशेष लाभ पहुंचता है वह कुछ कारख़ानेवालोंकी जेबसे नहीं पहुंचता। अगर कारीगरोंको इस तरह प्रत्यक्ष लाभ न पहुंचे तो कारख़ानेवालेको विशेष लाभ हो ही नहीं सकता।

कारीगरोंको इस तरहका प्रत्यक्ष लाभ पहुंचानेसे वे अपना काम बड़ी होशियारीसे और बड़े परिश्रमसे करते हैं परिणाममें कारख़ानेवालेको हमेशा बहुत फ़ायदा होता है। इस तरहकी तरक़ीबसे कारख़ानेवालेको नुक़सान नहीं होता, बल्कि बहुत फ़ायदा होता है और कारीगरभी ज्यादा कमाकर सुखी होते हैं।

साझेकी और अधिक लाभको बांट लेनेकी तरकीबें बड़ी अच्छी हैं। इसके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। नफ़ेको बांट लेनेका एक बहुत अच्छा उदाहरण फ्रांसका है। उसे हम यहां लिखते हैं। फ्रांसमें "लेकलेर" नामका कारीगर था वह ज्यों त्यों कर पहले रुपया सवा रुपया रोज़ कमा लेता था परन्तु फिर अपनी बुद्धिमानी और होशियारीसे ज्यादा कमाने लगा। उसने पूंजी जमा करली और अपना कारख़ाना खोल दिया। थोड़ें अर्सेके बाद उसे दो ख्याल पैदा हुए। एक तो यह कि मेरे कारख़ानेमें काम करनेवाला हरेक कारीगर ज्यादा तनदिहीके साथ काम करे तो वह एक समय प्रतिदिन चार चार आने रोज़का ज्यादा काम करने लग जाय या नहीं? और दूसरे यह कि औज़ारोंको संभालके साथ काममें लावे तो प्रतिदिन =) दो आने रोज़का कम नुक़सान होगा या क्या? अगर ऐसा हो जाय तो क्या फल निकले? उसने ऐसा सोचा और हिसाब लगाया तो उसे मालूम हुआ कि ऐसा हो जाय तो ३००००) तीस हज़ार रुपयेका सालों साल ज्यादा नफ़ा मिले। इस तरह विचार कर कारीगरोंका उत्साह बढ़ानेके लिये उसने कहा कि मुझे इस वक़्त जितना नफ़ा मिलता है

उससे जितना ज्यादा नफ़ा होगा उसे मैं अकेला नहीं रक्खूंगा अपने कारीगरोंके भी बांट कर दूंगा। इस कामसे उसकी इच्छा पूरी हुई। काम खूब होने लगा। कारीगरोंमें बांटनेकी रक़म हरसाल बढ़ती गई। इस तरकीबको वह सन् १८४१ में काममें लाया। १८४२ से १८८२ तक ज्यादतीके नफ़ेमेंसे १२५५-८००) बारह लाख पचपन हज़ार आठ सौ रुपये कारीगरोंको मिले। इससे साफ़ मालूम होता है कि ऐसी तरकीबसे पूंजी-वालेको फ़ायदा होनेके साथ ही कारीगरोंको भी फ़ायदा होता है। इस एकीकरणका सच्चा स्वरूप पूंजी और परिश्रमके स्वार्थको एक करना ही है। पूंजीवाले और ग्राहकोंके स्वार्थको एक कर-नेकी जो तरकीबें चल रही हैं वे वास्तवमें एकीकरणवाली नहीं कही जासकतीं। इंग्लेंडमें ग्राहक और व्यापारियोंके स्वार्थके एक करनेकी तरकीबें भी अमलमें लाई जाती हैं और वे ठीक सिद्ध हुई हैं। ऐसी तरकीबोंका मूल नियम यह होता है कि नक़्द दामपर माल बेचा जाय। नक़्द दामपर देनलेन होनेसे व्यापारी और ग्राहक दोनोंको लाभ है। उधारके लेनदेनमें व्यापारीका रुपया कभी कभी डूब जाता है। वह अपनी कसर निकालना चाहेहीगा अतएव वह माल महँगा कर देता है। इसका असर ग्राहकपर पड़ता है। एक बात और है उधार माल देनेमें ब्याज लगता है और उसका असरभी ग्राह-कपर पड़ता है। यानी उसे माल महँगा मिलता है। नक़्दके सौदेमें यह बात नहीं होती। व्यापारीको रुपया फ़ौरन मिल जाता है और ग्राहकको सस्ता माल मिलता है। इसके सिवाय एक बात बड़े महत्त्वकी और भी है। कल्पना करो कि राम-

कुमार श्रीकृष्ण ५०००) पाँच हज़ारकी पूंजीसे कपड़ेका व्यापार करते हैं और सालभरकी उधारसे कपड़ा बेच देते हैं। इसका परिणाम यह होगा कि वे साल भरमें ५०००) पाँच हज़ारका ही कपड़ा बेच सकेंगे और ग्राहकोंको भी महँगा देंगे परन्तु ये उधार न बेचकर नक़द दामपर बेचें और दो महीनेमें कपड़ेकी खपती हो जाय तो वे इसी पूंजीसे ३००००) तीस हज़ार रुपयेतकका कपड़ा बेच सकेंगे। इन्हें ज्यादा फ़ायदा होगा और ग्राहकोंको कपड़ा सस्ता मिलेगा। इंग्लैंडमें नक़द दामपर माल बेचनेवाले बड़े बड़े व्यापारी एक तरकीब और करते हैं। वे छह महीने या सालभरमें अपनी दूकानका हिसाब करते हैं। वे अपनी पूंजीपर अमुक रक़म व्याजकी लगा लेने बाद जो नफ़ा रहता है उसमेंसे ग्राहकोंको भी हिस्सा देते हैं। जिसने जितना ज्यादा माल ख़रीदा होता है उसे उतना ही ज्यादा हिस्सा मिलता है। इससे ग्राहकोंकी और व्यापारियोंकी ख़ूब बनती है। कमीशन देनेकी प्रथा भारतमें भी चल निकली है।

प्रश्न.

(१) पंचायती किसे कहते हैं? हमारे देशमें कहीं कहीं पर वह क्या काम करती है? इंग्लैंडमें वे क्या विशेष काम करती हैं?

(२) पूंजीवालोंको ऐसी पञ्चायती (व्यवसायसमिति) क्यों नहीं अच्छी लगती?

(३) व्यवसाय-समिति और हड़तालका क्या सम्बन्ध है? हड़ताल किसे कहते हैं ?

(४) क्या मनुष्योंको हड़ताल करनेका हक़ नहीं है ?

(५) व्यवसाय-समितिसे उसके मेम्बरोंको क्या फ़ायदा होता है ?

(६) व्यवसाय-समितियाँ अपने मेम्बरोंको ज्यादा तनख्वा दिलानेके लिये कैसे नियम बनाती हैं।

(७) व्यवसाय-समितिके से नियम वकील, बैरिस्टर, डाक्टर वग़ैरामें हैं ?

(८) हड़ताल होनेका सच्चा कारण क्या है? और वह दूर किस तरह किया जा सकता है ?

(९) मेलमिलाप साझा और नफ़ेमें विभाग देना किसे कहते हैं? प्रत्येकके उदाहरण देकर समझाओ ?

(१०) नफ़ेमें से हिस्सा देनेसे कारख़ानेवालेको हानि होती है?

(११) इस तरकीबके ख़ास फ़ायदे उदाहरण देकर समझाओ

(१२) नक़्द रुपयेसे लेनदेन करनेसे क्या लाभ है ?

विशेष प्रश्न।

(१) एका कर काम करनेसे कारीगरोंको क्या फ़ायदा होता है? और कारख़ानेवालोंके जुल्मसे वे अपने

स्वार्थकी रक्षा एका कर किस तरह कर लेते हैं उदाहरण देकर बतलाओ ?

(२) तुम अमुक व्यवसाय-समितिके मेम्बर हो। समितिने हड़ताल करनेका विचार किया है। अच्छा, बतलाओ तुम समितिको हड़ताल करनेकी सलाह व्यापारकी तेज़ीके समय दोगे या मन्दीके समय ?

चौथा भाग।

परदेशके साथ व्यापार, साख, विश्वास और कर।

विषय प्रवेश।

इस भागमें परदेशके साथका व्यापार, आपसका विश्वास, और साखका क़ीमतपर क्या प्रभाव पड़ता है इसका विचार किया जावेगा और करका भी विचार किया जावेगा, इस जगह्-पर कोई प्रश्न कर सकता है कि आपसके विश्वासका और पर-देशके साथके व्यापारका विचार, द्रव्य विनिमयके प्रकरणमें ही हो जाता तो ठीक, क्योंकि चीज़ोंकी क़ीमत और मूल्य नियमित करनेवाले यथार्थ कारणोंका ज्ञान, लगान, तनख्वा और मुनाफ़ेके कारणोंको निश्चित करनेके लिये आवश्यक है। यह बात ठीक है, परन्तु सम्पत्ति विभागके समझानेके पहले, अगर हम इस विषयको लिख देते, तो नये विद्यार्थियोंके लिये एक गोरखधंदा हो जाता। इसी लिये हमने यहां चौथे भागमें लिखा है।

पहला प्रकरण।

परदेशके साथ व्यापार।

परदेशके साथ व्यापारसे श्रम विभाग होता है:—अलग अलग देशोंके साथ अगर बेरोकटोक व्यापार होता हो तो परिणाम यह होता है कि धीरे धीरे प्रत्येक देश उन उन चीज़ोंके बनानेमें उन्नति करता है जिन जिन के बनानेमें उसे सबसे ज़्यादा आसानी

हो और दिक्कतवाली चीज़ोंका बनाना छोड़ देता है । ऐसा होनेसे उत्पादनख़र्च कम होता है और पूंजी तथा परिश्रम जितना सम्भव हो विशेष उत्पादक हो जाते हैं । फ्रांसमें शराबका बनाना बहुत आसान है । वहांपर बहुत सस्ती शराब बनती है । इससे फ्रांस इतनी शराब बनाता है कि वह अपना काम चलानेके सिवाय इंग्लेंड वग़ैरा और और देशोंके लिये भी तैयार कर देता है । इन इन देशोंमें शराब महँगी बनती है । इतनी महँगी कि फ्रांसकी शराब उन्हें सस्ती पड़ती है । अतएव वे अपने यहां शराब न बनाकर फ्रांसकी लेलेते हैं । परदेशके साथ व्यापार करनेका यह लाभ है कि जिस चीज़को हम बिलकुल नहीं बना सकते वह हमें विदेशसे मिल जाती है या जिस चीज़के तैयार करनेमें हमारी पूंजी और परिश्रम ज्यादा लग जाते हों वह चीज़ परदेशसे सस्ती मिल जाती है ।

देशी कारीगरीके रक्षक उपायोंकी योजना करनेसे साधारणत: प्रजाके स्वार्थकी हानि होती है:—बहुतसे मनुष्योंका ख़ियाल है कि परदेशी माल चाहे सस्ता मिल जाय परन्तु उसे लेनेसे स्वदेशका व्यापार मिट्टीमें मिले बिना न रहेगा और रुपया विदेशमें चला जायगा । अतएव परदेशसे आते हुए मालपर भारी ज़कात डालकर स्वदेशी मालकी रक्षा करना चाहिए । यूरपके बहुतसे देशोंमें ऐसी ज़कात डाली गई है । इस तरह ज़कात डालनेसे परदेशी सस्ते मालको छोड़कर हरेकको स्वदेशी महँगा माल लेना पड़ता है यानी प्रत्येक पुरुषको अमुक मालके लिये अमुक रक़म ज्यादा देनी पड़ती है । अगर ज़क़ात न होनेसे माल सस्ता मिलता होता तो प्रत्येक जनको अमुक रक़म

बचती और वह अच्छे काममें लगा सकता। जो शख़्स ऐसा सोचते हैं कि विदेशी माल सस्ता होनेसे स्वदेशी मालके कार-ख़ाने नष्ट होकर देशको हानि पहुंचेगी। सो भूल है। यह सच है कि अमुक व्यापार बन्द होगा परन्तु उसमेंसे निकालकर पूंजी और परिश्रम ऐसे काममें लगाये जाँयगे जो अपने देशमें सबसे ज्यादा आसानीसे हो सकते हों और उसके जरियेसे अपनी और विदेशियोंकी आवश्यकताएँ पूरी की जा सकेंगी। अर्थात् पहले जो पूंजी और परिश्रम कम उत्पादक थे अब विशेष उत्पादक हो जाँयगे। हरेक देशको दूसरे देशोंकी अपेक्षा कुछ न कुछ चीज़ आसानीसे बना सकनेकी अनुकूलता होती ही है। अगर सब देशोंमें बेरोकटोक व्यापार चलता हो तो हरेक देश उन्हीं चीज़ोंको बनाने लगेगा जिनके बनानेकी उसे सबसे ज्यादा आसानी है और अन्यान्य देशोंकी आवश्यकताको भी पूरी करेगा। ऐसा होनेसे सब देशोंकी पूंजी और परिश्रम सबसे ज्यादा उत्पादक रीतिसे काममें लगाये जाँयगे।

इंग्लेंडमें गेहूं वग़ैरा अनाज वहाँकी आब हवाके कारण अच्छा नहीं होता। अमेरिका या हिन्दुस्थानका गेहूं वहांपर जिसभाव मिलता है उससे भी महँगा वहां पैदा होता है। इससे वहांपर थोड़े समयसे बाहरका गेहूं ज्यादा जाने लगा है और वहांकी खेती बन्दसी हो गई है। इससे वहांके किसानोंको कोई हानि नहीं हुई। वे नहीं कहते कि विदेशसे आते हुए अनाजपर कर डालकर हमारी खेतीकी रक्षा करो। उन्होंने गेहूं वग़ैरा अना-जकी खेतीको तिलाञ्जलि देदी और शाक भाजी, फल, फूल वग़ै-राका काम छेड़ दिया, जो परदेशसे ज्यादा तादादमें नहीं आ

सकते। दुनियाको अनाज वग़ैरा सस्ता मिला और उसके पास पैसे बचे इस पैसेसे वह शाक भाजी फल फूल वग़ैरा ख़ुशीसे ख़रीदती है। यानी देशकी उत्पादकशक्ति कम न हुई।

देशके काम धंदेकी रक्षकनीतिसे ग्राहकोंको बोझा उठाना पड़ता है:—परदेशी मालपर भारी ज़कात डाल कर देशके काम धंदोंकी रक्षा करनेके पक्षपाती लोगोंको, जान पड़ता है, माल ख़रीदनेवालोंकी कुछ परवा नहीं होती। वे केवल माल बनानेवालोंके स्वार्थको देखते हैं माल ख़रीदनेवालोंका नहीं। फ्रांसमें परदेशसे आते हुए नमक पर भारी ज़कात ली जाती है इसका असर फ्रांसवालोंपर क्या पड़ता है इसका हम विचार करें। अव्वल तो परदेशसे जो उत्तम नमक आता है सो उन्हें नहीं मिलता, उन्हें ख़राब नमक ही काममें लाना पड़ता है। इससे जो हानि होती है इसका अन्दाज़ा रुपयेमें नहीं किया जासकता। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि भारी हानि अवश्य उठानी पड़ती है। क्योंकि ख़राब नमक उन्हें खाना पड़ता है, खेतीवाड़ीके काममें लेना पड़ता है और अन्यान्य कामोंमें भी उसीका उपयोग करना पड़ता है। इस तरहके काममें उन्हें कुछ पैसेकी भी बचत नहीं होती। फ्रांसका नमक उन्हें प्रति सेर ४ चार पाई ज्यादा खर्च करनेसे मिलता है। इससे फ्रांसवासियोंको ७५०००००) पचहत्तर लाख रुपया, सालों साल ज्यादा ख़र्च करने पड़ते हैं क्योंकि वहांपर ३६००००००० छत्तीस करोड़ सेर नमकका सालाना ख़र्च होता है। ७५०००००) पचहत्तर लाख रुपये साल फ्रांसकी प्रजाको जुर्माना देना पड़ता है क्योंकि यह तादाद इंग्लेंडकी अपेक्षा फ्रांसमें नमक तैयार

होनेकी प्रतिकूलताको बतलाती है। कल्पना करो कि आपके पड़ोसीके घरमें एक निहायत अच्छा, मीठे पानीका कुआ है और वह कहता है कि ५०) रुपये साल आप हमें दीजिए और जितना चाहे उतना पानी काममें लाइये अब आप उसका कहना न मानकर अपनेही कुएसे (जो माइलभर दूर है और अच्छे पानीवाला भी नहीं है) ६०) रुपया साल ख़र्च कर दो कावड़ रोज़ पानी मंगवाते हैं तो आप अपनी हानि ही करते हैं। ख़राब पानी काममें लाते हैं, (वह भी मनमाना नहीं) और दाम ज़्यादा ख़र्च करते हैं । यही हालत फ्रांसकी है । अगर आप कहें कि हम पानीलानेवाले कहारका पेट भरते हैं तो यह बात सही नहीं है क्योंकि जो आप उसे नोकर न रखते तो वह दूसरी जगह नोकरी करता। आप उसपर कुछ मिहरबानी नहीं करते, वह अपनी मज़दूरीके दाम लेता है ।

देशके काम धंदोंपर रक्षणनीतिका अवलम्बन करनेसे तनख़्वापर असर पड़ता है:—यह हम बतला चुके हैं कि रक्षणनीतिका उन चीज़ोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है जिनकी कि रक्षा की जाती है । जिन देशोंमें उद्योग धंदोंकी रक्षा की जाती है वहांपर प्राय: उन उद्योग धंदोंकी रक्षा की जाती है जिनमें प्रतिदिन काममें आनेवाली आवश्यक चीज़ें तैयार होती हैं। जहांपर ऐसा होता है वहांपर रक्षणनीतिसे कारीगरोंकी तनख़्वा, (वास्तवमें देखा जाय तो) कम होती है—अर्थात् मिहनतका सच्चा बदला कम हो जाता है। चीज़ें महँगी होनेसे कम मिलती हैं। अब अगर बेरोकटोक व्यापार हो तो चीज़ें सस्ती हो जाती हैं इससे या तो उत्पादनख़र्च कम हो जाता है या कारी-

गरोंकी वास्तविक तनख्वा बढ़ जाती है। आवश्यक चीज़ें सस्ती हो जाँय और कारीगरोंकी तनख्वा वही बनी रहे तो वास्तविक तनख्वा बढ़ जाती है क्योंकि चीज़ें ज्यादा मिल जाती है। अगर आवश्यक चीज़ें सस्ती हों और उसी परिमाणमें तनख्वा भी कम हो जाय तो वास्तविक तनख्वा वही बनी रहती है और उत्पादनखर्च कम हो जाता है। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि परदेशके साथ स्पर्धाकर रक्षणनीतिसे माल तैयार करनेमें जितना लाभ कारीगरोंका समझा जाता है उससे ज्यादा लाभ बेरोकटोक व्यापार करनेमें हैं क्योंकि जीवनकी आवश्यक चीज़ें उन्हें सस्ती मिल जाती हैं। एक लाभ और भी है। माल काममें लानेवालोंको जो सस्ता माल मिलता है तो पैसेकी बचत होती है और यह पैसा पूंजी बनकर देशकी सम्पत्ति बढ़ाता है। अतएव रक्षणनीतिके पक्षपाती प्रजाका नुक़सान करते हैं।

यहांपर पहले विलायतसे आनेवाले कपड़ेपर जक़ात ली जाती थी और इससे यहांके कपड़े बनानेवालोंकी किसी कदर रक्षा भी होती थी। यह जक़ात १८८२ में लार्ड रिपनने उठादी थी। अब बहुतकर हिन्दुस्थानमें बेरोकटोक व्यापार ही चलने लगा था। अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे यह कोई नहीं कहेगा कि यह ज़क़ात वाजबी थी। इस ज़क़ातके उठादेनेके विपक्षी मनुष्य भी यह नहीं कहते कि ज़क़ात अर्थशास्त्रके अनुकूल है। परन्तु वे कहते हैं कि भारतकी विलक्षण स्थितिके कारण ज़क़ातको हटाकर दूसरा कोई कर डाला जायगा वह ज़क़ातकी अपेक्षा भी ख़राब होगा। बेरोकटोक व्यापारके पक्षपाती मि. फौसेटकी भी ऐसी ही राय थी उसे हम परिशिष्ठमें लिखेंगे।

कितने ही देशोंमें स्वदेशी कारीगरीको सहायता देनेके लिये राज्यकी ओरसे कारीगरोंको अमुक रक़म दी जाती है। वर्तमान समयमें इंग्लैंडमें अच्छी खांड नहीं बनती। वहांपर जो खांडकी खपती होती है उसे फ्रांस पूरी करता है। इससे यह न समझिये कि इंग्लैंडकी अपेक्षा फ्रांसमें खांड बनानेकी स्वाभाविक अनुकूलता ज्यादा है। परन्तु फ्रांसके कारीगरोंको फ्रांसकी सरकार एक प्रकारकी आर्थिक सहायता देती है। इसके बलसे वे इंग्लैंडमें सस्ती खांड बेच सकते हैं। फ्रांसकी खांड सस्ती होनेके कारण इंग्लैंडके खांडके कारखाने बंद होगये और पूंजी और परिश्रम (जो इनमें लगते थे) और और कामोंमें लगाये गये। फ्रांसकी इस नीतिसे इंग्लैंडको हमेशाके लिये कुछ हानि न हुई। पूंजी और परिश्रम जबतक और कामोंमें न लगा तबतक नुकसान रहा। उसके बाद वही बदला मिलने लग गया जो पहले मिलता था और खांड सस्ती मिलने लग गई सो फ़ायदा हुआ। परन्तु इस दृष्टान्तमें फ्रांस एक तरहसे इंग्लैंडको कर देता है। क्योंकि वह कारीगरोंको इनाम देकर इंग्लैंडमें सस्ती खांड बिकवाता है।

हमने कई आदमियोंके मुँहसे सुना है कि रेलके होनेसे नुक़सान हुआ है। बिचारे इक्के गाड़ीवालोंका रोज़गार मारा गया। रक्षणनीतिके पक्षपाती जैसी भूल करते हैं वैसी ही भूल ये लोग भी करते हैं। ये लोग थोड़ेसे मनुष्योंके सुख और स्वार्थकी ओर देखते हैं और सारी प्रजाके सुख और स्वार्थका विचार नहीं करते। इन लोगोंके ख़ियालमें नहीं आता कि रेलसे व्यापारकी कितनी तरक़्क़ी हुई और अन्यान्य लाभ कितने हुए।

रक्षणनीतिके पक्षपातियोंकी फ्रांसके मि. बाशियाने बड़ी ही मधुर हँसीकी है, उसने एक दरख़्वास्तका मज़मून नीचे लिखे मुआफ़िक घड़ा है:—

" चेम्बर आफ़ ड्यूटीज के मेम्बर महाशयो,

" हम मोमबत्ती, लेम्प, तेल, चरबी वग़ैराके बनानेवाले कारीगरलोग नम्रता पूर्वक निवेदन करते हैं कि:—

" एक परदेशी स्पर्धाकरनेवालेकी स्पर्धा से हमारा दिवाला निकलनेवाला है वह अनायासही सारे देशपर मुफ़्तमें उजेला कर देता है। वह अपना मुँह दिखाता है कि हमें कोई नहीं पूछता। सब अपना काम उसीके किये हुए उजेलेसे चला लेते हैं। उसका नाम सूर्य है। वह हमारे रोज़गारका नाश करता है।

" इसलिये हमारी प्रार्थना है कि कृपाकर ऐसा क़ानून पास कर दिया जावे कि सब लोग घरके दरवाज़े खिड़कियाँ जाली झरोके, बंद रक्खें। संक्षेपमें यह कि सूरजकी रोशनी किसी भी तरह घरमें न घुसने दें क्योंकि हम इतने अरसेसे देशके सुखके लिये परिश्रम कर रहे हैं। उसके लिये उजेला पैदा किया है। देशको हमारी क़द्र करना चाहिए। और हमारा साथ देना चाहिए। ऐसे ज़बरदस्त दुश्मन से हम अकेले नहीं भिड़ सकते।

" हमारी प्रार्थना स्वीकार करनेलायक़ क्यों है" इसके कारण हम लिखे देते हैं। वे ये हैं:—अव्वल तो यही कि यदि क़ुदरती प्रकाश को न लेकर कृत्रिम प्रकाशसे लोग काम चलायँगे तो फ्रांसके कारीगरोंको ख़ूब लाभ होगा।

" अगर ज़्यादा खपती चरबीकी होगी तो जानवर ख़ूब पाले जाँयगे। उनके लिये नई नई खेती होगी। जानवरोंके

बढ़नेसे ऊन, चमड़ा, मांस आदि बढ़ेंगे और जानवरोंकी लीदसे खेतोंके लिये खात ज्यादा होगा।

"ज्यादे तेलकी खपती होनेसे तिल्लीकी खेती बढ़ेगी और जानवरोंकी बढ़तीके कारण खेतीकी ऊपज ज्यादा होगी।

"जहां तहां रालके दरख्त लगेंगे। मधुमक्खियाँ पहाड़ोंपर खूब शहद इकट्ठा करेंगी हरतरहकी खेतीका विकास होगा।

"हज़ारों जहाज़ व्हेल नामकी मछलियोंको पकड़ने जाँयगे और थोड़े ही समयमें, फ्रांसका नाम रक्खे और हम अर्जदारोंकी स्वदेश प्रीतिकी आकांक्षा पूरी करे ऐसा नौका सैन्य तैयार हो जायगा।

"फ्रांसकी दूकानोंका समय पलट जायगा इसका तो कोई ज़िक्र ही नहीं करना है जहां तहां जगमग करते हुए दिये जलेंगे और उनके मुक़ाबलेमें अभीकी दूकानें कुछ भी न रहेंगी।

"रालके झाड़ोंको लगानेवाला और कोयलेकी खानमें काम करनेवाला एक भी मज़दूर ऐसा न रहेगा कि जिसे ज्यादा तनख़्वा न मिले।

"कोयलेकी खानोंके मालिकोंसे लेकर गली गलीमें दिया-सलाई बेचनेवाले तक, कोई भी फ्रेंच मनुष्य ऐसा न निकलेगा कि जिसे इस प्रार्थनापत्रके मंजूर होजानेपर लाभ न हो। इस बातका विचार स्वयं आप करें। अगर आप फ़रमावें कि सूरजका उजेला क़ुदरतकी दैनगी है, उसे न लेना मुफ्त मिलती हुई सम्पत्तिको फेंक देना है, तो हमें इतना ही विनय करना है कि यह नीति उस नीतिसे बिल्कुल उलटी होगी, जिस नीतिको अभीतक आप काममें लाते रहे हैं। अभीतक आपने परदेशसे

आती हुई चीज़ोंको इसीलिये बंद किया है कि वे अपने देशकी चीज़ोंसे सस्ती मिलती हैं। तब यह सूरजका उजेला अपने देशके कृत्रिम उजेलेसे बहुत ही सस्ता (मुफ्त ही) मिलता है इसे बिल्कुल रोक देना चाहिए।

" प्रत्येक वस्तुके बनाने में (अलग अलग देशके आब हवाके आधारपर) क़ुदरत और मनुष्यकी मिहनतका परिणाम जुदा जुदा होता है क़ुदरत जो काम करती है मुफ्त करती है अतएव किसी वस्तुकी क़ीमत इसलिये दी जाती है कि उसमें मनुष्यका परिश्रम भी होता है। लिस्बन की नारंगी पेरिसकी नारंगीसे आधी क़ीमतमें मिलती है। लिस्बनकी नारंगीके लिये क़ुदरती गरमी जो काम करती है पेरिसकी नारंगीके लिये पैसे ख़र्चकर बनाई हुई गरमी काम करती है। पोर्चुगालकी नारंगी भी आधी क़ीमतमें इसीलिये मिलती हैं कि क़ुदरतने उसका आधा काम किया है।

" अब हम यही चाहते हैं कि हमें उसे वन्द करना चाहिए जो हमें मुफ्फ मिलता है। आप परदेशके माल को रोकते हैं और कहते हैं कि हमारे देशके कारीगरोंको सब कुछ परिश्रमसे करना पड़ता है और बाहरकोंका आधा काम सूरज कर देता है। जब आधा काम सूरजके कर देनेके कारण विदेशियोंको आप स्पर्धा करनेसे रोकते हैं तब सारा काम मुफ्त में हो जाता हो तो उसे स्पर्धा करनेसे क्यों नहीं रोकना चाहिए? अगर आप अपने काममें एक ढंग रखते हों तो इसे भी रोकिये। आधा काम मुफ्त होता है उसे आप इसलिये रोकते हैं कि स्वदेशी कारीगरीको नुक़सान न हो फिर सारा काम मुफ्त होता

हो उसे क्यों न रोकना चाहिए? जब आप कोयला, लोहा, अनाज और कपड़ा जैसी विदेशसे आती हुई चीज़ोंपर कर, डालते हैं और वह इसलिये कि वे हमारी बनाई हुई चीज़ोंसे सस्ती आ जाती हैं। तब इस सूरजके उजेले को बिल्कुल बन्द करना चाहिए क्योंकि ये मुफ़्फ ही घुसे आता है। अगर इस मतके विरुद्ध ही करना है तो विदेशसे आती हुई चीज़ोंको क्यों रोकते हैं? अगर रक्षणनीति ही पर चलना है तो शीघ्र हमारी प्रार्थना मंजूर कीजिए नहीं, तो नीतिकी बेढंगी बात होगी कि कभी कुछ और कभी कुछ" (अर्ज़दार व्यापारी)

परदेशके साथ व्यापार करनेमें दोनों देशोंको फ़ायदा तब होगा जब विनिमय की जानेवाली वस्तुओंका उत्पादनख़र्च दोनों देशोंमें जुदा जुदा हो:—बेरोक-टोक व्यापारके मुख्य नियम और परदेशके साथ व्यापार करनेके लाभ हम बतला चुके। अब हम इस बातका विचार करते हैं कि दो देशोंमें वस्तुओंके विनिमय होनेसे क्या असर पड़ता है। अव्वल तो यह बात ध्यानमें रखने लायक है कि एक देशकी अमुक वस्तुका दूसरे देशकी अमुक वस्तुसे विनिमय तब होगा जब उन दोनों वस्तुओंका दोनों देशोंमें उत्पादन ख़र्च अलग अलग होता हो और वे चीज़ें अपने अपने देशमें सस्ती बनती हों। हम इस बातको एक दृष्टान्त देकर सिद्ध करें। कल्पना करो कि हमारे यहांसे चीनको सूत जाता है और वहां से चा आती है और यह भी कल्पना करो कि यहांपर चा और सूत दोनों चीनसे सस्ते पैदा होते हैं। ऐसी सूरतमें, ऊपर ऊपर से विचार करनेवाले कहेंगे कि सौदा नहीं होगा परन्तु कल्पना करो कि हिन्दुस्थानमें चार रतल सूतमें एक रतल

चा मिलती है और चीनमें १$\frac{1}{4}$ सवा रतल। ऐसी सूरतमें चीनसे सौदा हो जावेगा। क्योंकि वहांसे हिन्दुस्थानी व्यापारीको सवाया माल मिलता है। अगर हिन्दुस्थान और चीनमें सूत और चाका मोल एकसा होगा तो सौदा न होगा। क्योंकि इसमें मालके यहांसे वहां तक और वहांसे यहां तक पहुंचाने और लानेका ख़र्च कौन भुगते? अतएव सौदा पटनेके लिये इतना मोलमें फ़रक रहना ही चाहिए कि जिससे ऊपर बतलाया ख़र्च निकल आय और कमसे कम व्यापारीको साधारण लाभ भी हो। अपने देशमें माल बेचनेसे जो लाभ होता हो उससे कुछ ज्यादा लाभ रहे।

खपती और संग्रहकी बराबरी होनेसे यह निश्चित होता है कि किन किन शरतोंसे विनिमय होगाः—विनिमय होनेवाली वस्तुओंके मोलमें एक देशकी अपेक्षा दूसरे देशमें कमसेकम, कितना अन्तर होना चाहिए सो हम कहचुके। परन्तु यह अन्तर कभी कभी बहुत ज्यादा होता है। कल्पना करो कि हमारे यहां चार रतल सूतकी १ रतल चा मिलती है। यहांका व्यापारी १ रतल सूतके एवज़में $\frac{1}{4}$ रतल चा पाकर समझ लेता है कि मुझे योग्य बदला मिल गया। अब कल्पना करो कि चीनमें १ रतल सूत में १ रतल चा मिलती है। यह जानकर यहांका व्यापारी चीनको सूत भेजेगा। परन्तु वहांपर यह भाव क़ायम न रहेगा? खपती संग्रहके नियमानुसार (जिन्हें हम दूसरे भागमें समझा आये हैं) मोलमें फेरफार होगा। अर्थात् हिन्दुस्थानमें सूतकी क़ीमत बढ़ जायगी और चाकी क़ीमत कम हो जायगी, और चीनमें सूतकी क़ीमत कम होकर चाकी क़ीमत

बढ़ जायगी जब ऐसा होगा तो पहले जो क़ीमत थी वह क़ायम न रहेगी, क्योंकि सूत और चाकी क़ीमतमें अब चौगुना फ़रक न रहेगा। अनियन्त्रित स्पर्धा चल रही होगी तो इतना ही अन्तर मोलमें रह जायगा कि जिसमें माल मंगवाने करनेका ख़र्च निकल आनेके सिवाय साधारण लाभ रह जाय। किसी भी चीज़के उत्पादन करनेवालोंमें अनियन्त्रित स्पर्धा चलरही हो तो उस उस चीज़की क़ीमतका आधार उत्पादनख़र्चपर रहता है। परदेशसे आनेवाली चीज़ोंपर जो ख़र्च होता है वह भी उत्पादन-ख़र्चका एक आवश्यक अंग है। परदेशसे आते जाते मालपर ज़कात न हो तो किसी चीज़के लाने लेजानेके ख़र्च के मुआफ़िक उसकी क़ीमतमें फेर पड़ता है।

परदेश जाती हुई चीज़ोंका संग्रह उनकी खपतीके साथ कैसे समान होता है?—हम ऊपर एक दृष्टान्त देकर समझा चुके हैं कि हिन्दुस्थानी व्यापारी चीनको सूत भेजता है और १ रतल सूतकी एवज़में १ रतल चा लाकर ख़ूब नफा उठाता है। ऐसी सूरतमें यहांके सब व्यापारी, ज़्यादा नफ़ा उठानेकी लालचमें, जैसे बनेगा वैसे, चीनको ख़ूब सूत भेजने लगेंगे। इससे चीनमें बहुतसा सूतका संग्रह बढ़ जायगा, परिणाम यह होगा उस सारे सूतको खपानेके लिये क़ीमत कम करनी पड़ेगी। हिन्दुस्थानमें सूतका संग्रह कम होनेसे उसकी क़ीमत चढ़ जायगी। आख़िरकार लोग चीनको सूत न भेजेंगे। सूतकी क़ीमत हिन्दुस्थानमें बढ़ने और चीनमें कम होनेसे अब चीनमें हिन्दुस्थानसे चौगुनी चा न मिलेगी और यह व्यापार इतने अन्तरपर आ ठहरेगा कि ख़र्चके सिवाय साधारण लाभ रह जाय।

अन्योन्य व्यापारः—परदेशके साथ व्यापार करनेसे जो लाभ होते हैं उनके संबंधमें दुनियाके बड़े ही भूल भरे विचार हैं। बहुतसे मनुष्योंका कहना है कि नक़्द रुपयेसे व्यापार होना चाहिए। चीनसे बहुतसी चा इंग्लेंडको जाती है। बहुत समय तक चीनी लोग इंग्लेंडसे नक़्द रुपया लेते रहे। इसमें इंग्लेंडकी कोई हानि नहीं हुई, यदि कुछ हानि हुई तो चीनियोंकी ही हुई, क्योंकि जो चीज़ें वे सस्ती पा जाते वे उस रुपयेसे अपने यहां महँगी लेनी पड़ी। कई लोगोंका मत है कि हमें पर देशके साथ उसी वक़्त कोई व्यापार करना चाहिए जब वह देश भी हमारे देशकी बनी हुई चीज़ोंको एवज़में ले। यह ठीक है परन्तु वे चीज़ें जीवनोपयोगी होनी चाहिए केवल विलास-द्रव्य नहीं।

जब दो देशोंमें व्यापार होता है तो दोनों देशोंको लाभ होता है। इस लाभका परिमाण दूसरे देशसे आई हुई चीज़की अमुक देशमें जितनी खपती होती है उससे उलटा होता है:—दो देशोंमें चीज़ोंकी अदला बदली होती है। जिस देशमें विदेशसे आई चीज़की खपती कम होती हैं उसे फ़ायदा ज्यादा होता है। उपर जो उदाहरण हमने दिया है उसमें ज्यों ज्यों चीनमें सूतकी खपती बढ़ेगी त्यों त्यों हिन्दुस्थानके व्यापारी ज्यादा लाभ उठानेकी शरतोंसे चीनको सूत देंगे। इससे सूतका मोल बढ़ जायगा। सूत बेचनेवाले व्यापारी पहलेसे ज्यादा मोल पायंगे। परन्तु यह स्थिति बहुत दिनोंतक न रहेंगी सूतका संग्रह बढ़ेगा और मोल कम हो जायगा।

परदेशके साथ व्यापार करनेका प्रत्यक्ष लाभ यह है कि प्रत्येक देश अपने पूंजी और परिश्रमको सबसे विशेष उत्पादक

धंदोंमें लगाता है। इसकी वजहसे सारे संसार की उत्पादकशक्ति बढ़ जाती है। ऐसा होनेसे प्रत्येक चीज़के बनानेमें कमसे कम पूंजी लगती है और कमसे कम श्रम करना पड़ता है। मिल कहता है कि:—

"व्यापारसे जो लाभ देशको होते हैं उनके विषयमें दुनियाके विचार बड़े ही भ्रमपूर्ण हैं। दुनिया जिस वक्त व्यापारको देशी सम्पत्तिकी जड़ बताती है उस वक्त उसकी निगाह, माल ख़रीद-नेवालोंको जो किफ़ायत होती है, उसपर नहीं होती; बल्कि व्यापारी लोग भारी नफ़ा उठाते हैं उसपर होती है। परन्तु व्यापारियोंको अगर ख़ास तरहके हक़ न दिये गये हों तो, अपने देशमें पूंजी लगाकर जो नफ़ा उठाते हैं, उससे ज्यादा लाभ परदेशके व्यापारसे नहीं होता। वास्तवमें देखा जाय तो अबाध व्यापार सम्पत्तिको सस्तेमें पैदा करनेका तरीक़ा है। ऐसी हरेक सूरतमें मालको काममें लानेवालोंका फ़ायदा होता है। व्यापारी लोगोंको तो अपना नफ़ा मिलता ही है फिर माल महंगा बिके या सस्ता।"

परदेशके साथ व्यापार करनेके जो फ़ायदे ऊपर बतलाये हैं उनके सिवाय नीतिसम्बन्धी और बुद्धिसम्बन्धी फ़ायदे और भी हैं। इस तरहके व्यापारसे संसारकी सब प्रजाओंमें आपसमें मेल जोल बढ़ता है। सुलह शान्तिका रहना बहुत सम्भव है। शि-क्षाका प्रचार सुलभ हो जाता है। न्यारी न्यारी प्रजाओंके मेल जोल होनेसे अपनी रीतिभाँतिको औरोंके साथ तुलना करने और सुधारनेका मौक़ा मिलता है। क़ानून सुधर जाते हैं और

ऐब दूर हो जाते हैं इतना ही नहीं, एकका दूसरीकी सुख-समृद्धिमें स्वार्थ भी सिद्ध होता है।

मालका निकास और आमदनी समान होनेकी तरकीब होती है:—अर्थतत्त्वज्ञ मिल कहता है कि "किसी भी देशकी पैदावारका दूसरे देशकी पैदावारके साथ ऐसे मोलमें विनिमय होता है कि उस देशकी सारे निकासकी कीमत सारी आमदनी-की क़ीमतके बराबर हो जाय।" परन्तु यह बात तब हो सकती है जब उस देशको दूसरे देशोंसे आये हुए मालकी क़ीमतके सिवाय और किसी तरहका लेनादेना न हो।

हमने जो ऊपर दृष्टान्त दिया है उसीमें कल्पना करो कि केवल हिन्दुस्थान और चीनमें आपसमें अदला बदली होती है। अब हिन्दुस्थान जो माल चीनको भेजता है उसकी क़ीमत ची-नसे आनेवाले मालसे ज्यादा हो तो हरसाल चीनपर हिन्दुस्थान का लेना बढ़ता जायगा और उसे चीन नक़द दाम देकर चु-कावेगा। ऐसा होनेसे चीनमें रुपया कम होता जायगा और हिन्दुस्थानमें बढ़ता जायगा। इसका असर यह होगा कि हि-न्दुस्थानमें मालकी क़ीमत बढ़ जायगी और चीनमें कम हो जायगी। ऐसी सूरतमें हिन्दुस्थानको चीनसे चीज़ोंका लेना ला-भदायक होगा और चीनको हिन्दुस्थानसे चीजोंका लेना कम लाभदायक होगा। इसके परिणाममें हिन्दुस्थानके मालका नि-कास कम होगा और चीनके मालकी आमदनी बढ़ेगी। इससे साफ़ मालूम होता है कि आमदनीसे निकास ज्यादा होता है तो वह कम होने लगता है और आमदनी बढ़ने लगती है, यहां तक कि आमदनी और निकास बराबर हो जाते हैं। परन्तु

इस सिद्धान्तमें हमने यह मान लिया है कि व्यापार करनेवाले देशोंमें मालकी आमदनी और निकासके सिवाय और किसी तरहका लेना देना नहीं है। परन्तु व्यवहारमें ऐसा नहीं होता इस वास्ते आमदनी और निकास एकसे नहीं होते। ऊपरके उदाहरणमें कल्पना करो कि हिन्दुस्थानका चीनपर लेना है। चीनको हरसाल १००००००००) दस करोड़ रुपया व्याज देना है। ऐसी सूरतमें आमदनी और निकास बराबर न होंगे। अगर बराबर होंगे तो चीन दस करोड़ नक्द रुपया भेजेगा। नक़्द रुपया भेजनेसे चीनमें रुपया घटेगा और माल सस्ता हो जायगा एवं हिन्दुस्थानमें रुपया बढ़ेगा और माल महँगा हो जायगा। ऐसी सूरतमें चीनका लाभ इसीमें है कि वह रुपया न भेजकर माल भेजे। माल भेजेगा तो उसे ज्यादा माल भेजना ही पड़ेगा। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि सदा निकास और आमदनी एकसा होने ही चाहिए ऐसा कोई नियम नहीं है। लेनदार देशकी आमदनी अपने लेनेके मुआफ़िक निकाससे ज्यादा होगी और देनदार देशका निकास अपने देनेके मुआफ़िक आमदनीसे ज्यादा होगा। इंग्लैंडकी आमदनी निकासकी अपेक्षा १००००००००) दस करोड़की ज्यादा है और हिन्दुस्थानका निकास आमदनीकी अपेक्षा २००००००००) बीस करोड़ ज्यादा है। इसका कारण यह है कि संसारमें एक देशका माल दूसरे देशमें पहुंचानेका काम इंग्लैंड करता है और कितने ही देशोंपर उसका लेना है इससे निकासकी अपेक्षा उसकी आमदनी ज्यादा है। इससे विपरीत हिन्दुस्थानके ज्यादा निकासका कारण यह है कि भारत सरकारपर इंग्लैंडका कर्ज़ है। रेलवे वग़ैरा उद्योग

धंदोमें यहां इंग्लेंडवालोंकी पूंजी लगी हुई है। होम गवर्नमेंटका ख़र्च, सरकारी नोकरोंकी तनख़्वाहें और पेंशनवालोंकी पेंशनमें बड़ा भारी ख़र्च करना पड़ता है। इन ख़र्चोंके लिये यहांसे ज्यादा निकास होता है।

कितने ही मनुष्योंका यह विचार होता है कि आमदनीसे निकास ज्यादा होनेसे देशकी सुखसम्पति बढ़ती है। परन्तु यह भ्रम है। यह बात हमारे ऊपर लिखे हुए विचारोंसे समझमें आ जायगी।

प्रश्न।

१ परदेशके साथ व्यापार करनेका बड़ा भारी फ़ायदा क्या है? उदाहरण दो

२ देशके उद्योग धंदेका रक्षण करना किसे कहते हैं? रक्षणनीतिके पक्षपाती क्या दलीलें देते हैं?

३ स्पर्धामें न स्थिर रह सकें ऐसे धंदोंकी रक्षा न की जाय तो क्या होगा?

४ रक्षणनीतिके अनुयायी किस श्रेणीके लोगोंका स्वार्थ नहीं देखते?

५ जीवनोपयोगी किसी वस्तुके सस्ती होनेसे तनख़्वापर क्या असर होता है?

६ उत्पादनख़र्च कम होनेसे पूंजीके इकट्ठा होनेपर क्या असर पड़ता है?

७ रेलके बारेमें कुछ मनुष्य क्या कहते हैं और उनका कहना कैसा है?

८ मोमबत्ती आदि कारखानेवालोंकी अर्जीकी दलीलें संक्षेपमें कह जाओ

९ विनिमय करनेवाले देशोंको विनिमयसे कब फ़ायदा होता है ?

१० अदला बदली होनेवाली चीज़ोंके मोलमें कमसे कम कितना अन्तर होना चाहिए ?

११ जब यह अन्तर ज्यादा होता है तब विनिमयकी शरतें किस तरह तै होती हैं ?

१२ परदेशके साथ व्यापार होनेसे आमदनी और निकास की क़ीमतोंपर कैसा असर होता है ?

१३ बेरोकटोक व्यापार चलनेपर भी कितनी ही चीज़ोंकी क़ीमत अलग अलग देशोंमें अलग अलग किन कारणोंसे रहती है ?

१४ परदेशसे आते हुए कपड़ेपर हमारे यहां जो ज़कात ली जाती है वह अर्थशास्त्रानुकूल ठीक है या क्या ? ऐसी ज़कात रखनेके अनुयायियोंकी दलीलें क्या हैं ?

१५ परदेशसे आती हुई चीज़ोंकी खपती और संग्रह कैसे बराबर होते हैं ?

१६ अन्योन्य व्यापार किसे कहते हैं ? क्या इसके बिना व्यापारमें लाभ नहीं होता ?

१७ विनिमय करनेवाले दो देशोंमें हरेक कितना लाभ उठा सकता है ? और उसका निश्चय कैसे किया जाता है ?

१८ परदेशके साथ व्यापार होनेसे मुख्य लाभ किसको होता है ?

१९ देशकी आमदनी और निकास बराबर होनेकी चेष्टा कैसे होती है ? इस बराबरी के रोकनेके कारण क्या हैं ?

२० देशके मालका ज्यादा निकास होता है तो ज्यादा फ़ायदा होता है यह बात सच्ची है या भूलभरी ? भूलभरी है तो कारण बताओ क्यों है ?

२१ भारतका निकास आमदनीसे बहुतही ज्यादा है सो क्यों है ?

विशेष प्रश्न ।

१ एक गांवमें एक टूंटा मोची रहता है । उसकी बनाई हुई जूतियां ख़राबभी होती है और महँगी भी । अब उस गांवका अधिकारी दूसरे मोचीकी बनाई हुई उम्दा और सस्ती जूतियोंपर कर लगादे तो देशी कारीगरीके रक्षणके लिये लगाये हुए करके मुआफ़िक ही हुआ या क्या ? और ऐसा करनेसे उस गांवके सारे लोगोंके सुखपर क्या असर पड़ेगा ?

२ अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे इस देशमें आते हुए कपड़ेपरसे ज़कात उठानेका दुनियापर कितना असर पड़ा था और क्यों पड़ा था

३ किसी देशमें सोनेकी क़ीमती खाने हैं और उस देशको और देशोंके साथ छूटसे व्यापार करनेकी मनाई की गई है तो इसबातका क्या प्रभाव पड़ेगा ?

दूसरा प्रकरण।

साख विश्वास और उनका क़ीमतोंपर असर।

क़र्ज लेनेकी ताक़तका नाम साख है। जब हम कहते हैं कि द्वारिकादासकी साख अच्छी है तब इसके मानी यह होते हैं कि दुनियाको विश्वास है कि द्वारिकादासमें कर्ज़ चुका देनेकी शक्ति है। इसी साखके बलपर उसे बहुत ही कम ब्याजपर कर्ज़ मिल सकता है। अगर किसी आदमीकी साख अच्छी न हो तो कोई उसे भारी ब्याज ठहराये बिना कर्ज़ नहीं देगा। क्योंकि दुनियाको संदेह होता है कि वह कर्ज़को चुका देगा या क्या? अतएव एक ही देशमें और एक ही समयमें अलग अलग मनुष्योंकी अलग अलग साख होती है और यह बात उन्हें उधार मिलता है या नहीं, और मिलता है तो कितने ब्याजपर इससे साफ़ मालूम हो जाती है।

जैसा हाल आदमियोंकी साखका है वैसा ही देशोंकी साख-का भी है अर्थात् कर्ज़को चुका देनेकी शक्तिपर उनकी साखका आधार है। जापानकी साख बहुत ही अच्छी है, इससे रूस-जापानके युद्धके समय मनमाना रुपया बहुत थोड़े सूदपर अमे-रिका और इंग्लेंडसे मिल गया। उसे ज़ुरूरतसे ज्यादा रुपया देनेको लोग तैयार हो गये। रूसकी साख उतनी अच्छी नहीं अत-एव उसे उधार रुपया बड़ी मुश्किलसे बहुत ब्याज देनेपर फ्रांससे मिला। तुर्कीकी साख ख़राब है अतएव उसे बहुत समयतक १२) रु० सैंकड़ा ब्याज देना पड़ा। तुर्की गवर्नमेंटने सन १८७५ में कर्ज़दारोंसे कहा कि ब्याजका आधा रुपया ही हम नक़्द दे

सकेंगें परन्तु वह भी न देसकी। इससे उसकी साख बहुत ही बिगड़ गई। सन् १८८४ में तुरकीके १०००) रु. के बोन्डकी क़ीमत ८५) रुपये समझी जाने लगी। इस तरह क़ीमत कम हो जानेका कारण यही था कि लेनदारोंको आशा न रही थी कि तुर्की व्याज दे सकेगी या कर्ज़ भी चुका देगी। स्पेनको ७) रु. सैंकड़ेपर क़र्ज़ मिलता है। इंग्लेंडको ३) रु. सैंकड़ेसें भी कमपर। भारत गवर्नमेंटको ४) रुपये सैंकड़ेपर क़र्ज़ मिलता है। अलग अलग देशोंको जो अलग अलग व्याज देना पड़ता है, केवल इसीसे उस देशकी साखका अन्दाजा नहीं किया जासकता क्योंकि अलग अलग देशोंमें साखके सिवाय और और कारणोंसे भी व्याजके दरमें फेर होता है। हम पहले समझा गये हैं कि व्याजके दरपर, क़र्ज़ देनेवालेको जोखम उठाना पड़ता है या नहीं उठाना पड़ता, इस बातका भी असर पड़ता है अर्थात् रुपया डूबनेका डर है या नहीं इसका असर पड़ता है। इसी तरह खेती होनेकी सीमाके ऊंचेपन या नीचेपनका भी व्याजपर असर पड़ता है। इंग्लेंडकी सरकार कर्जपर ३) रु. सैंकडेसे भी कम व्याज देती है और अमेरिकाकी सरकार ज्यादा देती है। इससे यह अनुमान करना कि इंग्लेंडकी साख अच्छी है और अमेरिकाकी ख़राब, ठीक नहीं हैं। क्योंकि दोनों सरकारोंके व्याजमें जो अन्तर है वह साखके कारण नहीं है खेती होनेकी सीमाके ऊंचे नीचे-पनके कारण है। इंग्लेंडमें ज़मीनको गहने रखनेसे ४) रु. सैंकड़े पर कर्ज़ मिल जाता है और अमेरिकामें ७) सैंकड़ेसे कम व्याजपर—ज़मीन गहने रखनेकी सूरतमें भी-नहीं मिलता। इससे किसी देशके लिये यह अनुमान करना कि उसे कम या ज्यादा

सूदपर कर्ज़ मिलता है अतएव उसकी साख अच्छी है या बुरी है, ठीक नहीं है। यद्यपि यह ठीक है कि उसके कर्ज़ चुका देनेकी शक्तिका ब्याजपर असर पड़ता है तथापि जिन जिन देशोंकी महसूल सम्बन्धी स्थिति ठीक समान हो और फिर भी ब्याजमें अन्तर हो तो यह अंतर खेती होनेकी सीमाके उंचे नीचेपनके कारण होता है।

कुछ लोग कहते हैं कि "साखही पूंजी है"। परन्तु थोड़ासा विचार करनेसे जान पड़ेगा कि ऐसा कहना भूल है। अभी हम कह गये हैं कि "कर्ज़ लेनेकी शक्ति"का नाम साख है, और पूंजी, भविष्यतकी सम्पत्तिके उत्पन्न करनेमें जो धन मदद करता है उसे कहते हैं। पूंजीसे कारीगरोंका पोषण होता है और असुक धंदेके उपयोगी साहित्य इकट्ठा होता है। कर्ज़ लेनेकी शक्ति इनमेंसे किसी कामको नहीं करसकती। उससे कारीगरोंका पेट नहीं भरसकता, उनके कपड़े नहीं बन सकते, इत्यादि इत्यादि। हां, इतना सच है कि इस शक्ति (साख़)से पूंजी मिलसकती है। हाथोंके ज़ोरसे एक मन गेहूं उठा लिये जासकते हैं इसलिये हाथोंका ज़ोरही मनभर गेहूं है यह नहीं कहा जासकता। इसी तरह साखसे पूंजी मिलसकती है तो साखही पूंजी नहीं होसकती।

बैंक—साखके कारण जो उधार की जाती है उसका बड़ा भारी लाभ तो यह है कि देशकी सम्पत्तिका ज्यादातर हिस्सा पूंजी होजाता है और नई सम्पत्ति पैदा करता है। किसीके पास १०—२० किसीके पास १००—५० रुपया हो तो वह कोई स्वतत्र धंदा नहीं करता परन्तु अपना रुपया बेंकोंमें रख़ देता

है और ब्याज कमाता है । बेंकवाले उस रुपयेसे व्यापार करते हैं । बेंकमें जमा करनेंवाले मनुष्य एकसाथ अपना सारा रुपया लेते नहीं है । अतएव बेंकवाले थोड़ा रुपया, रुपया लेनेवाले लोगोंके लिये रखकर, बाक़ीके रुपयोंका उत्पादकरीतिसे उपयोग करते हैं । हमारे देशमें ज्यादातर आदमी बेंकोंमें रुपया जमा नहीं करते परन्तु इंग्लेंडमें प्रायःसभी मनुष्य, अपनी मासिक या वार्षिक आय, बेंकमें जमा करा देते हैं और अपनी ज़रूरतके मुआफ़िक उसमेंसे रुपया निकालते रहते हैं । जब तक किसीका यह विश्वास न हो जायकि वह ईमानदार आदमी है और वह कर्ज़ चुका देनेको समर्थ है तबतक कोई भी उसे उधार न देगा । हमारे देशमें प्रायः मनुष्य अपना थोड़ा थोड़ा रुपया साहूकारोंके यहां ब्याजपर जमा करा देते हैं और साहूकार उस रुपयेसे व्यापार करते हैं । यह तरीका भी बेंकका सा ही है ।

सम्भूय समुत्थानः—बड़े बड़े उद्योगधंदे—रेल जहाज़ वग़ैराके काममें बड़ा भारी धनभंडार होना चाहिए । इतनी पूंजी अकेला मनुष्य शायद ही कोई निकाल सके अतएव ऐसी पूंजी हजारों मनुष्य मिलकर निकालते हैं । इसका नाम सम्भूय समुत्थान या जोइन्ट स्टोक कम्पनी कहते हैं । अमुक काममें कितनी पूंजी चाहिए इसका निर्णय मंडली खड़ी करनेवाले मनुष्य करते हैं । कल्पना करो कि एक कंपनी खड़ी कीगई और निश्चय किया गया कि १००००००) रुपया इकट्ठा करना चाहिए । अब ऐसी तजवीज़ कीगई कि ५०) रुपयेका शेर रक्खा गया । २०००० शेर मुक़र्रर किये । ऐसी सूरतमें पचास

रुपये जैसी चीज़ भी पूंजी बनकर सम्पत्ति पैदा करेगी। अगर इस प्रकारकी कंपनी न हो तो यह पचास रुपया, न मालूम किस तरह, अनुत्पादक रीतिसे उठ जाता। सम्भूय समुत्थानको सफलता होगी या नहीं इस बातका आधार कंपनी खड़ी करने-वाले लोगों और डायरेक्टरोंकी साखपर है अर्थात् शेर इन लोगोंकी साखपर भरे जांयगे।

इस दृष्टान्तसे साफ़ मालूम होता है कि साखके कारण जो रुपयेका विश्वास किया जाता है उससे वास्तवमें देशकी पूंजी बढ़ती है क्योंकि विश्वासके कारण रुपयेको विशेष उत्पादक रीतिसे लगानेमें सुगमता पड़ती है। सम्भूय समुत्थानकी रीतिके सिवाय और और रीतियोंसे भी रुपयेका विश्वास किया जाता है जिसके कारण सम्पत्तिका विनिमय सुगमतासे हो जाता है और इसकी वजहसे पदार्थोंकी क़ीमतपर भारी असर पड़ता है।

हुंडी:—हम पहले प्रकरणमें कह गये हैं कि परदेशके साथ व्यापार करनेसे हमेशा एक देशसे दूसरे देशको रुपया भेजनेकी ज़ुरूरत नहीं पड़ती। कल्पना करो कि इंग्लेंडके 'अ' व्यापारीने फ्रांसके 'आ' व्यापारीको एक हज़ार रुपयेका कोयला बेचा और फ्रांसके 'क' व्यापारीने इंग्लेंडके 'का' व्यापारीको एक हज़ार रुपयेका कपड़ा बेचा। अब अगर इंग्लेंडका 'अ' व्या-पारी इंग्लेंडके 'का' व्यापारीसे १०००) रुपये पाजावे और फ्रांसका "क" व्यापारी फ्रांसके "आ" व्यापारीसे १०००) रुपये पाजावे तो व्यापार हो जाय और रुपया भेजनेकी झंझट न उठानी पड़े। यह बात इस तरह की जाती है। फ्रांसका 'आ' व्यापारी इंग्लेंडके 'अ' व्यापारीके नाम चिट्ठी भेजता है जिसमें १०००)

रु. देनेका वचन दिया हुआ होता है और इसी तरहकी चिट्ठी इंग्लेंडका " का " व्यापारी फ्रांसके " क " व्यापारीके पास भेजता है। इंग्लेंडके " अ " व्यापारीके पास फ्रांस ऊपरकी १०००) रु. की चिट्ठी (हुंडी) है और फ्रांसके " क " व्यापारीके पास इंग्लेंड ऊपरकी। अगर ये दोनों शख्स—" अ " और " क " अपनी चिट्ठियोंको आपसमें पलट लें तो बिना रुपये भेजे हुए लेना चुक जाय। परन्तु इस तरहकी हुंडियाँ आपसमें नहीं पलटी जाती। इस कामके करनेके लिये हुंडियोंके दलाल रहते हैं। वे अलग अलग देशोंपरकी हुंडियोंको ख़रीद लेते हैं। हमने जो ऊपरका दृष्टान्त दिया है इसमें " अ " और " क " आपसमें हुंडियोंको न पलट लेंगे। " अ " इंग्लेंडके दलालको वह चिट्ठी बेच देगा और " क " फ्रांसके हुंडीके दलालको। इंग्लेंडका दलाल फ्रांसपरके १०००००० दस लाखके बिल इकट्ठे कर लेगा और फ्रांसका दलाल उतने ही इंग्लेंडपरके। फिर ये दोनों वर्षके अन्त समयमें या अमुक मुद्दतके बाद बिलोंको (चिट्ठी पत्री हुंडी वग़ैराको) पलट लेंगे। ऐसा होनेसे रुपया भेजने करनेकी दिक़्क़त नहीं होती, व्यापार ख़ूब होता है। मालकी अदला बदलीसे ही व्यापार हुआ हो ऐसा जान पड़ता है। रुपया भेजनेमें ख़र्च जो पड़ता उससे बहुत कम कमीशनमें यह कार्रवाइ हो जाती है।

मुद्दती हुंडीः—(Bill of exchange) मुद्दती हुंडीसे रुपयेका बहुतसा काम हो जाता है और इससे पदार्थोंकी सामान्य क़ीमतपर असर पड़ता है। हमारे देशके बड़े बड़े शहरोंका, जिनका व्यापार यूरोपके साथ होता है, मुद्दती हुंडीसे बहुत काम होता

है। यूरोपमें मुद्दती हुंडियाँ ख़ूब चलती है। वहांपर शायद ही कोई व्यापार नक़्द रुपयेसे होता है। बहुत करके लेनदेन इन मुद्दती हुंडियोंसे हो जाता है। अगर कोई हुंडी तीन महीनेकी मुद्दतकी होती है तो तीन महीनेतक वह रुपयेका बहुतसा काम करती रहती है। कल्पना करो कि श्रीलाल हनुमानदासने एक हज़ार रुपयेकी तीन महीनेकी मुद्दती हुंडी जड़ावचन्द किशनलालको दी और कल्पना करो कि जड़ावचन्द किशनलालको माल ख़रीदना है। वह माल ख़रीद लेंगे और उसके एवज़में इस हुंडीको अपने दस्तख़त करके किसी तीसरे शख़्सको दे देगें। तीसरे शख़्सको माल ख़रीदना हुआ तो वह चौथेको दे देगा। इस तरह यह हुंडी मुद्दत पूरी होनेतक रुपयेका काम करती रहेगी। हम पहले समझा आये हैं कि देशमें फिरता हुआ रुपया ज्यादा होनेसे—अगर और सब बातें समान हों तो—पदार्थोंकी क़ीमत बढ़ जाती है। किसी भी चीज़की क़ीमत संग्रह और खपतीकी समानता होनेसे निश्चित होती है। अगर किसी चीज़का संग्रह ज्यादा हो तो उसकी खपतीको बढ़ानेके लिये क़ीमत कम करना पड़ती है। यही हाल रुपयेका भी है। अगर रुपयेका संग्रह ज्यादा हो और अन्यान्य बातें वैसे ही बनी रहें—तो उसका मोल कम हो जाता है—अर्थात् उसकी विनिमयशक्ति कम हो जाती है और पदार्थोंकी क़ीमत चढ़ जाती है। अब हमारे ध्यानमें सहजमें यह बात आजायगी कि ऊपर बतलाई हुंडियोंका पदार्थोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है। अभी हम कह आये हैं कि हुंडियाँ रुपयोंका काम देती हैं। अतएव जितने रुपयेकी हुंडियाँ हैं उतना चलनेवाला रुपया बढ़ा

समझा जायगा। अगर हुंडियोंसे काम न लिया जाकर रुपयेसे ही लिया जाता होता तो या तो चलनेवाले रुपयोंकी तादाद बढ़ानी पड़ती या पदार्थोंकी क़ीमत घट जाती। इससे यह बात सिद्ध होती है कि ऐसे बिलोंसे (हुंडियोंसे) या तो पदार्थोंकी सामान्य क़ीमत बढ़ जाती है या कम नहीं होने पाती।

दर्शनी हुंडीः—(Note) दर्शनीहुंडी यानी नोटका भी असर मुद्दती हुंडी जैसा ही होता है। नोटोंके बननेसे भी वही असर होता है जो रुपयेके बढ़नेसे होता है। रुपयोंकी एवज़में नोटोंको काममें लानेसे कितना सुभीता होता है यह बात बंबई कलकत्ते ऐसे शहरोंमें बहुत शीघ्र ध्यानमें आ जाती है। सरकारकी साहूकारीमें लोगोंका विश्वास है इससे नोटोंमें रुपयेके समान ही माल ख़रीदनेकी शक्ति है। इंग्लेंडमें सरकारी नोटोंके सिवाय ख़ानगी बेंकोंको भी नोट चलानेका अधिकार मिला हुआ है परन्तु उनसे सरकारने प्रतिज्ञा ले ली है कि वे अपने नोटोंके एवज़में जब चाहें तब सरकारी नोट या सिक्का दे देंगे। इस प्रतिज्ञाके करनेपर भी, उन्हें अपने बनाये हुए नोटोंका उतना ही नक़्द साबरन (गिन्नियाँ) वग़ैरा सिक्का, या सरकारी नोट, हमेशा तैयार रखना पड़ता हो सो कुछ नहीं है। अपने चलाये हुए नोटोंका $\frac{1}{3}$ एक तृतीयांश नक़्द धन रख लेनेसे बेंकोंका काम चलजाता है। इंग्लेंडमें ३०००००० तीस लाख रुपयेके बेंकोंके नोट चलते हैं। और नोटोंके दामकी मांग १०००००० दस लाख नक़्द रुपया तैयार रखनेसे पूरी हो जाती है। ऐसी सूरतमें २०००००० बीस लाख रुपये चलनमें ज़्यादा हो जाते हैं। अगर ये नोट न हों तो या तो इतनी क़ीमत

का सोनेका सिक्का ज़्यादा बनाना पड़े या पदार्थोंकी क़ीमत कम हो जाय। नोट चलानेके साथ ही अगर उतने ही रुपये चलनमेंसे कम कर दिये तो क़ीमतपर कुछ असर न होगा परन्तु चलनके रुपये वैसे ही क़ायम रख नोट बढ़ाये तो क़ीमत बढ़ जायगी या कमसे कम घटेगी नहीं।

चेक या हुंडी पुर्ज़ा वग़ैरा—चेक या हुंडी पुर्ज़ा क्या है? है वह अमुक आदमीको अमुक रक़म दिये जानेकी परवानगी (इजाज़त) जिनके नामके चेक होते हैं वे सब साहूकारके यहां जाकर एकसाथ सारे रुपये ले लें तो क़ीमतपर कुछ असर नहीं पड़ता। परन्तु हमेशा हुंडी पुर्ज़ोंके रुपये नहीं किये जाते लोग अपने नामके हुंडी पुर्ज़ोंको अपने अपने साहूकारके यहां जमा करा देते हैं। ऐसा होनेसे पदार्थोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है इसका हम विचार करें। कल्पना करो कि अमरलालका खाता कँवरलालके यहां है। अमरलाल बिहारीलालको एक पुर्ज़ा लिख देता है:—जिसमें लिखा है कि बिहारीलालको कँवरलाल २००) दो सौ रुपये दे दे। बिहारीलालका खाता है चन्द्रबिहारीके यहां। बिहारीलाल चन्द्रबिहारीकी दूकानपर उस पुर्ज़ेको अपने नामसे जमा करा देता है। अब कल्पना करोकि नारायणसहायका खाता चन्द्रबिहारीके यहां है। नारायणसहाय २००) दो सौ रुपयेका पुर्ज़ा अमरलालको लिख देता है जिसमें लिखा है कि चन्द्रबिहारी दो सौ २००) रुपये अमरलालको दे दे। अमरलाल उस पुर्ज़ेको अपने नामपर अपने साहूकार कँवरलालके यहां जमा करा देता है। अब चन्द्रबिहारीके पास कँवरलालके यहांसे २००) दो सौ रुपये वसूल

करनेका पुर्ज़ा है और कँवरलालके पास चन्द्रबिहारीसे दो सौ रुपये वसूल करनेका, ऐसी सूरतमें कोई किसीको रुपया न भेजेगा आपसमें पुर्ज़ोंको पलट लेंगे। यही सूरत बड़े बड़े बेंकोंमें आपसमें चेकोंके पलटनेमें होती है। हमारे यहांकी मुद्दती हुंडियाँ वही काम करती हैं जो (Bills of exchange) बिल विलायतमें काम करते हैं। जैसे बिल अमुक कमीशन देनेसे काम करते हैं वैसे ही मुद्दती हुंडियोंसे मिती काटकर काम कर लिया जाता है। गांवड़ोंमें यद्यपि चेक वग़ैरा नहीं काममें लाये जाते परन्तु एक दूसरेको सधा देते हैं और विना रुपया काममें लाये चेकके मुआफ़िक़ ही काम होता है।

लंडनमें एक कार्यालय ही इस तरहका स्थापित किया हुआ है कि वह अलग अलग बेंकोंपर हुए बिल और चेकोंका प्रतिदिन हिसाब करता है। सब सेठ साहूकार अपने यहां आये हुए जुदे जुदे बेंकोंपर के बिल और चेक हर रोज़ इस कार्यालयमें भेज देते हैं और उतने ही मोलके अपने नामके चेक या बिल लेते हैं। इस तरह हर साल ६०००००००००००) साठ अरब रुपयेके चेक व बिलोंकी अदलाबदली हो जाती है और रुपया एक भी इधर उधर करना नहीं पड़ता।

यह बात साफ़ है कि चेकोंके व्यवहारसे और ऐसे कार्यालयोंके होनेसे चलते हुए रुपयेमें वहुत ज्यादती हो जाती है क्योंकि एक पाईको भी इधर उधर किये बिना हरसाल ६०००००००००००) साठ साठ अरब रुपयेकी क़ीमतका लेन देन हो जाता है। चेक, पुर्ज़े, हुंडी, बिल वग़ैरा जो विश्वास पूर्ण साधन हैं लेनदेनमें न काममें आते हों तो सिक्केका मोल

बहुत बढ़ जाय, और पदार्थोंकी साधारण क़ीमत कम हो जाय या सोने चांदीके सिक्के उतने ही ज्यादा बनानेकी ज़रूरत पड़े।

नावें लिखनेकी रीतिः—कल्पना करोकि श्रीकृष्णने पूनमचन्दसे पाँच सौ ५००) रुपयेके गेहूं लिये और पूनमचन्दने श्रीकृष्णसे ५००) पाँच सौ रुपयेका कपड़ा। ऐसी सूरतमें कोई किसीको रुपया न देगा, न हुंडी पुर्जा वग़ैरा ही लिखेगा, दोनों अपने बही खातोंमें मालका जमा ख़र्च कर हिसाब ठीक कर लेंगे। नोट, चेक, हुंडी, बिल, पुर्जा वग़ैरा स्वयं कुछ साख नहीं हैं परन्तु किसीकी साखके बतलानेवाले हैं अतएव उनके चलानेवालोंकी साखके कारण दुनिया विश्वास कर उन्हें रुपयेकी जगह काममें लाती है। इससे चलनेवाले रुपयेके बढ़नेके ऐसा ही इनका पदार्थोंकी क़ीमतपर असर पड़ता है।

साखसे ख़रीद करनेकी शक्ति बढ़ती हैः—साखका और रीतिसे उपयोग करनेसे उसका थोड़े समय तक मालकी क़ीमतपर बहुत बड़ा असर पड़ता है। साख, जिसका उपयोग प्रत्येक मनुष्य करता है ख़रीदनेकी शक्तिको बहुत बढ़ा देती है अगर हरेक चीज़ नक़्द रुपयेपर ही ख़रीदी और बेची जाती हो तो बहुत थोड़ा व्यापार होता है। कल्पना करो कि एक कपड़ेकी मिलका व्यापारी ख़ूब रूई ख़रीदना चाहता है और उसके पास उस वक़्त उतना रुपया है नहीं वह रूईके मालिकको मुद्दती हुंडी (Billaf exchange) देकर माल ख़रीद लेगा। मुद्दत पूरी होनेपर भी उसके पास रुपया पूरा नहीं है और उसकी साख अच्छी है तो वह अमुक ब्याज ठहराकर हुंडीकी मुद्दत बढ़ा सकेगा। यह बात सच है कि साखसे ख़रीदनेकी शक्ति बढ़

जानेसे कितने ही मनुष्य इस शक्तिका दुरुपयोग करते हैं परन्तु यदि साखका काम न हो तो बहुतसे व्यापार बंद हो जाँय और बहुतसे कम हो जाँय । जब कितना ही लेनदेन साखसे होता है तब कितनी ही चीज़ोंकी खपती बढ़ जाती है यह बात साफ़ ही है। चीज़ोंकी खपती बढ़नेसे उनकी क़ीमत भी बढ़ती है। अतएव साखसे चीज़ोंकी क़ीमत बढ़ती है ।

साखका सबसे ज़्यादा असर उन चीज़ोंकी कीमतपर पड़ता है जिनका संग्रह नहीं बढ़ाया जासकता ऐसा मान लिया गया हो:—जिन चीज़ोंका संग्रह बढ़ सकता है उनकी क़ीमत उत्पादनख़र्चके मुआफ़िक़ होती है परन्तु असाधारण कारणोंसे जिनका संग्रह कम हो जायगा ऐसा मान लिया जाता है उन चीज़ोंका सट्टा किया जाता है। ऐसी सूरतमें उन उन चीज़ोंकी क़ीमत, न बढ़ाई जा सकनेवाली चीज़ोंकी क़ीमतके समान ही हो जाती हैं। सन् १८६९ में इंग्लेंडमें अनाजके व्यापारियोंने ख़ूब अनाज ख़रीद लिया क्योंकि उन्होंने सोचा था कि इस साल अनाज पैदा नहीं होगा और हम लोग मुँह मांगे दामोंपर गल्ला बेचकर ख़ूब माल मारेंगे। इस तरह ख़री-दारी बढ़नेसे अनाजकी क़ीमत चढ़ती गई । अगर उन लोगोंका विचार पार पड़ जाता तो बेशक वे तुरंत माल-दार हो जाते परन्तु हुआ कुछ और ही । उन लोगोंने माल भर लिया था और मुद्दती हुंडियाँ लिख दी थीं। उन्हें आशा थी कि मुद्दत पूरी होनेपर नये बिल कर देंगे और ख़ूब तेज़ी होनेपर माल बेचकर हुंडियोंका रुपया चुका देंगे और ख़ूब रुपया कमा लेंगे। परन्तु उनकी आशा धूलमें

मिल गई। यद्यपि इंग्लैंडमें बहुत ख़राब फसल हुई परन्तु अमेरिकामें ख़ूब ही अनाज पैदा हुआ। वहांपर उसका भाव बहुत ही गिर गया। फ़ौरन इंग्लैंडको माल भेजा गया और इंग्लैंडमें धान्यकी क़ीमत उतर गई। अब उन व्यापारियोंसे जिन्होंने अपनी साखके बलपर ख़ूब माल ख़रीद लिया था रुपया न चुकाया गया और उन्होंने अपना दिवाला निकाल दिया।

अगर सोच समझ कर विश्वास किया जाता हो तो क़ीमतोंपर कितना भारी असर पड़ता है यह कहना ज़रा कठिन है। परन्तु जब आंखे बन्द कर विश्वास कर लिया जाता है तब, उत्पादनख़र्चके मुआफ़िक़ जो पदार्थोंकी क़ीमत होती है, उससे बहुत ज़्यादा क़ीमतें चढ़ जाती है। सट्टा कमानेवालोंकी आशा पूरी नहीं होती और वे अपने बिलोंके दाम नहीं चुका सकते तब व्यापार में एकाएक मन्दी हो जाती है। उधारका लेनदेन कुछ समयके लिये बन्द हो जाता है। आपसका विश्वास नहीं रहता। हुंडी पत्री काम नहीं देती। नक़्द रुपयेकी मांग बढ़ जाती है। परिणाम यह होता है कि उत्पादनख़र्चके मुआफ़िक़ क़ीमतकी अपेक्षा जैसे पहली सूरतमें क़ीमतें बहुत चढ़ जाती हैं वैसे ही इस सूरतमें क़ीमतें कम हो जाती हैं। इन बातोंका विचार करनेसे यह बात सिद्ध होती है कि साखका दुरुपयोग कर स्वाभाविक हदसे क़ीमतें चढ़ा दी जाती हैं तभी व्यापारके गिरनेकी सम्भावना होती है और पहलेके मुआफ़िक़ बिना सोचे विचारे विश्वासका किया जाना भी कम हो जाता है।

जिसके तुड़ानेसे रुपया मिलजाय और जिसके तुड़ानेपर रुपया न मिले ऐसे काग़ज़ी सिक्केका चलनः—हमारे देश भारतमें ऐसे कागज़ी नोट चलते हैं कि उनका जब चाहो रुपया मिल सकता है। क्योंकि उसमें लिखी हुई रक़म दे देनेका सरकारने वचन दे रक्खा है। परन्तु कितने ही देशोंमें ऐसे नोट चले हुए होतें हैं कि जिनका रुपया देनेको सरकार नहीं बँधती। सन् १८८३ तक इटलीमें ऐसा ही था। अमेरिकामें भी इस तरहके नोट चले थे। रुपया न मिलसके ऐसे नोटोंका क्या असर होता है, इसका विचार करनेके पहले इस बातका विचार करना आवश्यक है कि उन नोटोंका, व्यापारमें लेन-देन करनेके लिये सरकारने आवश्यक ठहरा दिया है या नहीं। अगर आवश्यक ठहराया होता है तो सरकार लेनदारोंको खूब ठग सकती है और रुपयेकी बड़ी गड़बड़ी पड़ जाती है। माँगनेसे रुपया मिल सके ऐसे नोटोंमें कुछ गड़बड़ नहीं हो सकती क्योंकि सरकार एक हदसे ज्यादा रुपयोंके नोट नहीं बना सकती क्योंकि हदसे ज्यादा नोट बनानेमें ग्राहक एकदम सारे नोट सरकारी बेंकमें भेजकर रुपया मांग लें तो सरकारकी साख मारी जानेका अंदेशा है। सरकारसे रुपया न मिल सके ऐसे नोट चलाकर यह ठहरा दिया जाय कि दुनिया उसका व्यवहार करे तो फिर पूछिये ही नहीं। सरकार अपना सारा देना ऐसे नोटोंसे ही चुकावेगी। सरकारी कंट्रेक्टरोंको भी उनके कामके एवज़में ऐसे नोट ही मिलेंगे। इस तरहके नोटोंके निकालनेकी कोई सीमा न रहेगी। अमेरिकामें ४०००००००) चालीस करोड़ रुपयेके नोट थोड़ेसे महीनोंमें निकाले गये थे।

सरकारसे रुपया न मिले ऐसे नोट एक हद्में निकाले जाँय और दुनियाको यह विश्वास हो कि काम हो जाने बाद सरकार इनका चलन बन्द कर देगी तो उनका उपयोग भी रुपयेके मुआफ़िक़ ही करती है। परन्तु जब ऐसे नोट हद्से ज्यादा निकाल दिये जाते हैं तो उनका मोल घट जाता है जैसे कि अमेरिकामें घट गया था। सन् १८६९ में १३२०) रुपयोंके नोटके दाम १०००) रुपये ही मिलते थे। सरकार १३२०)के लेनदारको नोट देती थी इससे उसके पल्ले १०००) एक हज़ार रुपया ही पड़ता था। क़ानूनसे, ऐसे नोटोंसे लेनदेन करना ठहरा दिया गया था। इसका परिणाम यह हुआ कि चीज़ोंकी क़ीमतें बढ़ गँई। दस रुपयेकी चीज़ तेरह रुपयेसे ज्यादा क़ीमतकी होगई क्योंकि व्यापारी लोग जानते थे कि हमें नक़्द रुपया तो मिलेगा नहीं, मिलेंगे नोट, जिनके १३)के हमें १०) रुपये बाज़ारमें मिलेंगे। वास्तवमें चीज़ोंकी असली क़ीमत तो दस रुपया ही रही परन्तु ऐसे नोटोंके चलनके कारण कहनेके १३) रुपया हो गई।

परन्तु सरकारसे रुपया न मिल सके ऐसे नोटोंसे प्रजाके व्यवहारका चलाना ठहराया नहीं गया हो तो कुछ अन्याय भी नहीं होता और न किसीको हानि ही होती है। जिसकी ख़ुशी होगी नोट लेगा और जिसकी ख़ुशी न होगी न लेगा, रुपये लेगा। ऐसी सूरतमें नामके लिये भी क़ीमतें न चढ़ेंगी क्योंकि क़ीमतें नोटोंसे नहीं गिनी जाँयगी। परन्तु ऐसे नोटोंसे सरकारी साख कम होगी और नोटोंकी क़ीमत कम होती जायगी। सन् १७९२ में फ्रांस राज्यकी उलटा पलटीके समय, रुपये न

मिल सके ऐसे नोट निकाले गये थे। उनकी क़ीमत इतनी घट गई थी कि हज़ारों रुपयेके नोटकी एवज़में कोई एक प्याला भर काफ़ी भी नहीं देता था। हमारे भारतमें रुपया मिल सके ऐसे नोट हैं और सरकारी साखका लोगोंको विश्वास है इससे उनकी क़ीमत कम नहीं होती।

वस्तुओंकी सामान्य क़ीमतपर विश्वासके लेनदेनका लाभदायक असर होता है:—जब एक हद्के भीतर विश्वासका लेनदेन किया जाता है तब उसका जो असर क़ीमतपर पड़ता है वह दुनियाको लाभ देनेवाला पड़ता है। सामान्य क़ीमतोंमें भारी फेरफार होनेसे मालके उत्पादन करनेमें फेरफार हो जाता है और इससे व्यापार सम्बन्धी सारे कामोंमें गड़बड़ हो जाती है विश्वासके लेनदेनसे ऐसे फेरफार नहीं होते। हम कई दफ़े यह कह चुके हैं कि जितना ज्यादा लेनदेन होता है उतनी ही ज्यादा रुपयेकी आवश्यकता होती है। अब अगर रुपया या रुपयेके एवज़में काम दे सकें ऐसी चीज़ोंकी बढ़ती न हो तो मालकी क़ीमत कम हो जाती है। परन्तु जैसे जैसे लेनदेन—ख़रीद फरोख्त बढ़ती जाती है वैसे ही वैसे, बिल, चेक, चिट्ठी, पत्री, हुंडी, पुर्ज़े वग़ैरा भी बढ़ते जाते हैं। कल्पना करोकि शिवजी-राम सालिगरामका पहलेसे चौगुना व्यापार बढ़ गया ऐसी सूरतमें उन्हें चौगुना, हुंडी पुर्ज़ोंका लेनदेन करना पड़ेगा। यह एक नियम ही है कि ज्यों ज्यों व्यापार बढ़ता है त्यों त्यों हुंडी पत्रीका लेनदेन बढ़ता है-अर्थात् विश्वासके बलपर व्यापार होता है। परन्तु व्यापारकी मन्दीके समय इससे उलटा असर होता है अर्थात् हुंडी पुर्ज़े कम काममें लाये

जाते हैं। अगर विश्वासका लेनदेन (हुंडी वग़ैरासे) न होता हो तो व्यापारकी चढ़ती होनेसे पदार्थों क़ीमत घट जायगी और मन्दी होनेसे चढ़ जायगी। परन्तु विश्वासके व्यापारसे पदार्थोंकी सामान्य क़ीमतमें भारी फेरफार नहीं होता और इससे सर्वसाधारणको लाभ है।

काग़ज़ी चलनसे प्रत्यक्ष बचत होती है:—हम ऊपर कह आये हैं कि किसी भी देशका काग़ज़का चलन बहुत अंशमें रुपयेका काम करता है। नोट, चेक, बिल, हुंडी, पुर्जे वग़ैरा काममें न लाये जाँय तो सोने चांदीके सिक्के बढ़ाने पड़ें। अतएव नोट वग़ैरा काममें लानेसे बचत होती है क्योंकि काग़ज़ जैसी तुच्छ वस्तु, सोने चांदी जैसी क़ीमती चीज़ोंके एवज़में काममें लाई जाती हैं। १००००) रुपया का नोट जिस काग़जसे तैयार किया जाता है उसका वास्तविक मोल कुछभी नहीं होता। उस नोटके बनानेमें ख़र्चका औसत मुश्किलसे एक पैसा होता हो परन्तु वह बिकता है १००००) दस हज़ार रुपयेमें। क्यों? उसमें साखका मोल है। उससे दस हज़ारका माल ख़रीदा जा सकता है। इस तरहके चलनसे वास्तविक मोल बचतमें रहता है और साख काम करती है।

प्रश्न।

(१) साख किसे कहते हैं?

(२) किसी मनुष्यकी या देशकी साख कैसे जानी जाती है?

(३) कर्ज़ चुका देनेकी शक्तिके सिवाय और किन किन कारणोंसे अलग अलग देशमें ब्याजका दर अलग अलग होता है

(४) "साख ही पूंजी है" यह कहना क्यों भूल भरा है ?

(५) बेंकोंसे सम्पत्तिके उत्पादक रीतिसे व्यय होनेमें किस तरह सहायता मिलती है ?

(६) सम्भूयसमुत्थानसे सम्पत्ति किस तरह उत्पादक कामोंमें ज्यादा लग सकती हैं ?

(७) बेंक और सम्भूयसमुत्थान मंडलीका आधार साख-पर है इसे साबित करो ?

(८) साखसे जो विश्वासका लेनदेन होता है वह सम्पत्तिके उत्पादन करनेमें कैसे मदद देता है ?

(९) मुद्दती हुंडी किसे कहते हैं । उससे पदार्थोंके विनिमयमें किस तरह सुगमता होती है,

(१०) मुद्दती हुंडी चलते हुए रुपयेका काम किस तरह करती है ? समझाओ

(११) मुद्दती हुंडी (Bill af exchange) के रूपमें विश्वासके लेनदेनसे क़ीमतपर क्या असर पड़ता है ?

(१२) विश्वासके लेनदेनसे चीज़ों क़ीमत बढ़नेकी ओर क्यों झुकाव होता है ?

(१३) चेक व हुंडी किसे कहते हैं मुद्दती हुंडीमें और उनमें क्या फ़रक है ?

(१४) चेक, हुंडी, बिल, आदि विश्वासके लेनदेनके जो साधन हैं वे बन्द हो जाँय तो क्या नतीजा हो ?

(१५) बैंक नोट और सरकारी नोट क्या होते हैं ?

(१६) नोटमें और मुद्दती हुंडीमें क्या भेद है ?

(१७) सरकारी नोटोंकी माल खरीदनेकी शक्ति रुपयेके बराबर ही क्यों है ?

(१८) चेक रुपयेका काम किस तरह करते हैं ?

(१९) विलायतमें बिल वग़ैराके हिसाब करनेके जो कार्यालय हैं वे क्या काम करते हैं और किस तरह कहते हैं ?

(२०) नावें लिखकर खाता बराबर करनेसे रुपये बिना कैसे काम चल जाता है ?

(२१) साखसे ख़रीद करनेकी शक्ति कैसे बढ़ जाती है ?

(२२) इस तरहकी शक्ति बढ़नेसे पदार्थोंकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है ?

(२३) विश्वासके लेनदेनका सबसे ज़्यादा असर किस तरहकी चीज़ोंपर पड़ता है ?

(२४) कितनी ही बार व्यापार एकदम बंद क्यों हो जाता है ?

(२५) इसका विश्वासके लेनदेनपर क्या असर पड़ता है ?

(२६) सरकारसे रुपया मिल सके और रुपया न मिल सके ऐसे नोट क्या होते हैं ?

(२७) रुपया न मिल सके ऐसे नोटोंमें किस तरहका ख़तरा होता है ?

(२८) सरकारसे रुपया न मिल सके ऐसे नोटोंके बारेमें

जो यह ठहरा दिया जाय कि प्रजा उसका लेनदेन करे तो इस ठहरावसे क्या ख़राब असर होता है ?

(२९) इस बातका क़ीमतपर क्या असर पड़ता है ?

(३०) इस तरहके नोट किस सूरतमें हानिकारक नहीं हो सकते ?

(३१) इस तरहके नोटोंका लेनदेन करनेके विषयमें प्रजाको स्वतन्त्रता हो तो इस स्वतन्त्रताका क्या असर होता है ?

(३२) सरकारसे जिनका रुपया मिल जाय ऐसे नोटोंका चलन हदसे ज्यादा किया जा सकता है या क्या ? यदि नहीं, तो क्यों ?

(३३) सरकारसे रुपया न मिले ऐसे नोटोंके बनानेका, रुपया मिल जाय ऐसे नोटोंके बनानेकी हदके मुआफ़िक़, कोई हद रहती है या नहीं ?

(३४) विश्वासके लेनदेनसे पदार्थोंकी सामान्य क़ीमतमें होते हुए भारी फेरफार किस तरह रुक जाते हैं ?

(३५) काग़ज़के चलनमें प्रत्यक्ष बचत क्या है ?

विशेष प्रश्न ।

(१) एक मनुष्यने जाली नोट बनाया । इससे उसने क्या देशकी सम्पत्तिमें बढ़ती की ?

(२) कल्पना करो कि मोतीलालने १००००) दस हज़ार रुपया अपने साहूकारकी दूकानपर जमाकर रक्खा है और अपने काममें नहीं लाता । इससे क्या मोतीलाल निर्दय कहा जायगा ?

(३) कोई साहूकार अपनी एक हज़ारकी हुंडी खोदे तो क्या वह उतने टोटेमें रहेगा ?

(४) कोई साहूकार अपने नोट चलानेसे मालदार हो सकता है ?

(५) हुंडियाँ लिखनेसे कोई धनवान हो जायगा ?

तीसरा प्रकरण।

कर।

कर डालनेकी आवश्यकताः—सरकारका मुख्य कर्तव्य यह है कि वह मनुष्योंके जान मालकी रक्षा करे, देशकी रक्षा करे और दोनोंकी स्वतन्त्रता समानरूपसे क़ायम रक्खे। यह काम बिना ख़र्च किये हो नहीं सकता। ख़र्चके लिये रुपया चाहिए। अतएव रुपयेका संग्रह करनेके लिये कर डाले जाने चाहिए। कर किन लोगोंपर डालना चाहिए, किस तरह डालना चाहिए, इस विषयमें बहुत मनुष्य वाद विवाद करते हैं। वर्तमान समयमें यह बात मान ली गई है कि उस प्रत्येक मनुष्यको कर देना चाहिए जिसकी जानमाल व स्वतन्त्रताकी योग्य रक्षा, पुलिस, सैन्य, चिकित्सालय, न्यायालय, सड़क, दुर्ग आदिके कारणसे होती है। क्योंकि इनके कारणसे जिनकी रक्षा होती है उन्हें ही इनका ख़र्च भी देना चाहिए। कोई वर्ग और कोई मनुष्य करसे न बचाया जाना चहिए चाहे फिर वह यही क्यों न कहता हो कि यह इकट्ठा किया हुआ रुपया इस तरह ख़र्च होने देना मुझे पसन्द नहीं है। हां, प्रजा अपने और देशके लाभकी

कोई उत्तम तरकीब बतलावे तो उस तरकीबको अमलमें लाना सरकारका काम है ।

कर डालनेके सम्बन्धमें एडमस्मिथके चार नियमः— एडमस्मिथने कर डालनेके विषयमें चार नियम बतलाये हैं । इन नियमोंके अनुकूल काम करनेसे कर देनेवालोंको, कमसे कम, बाधा होगी और सरकारमें ज्यादासे ज्यादा पैदा होगी । इन चार नियमोंको पूरे पूरे लिखनेसे बहुत विस्तार हो जायगा अतएव संक्षेपमें उनका सार मात्र हम यहांपर देते हैं ।

(१) हरेक आदमीको अपनी आयके मुआफ़िक़ कुछ हिस्सा उस राज्यमें देना चाहिए जिसकी छत्र-छायामें उसके जानमालकी रक्षा होती है और वह अपनी कमाई बे रोकटोक भोगता है—अर्थात् करका असर सबपर समान रूपसे पड़ना चाहिए ।

(२) कर नियमित होना चाहिए अनियमित नहीं । कर लेनेका समय भी मुक़र्रर होना चाहिए और कर देनेवालेको और उसकी एवज़में कर भरनेवालेको तथा सर्वसाधारणको ये बातें मालूम होनी चाहिए ।

(३) हरेक कर ऐसे समय लिया जाना चाहिए कि जिसमें हरेक कर देनेवाले मनुष्यको और कर वसूल करनेवालोंको सबसे ज्यादा सुभीता हो ।

(४) प्रत्येक कर इस तरकीबसे लिया जाना चाहिए कि जितना रुपया सरकारके ख़ज़ानेमें दाख़िल हो उससे बहुत ज्यादा प्रजाको न देना पड़े ।

पहले नियमका बर्ताव:—पहला नियम प्रत्येक करके विषयमें नहीं पाला जा सकता। कल्पना करो कि गोपाल एक ग़रीब आदमी है। उसकी आमदनी उतनी ही है, जितना उसका ख़र्च है और उसके कुनबेमें दस मनुष्य हैं। और गोविन्द धनवान आदमी है और उसके कुटुम्बमें ३ मनुष्य हैं। गोविन्दकी आमदनीभी बहुत ज्यादा है। गोपालके कुनबेमें जितना अनाजका ख़र्च है गोविन्दके कुनबेमें नहीं। अतएव ग़रीब होनेपर भी गोपाल गोविन्दसे अनाजकी ज़क़ातका कर ज्यादा देता है। यह असमानता होगई। दोनोंपर समान असर न पड़ा। इस विषमताको दूर कर देना असम्भव है। अगर इसकी तलाशी की जावे कि कौन कितना ग़रीब है, कौन कितना धनवान है? वग़ैरा तो ऐसी तलाशीके लिये बहुतसे नोकर रखने पड़ेंगे और करका ज्यादातर हिस्सा इन लोगोंकी तनख़्वामें ख़र्च हो जायगा परिणाम यह होगा कि ऊपर बतलाये हुए नियमोंमें से चौथे नियमका भंग हो जायगा। तब क्या यह नियम ही उठा देनेके योग्य है? नहीं, समानताका विचार कुछ एक ही करपर ध्यान देनेसे नहीं किया जा सकता। ऊपरके दृष्टान्तमें गोपाल अनाजपर ज्यादा दाम देता है परन्तु और और विलास द्रव्योंपर नहीं। गोविन्द, इत्र, लवेंडर, बढ़िया बढ़िया रेशमी कपड़े आदिका उपयोग बहुत करता है और उनपर ज़क़ात देता है। और आयकर ज्यादा देता है; सब मिलाकर गोविन्द ज्यादा कर देता है। इस तरह समानता की जा सकती है।

दूसरे नियमका बर्ताव:—अर्थशास्त्रके पहले यूरोपीय विद्वान स्मिथका दूसरा नियम बड़ा ही आवश्यक नियम है। व्यापारि-

योंको अगर यह मालूम न हो कि हमें अपने मालपर कितना कर देना चाहिए तो व्यापारके सारे काम अनिश्चित–(सट्टेके समान) हो जाते हैं । मनुष्य फिर बुद्धिपर आधार न रख भाग्यपर भरोसा करने लगते हैं और व्यापारका रूप जुआँमें पलट जाता है ।

तीसरे नियमका बर्ताव:–तीसरा नियम इसलिये आवश्यक है कि जिससे कर देनेवालोंको बहुतही कम अड़चन हो । अगर कर ऐसे वक़्त वसूल किया जाय कि जिससे कर देनेवालोंको बहुत अड़चन हो तो करकी वसूलीमें नुक़सान होता है और दुनियाको कुछ फ़ायदा नहीं होता । चीज़ोंपर जो कर होता है उसे उन उन चीज़ोंके काममें लानेवाले ही (वास्तवमें देखा जाय तो) देते हैं क्योंकि वे कर उन उन चीज़ोंके उत्पादनख़र्चके हिस्सेमें शामिल होजाते हैं । यानी व्यापारी लोग करकी रक़मको पदार्थोंकी क़ीमतमें जोड़ देते हैं । जब ग्राहक किसी चीज़को ख़रीदता है तब कर भी चुक जाता है परन्तु इस तरकीबसे किसी ग्राहकको कुछ अड़चन नहीं मालूम होती । अगर उसे सुभीता न हो, किसी तरहकी अड़चन हो, तो वह माल नहीं ख़रीदता । मकान और ज़मीनके, शहरोंमें किराये आते हैं । म्यूनिसिपेलिटी उनपर कर लेती है । मकान और ज़मीनके मालिकोंके पास जिस वक़्त किराया आता है उस वक़्त अगर वह भी कर ले तो उन्हें देनेमें सुभीता हो ।

चौथे नियमका बर्ताव:–इस नियमका तीसरे नियमके साथ निकटका सम्बन्ध है । अगर कर ऐसे वक़्तपर वसूल किया जाय कि जिसमें कर भरनेवालेको अड़चन हो तो सर-

कारमें जितना पैसा आयगा उससे ज़्यादा कर देनेवालोंका ख़र्च हो जायगा। परदेशसे आती हुई जिन चीज़ोंपर कर लिया जाता है उन चीज़ोंके आते ही फ़ौरन कर वसूल किया जाता हो तो कर देनेवालोंको अड़चन पड़ती है। इस अड़चनको दूर करनेके लिये इंग्लेंडमें ऐसा ठहराव कर लिया गया है कि व्यापारी अगर तुरंत माल न बेचना चाहे तो वह मालको सरकारमें अमानत रखदे और जब बेचना चाहे तब सरकारी ज़क़ात चुकाकर माल ख़रीददारको दे देवे। इस तरह व्यापारीको कर देनेमें बड़ा सुभीता होता है क्योंकि ख़रीददारके पाससे उसके हाथमें रुपया आगया होता है। अब हम इस बातका विचार करें कि इस तरकीबका मालकी क़ीमतपर क्या असर पड़ता है। कल्पना करो कि एक व्यापारी चांदीका व्यापार करता है। वह १००००) रुपयेकी चांदी लाया। उस चांदीपर उसे ५०००) रुपये ज़क़ातके देने चाहिए। वह चांदी सरकारमें रख देता है। वह व्यापारी अपनी पूंजीपर २०) बीस रुपये सैंकड़ा लाभ उठाता है। उसने छह महीने बाद चांदी बेचदी। उसे १६०००) रुपये मिले। यह सोलह हज़ार इस तरह बने:—

चांदीकी असली कीमत	....	रु. १००००)
पूंजीपर (२० सैंकड़ेके हिसाबसे छह महीनेका नफ़ा)	....	रु. १०००)
चांदीपरकी ज़कात	....	रु. ५०००)
कुल	....	रु. १६०००)

माल बिकनेके समय ज़कात न ली जाकर मालके आते ही ले ली

जाती तो ऊपर बतलाई हुई चांदीकी क़ीमत १६०००) की जगह १६५००) हो जाती। माल ख़रीदनेवालेको (वास्तवमें कर देनेवालेको) ५००) ज्यादा देने पड़ते और सरकारके पल्ले एक फूटी कोड़ीभी ज्यादा न पड़ती। क्योंकि चांदी बेचने वालेको पांच हज़ारकी पूंजी और रोकनी पड़ती और वह इस-पर भी बीस रुपये सैंकड़ेका नफ़ा लगाता। इस हालतमें यह सूरत होती:—

ज़कातका महसूल मिलाकर चांदीकी कीमत	रु. १५०००)
इस पूंजीपर (२० सैंकड़ेके हिसाबसे ६ मही-नेका) नफ़ा	रु. १५००)
कुल	रु. १६५००)

कच्चे मालपर महसूलः—चौथे नियमके मुआफ़िक़ कच्चे मालपर कर न लगाना चाहिए। तैयार मालपर कर लगाना चाहिए। रूईपर कर न लेकर सूती कपड़ेपर लेना चाहिए। क्योंकि कपड़ा तैयार होनेतक रूई कई व्यापारियोंके हाथमें जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि कर देनेवालोंको सरकारमें जमा होनेवाले करसे बहुत ज्यादा रुपया देना पड़ता है। कल्पना करो कि कँवरलालने रूईके करमें १००००) दस हज़ार रुपया दिया है। जब वह रूईको बेचेगा तब ब्याज स-हित रूई ख़रीदनेवाले खूबचन्दसे ११०००) करके वसूल करेगा। खूबचन्द गोविन्दको बेचेगा तब अपने ग्यारह हज़ार के ब्याज सहित १२१००) बारह हज़ार एक सौ लेगा। यह सूरत दस रुपये सैंकड़ेके हिसाबसे सालभरमें माल बिक जानेसे

होगी। इसमें फेरफार होनेपर और भी फेरफार होगा। इस तरहसे चक्रवृद्धि ब्याज बढ़ता जायगा और इससे जो कर बढ़ता जायगा उसका सारा असर रूईसे बने हुए मालको काममें लानेवालोंपर पड़ेगा। कभी कभी यह असर दूनातक हो जाता है। यानी सरकारमें जमा हो १००००) और मालको काममें लानेवालोंको देना पड़े २००००)। अतएव चौथे नियमका पालन होनेके लिये यह आवश्यक है कि कर ऐसे समय लिया जाय कि जो समय चीज़ें काममें आनेके लिये बिकें, उस समयसे जितना होसके, पासका हो। क्योंकि करका देनेवाला तो वास्तवमें उस उस चीज़का काममें लानेवाला ही है। अतएव ऐसा होने देना मुनासिब नहीं है कि चीज़ोंके इस्तेमाल करनेवालेको व्यर्थका नुक़सान हो अर्थात् सरकारके पल्ले उतने ही टके पड़े और कर देनेवालेका ख़र्च ज्यादा हो जाय यह ठीक नहीं है। कच्चे मालपर कर लेनेसे ऐसी अनुचित कार्रवाई ही होती है।

चीज़ोंपर प्रत्यक्ष कर लेना बन नहीं सकता:—बहुतसे मनुष्योंका यह कहना है कि चीज़ोंके काममें लानेवालोंके स्वार्थकी अच्छी तरह रक्षा तब हो सकती है कि जब चीज़ें बिकें उस वक्त कर लिया जाय। अर्थात् कोई मनुष्य एक रतल चाह लेनेको जावे तो व्यापारी १।) रुपया तो चाहका मांगे और ।) आने अलग करके। परन्तु चौथे नियमका अमल इस योजनासे नहीं हो सकता। अमलका होना दूर रहा इससे नियमके उद्देशमें ही भंग हो सकता है। क्योंकि इस योजनाके मुआफ़िक़ देखना होगा कि दुकानदारोंने करके लिये जो (रक़म, चीज़ वस्तुके

ख़रीद्नेवालों से ली, वह सरकारमें जमा की या नहीं। ऐसी जांच दूकानदारोंके बही खाते देखनेसे होगी इस कामके लिये राजको बहुतसे नोकर रखने पड़ेंगे। इससे भारी ख़र्च होगा और राजके पल्ले, जितना कर लोगोंने दिया होगा इसमेंसे बहुत कम पड़ेगा। कई बार तो ऐसा होगा कि बहुत कुछ ख़र्च करनेपर भी कई आदमी प्रपंचकर राजका पैसा खा जाँयगे। इससे अगर ऐसी इच्छा हो कि कम ख़र्चेमें कर वसूल हो जाय (जैसी चौथे नियमकी मनशा है) तो यह ठीक होगा कि इकट्ठा माल बेचनेवाले व्यापारियोंकी दूकानोंमें जिस वक्त़ माल भरा हो उस वक्त़ कर लिया जाय। जैसे जैसे छोटे व्यापारियोंके हाथमें छूटक चीज़ें जाती हैं वैसे वैसे महसूलके चुराये जानेकी ज्यादा सम्भावना है।

करका बोझा; प्रत्यक्ष कर और परोक्ष कर लेनेकी रीतिः—आयकरके (Income tax) सदृश खास करोंका स्वरूप बतलानेके पहले यह बतलाना ठीक होगा कि करका बोझा किसे कहते हैं और प्रत्यक्षकर और परोक्षकरकी रीतियोंमें क्या भेद है। अर्थशास्त्री मिल कहता है कि "जिन लोगोंसे कर लेना ठहराया जाय अगर उस करको स्वयं देते हों तो वह प्रत्यक्ष कर है और परोक्ष कर उसे कहते हैं कि कर लिया तो किसी एकसे जाता है परन्तु वह उस करको औरोंसे वसूल कर लेता है जैसा कि ज़कातका महसूल, करका बोझा वही उठाता है जिसके घरमेंसे वास्तवमें वह कर जाता हो। जैसे चीज़ोंपर कर लिया जाता है उसका बोझा उन चीज़ोंको काममें लानेवालोंपर पड़ता है। यद्यपि कर उन चीज़ोंके बनाने-

वाले या बाजारमें लानेवाले सरकारमें भरते हैं परन्तु वे माल-की क़ीमत बढ़ा देते हैं अतएव उसका असर मालको काममें लानेवालोंपर पड़ता है। इस तरहके कर परोक्ष कर हैं। आय करके समान कर प्रत्यक्ष कर है क्योंकि इस तरहके करका भार उसी मनुष्यपर पड़ता है जो कर भरता है।"

आयकरः—अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे आयकर ठीक है या नहीं इस बातका विचार करनेके पहले यह जानना ज़रूरी है कि वह थोड़े समयके लिये लगाया है या सदाके लिये नियत किया गया है। जिनकी आय थोड़े समयकी है और जिनकी आय सदा की है इन दोनों तरहके मनुष्योंपर एकसा कर लगाया जाना चाहिए या क्या इस विषयमें बड़ा वाद विवाद होता है। इस वाद विवादका आधार भी आयकरके स्थायी और अस्थायी-पन और नियमित तादाद एवं अनियमित तादादपर निर्भर है। अगर वह सदाके लिये नियमित किया गया है तो हर तरहकी आमदनीपर समान कर लेना चाहिए। अगर कर थोड़े समयके लिये लगाया गया हो तो थोड़े समयकी आमदनीपर हमेशाकी आमदनीसे कम कर लेना चाहिए। कल्पना करो कि आयकर नियमित है और सदाके लिये है। अब विचार कीजिए कि उन दोनों शख्सोंको क्या आयकर देना चाहिए जिनकी आमदनी स्थायी और अस्थायी है। गंगाधर जागीरदार है और उसकी आमदनी ६०००) रुपये साल है और जानकीलाल डाक्टर है वह भी ६०००) रुपये साल कमाता है। अगर आप यह कहें, जैसा कि और भी बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि गंगाधरकी अपेक्षा जानकीलालसे कम कर लिया जाना चाहिए क्योंकि उसकी

आमदनीका आधार उसका स्वयंका परिश्रम है और उसके अशक्त हो जाने या मरजानेपर उसकी आमदनी बंद हो जायगी, तो सोचना यह चाहिए कि गंगाधरकी आमदनी तो पीढ़ी दर पीढ़ी तक कर भरती जायगी और जानकीलालकी आमदनीको उसी समय तक कर भरना पड़ेगा जब तक कि वह होती है। और एक उदाहरण लीजिए। रामगोपाल ६००००) का धनी था उसके तीन लड़के थे। अमृतराम आदित्यराम और इच्छाराम। मरते समय वह अपने तीनों बेटोंको बीस बीस हज़ारकी रक़म दे गया। अमृतरामने ५००) सालकी ज़मीदारी ख़रीद ली, आदित्यरामने १५००) साल, जीवन पर्यन्त लेनेकी शर्तपर एक बेंकमें रुपया दे दिया और इच्छारामने २५००) रुपये साल, दस वर्ष तक मिलनेकी शर्तपर किसी साहूकारकी दूकानपर रुपया जमा कर दिया। इन तीनोंकी आमदनी समान पूंजीका फल है। पहले की आमदनी सदाके लिये हैं। दूसरेकी आमदनीका आधार उसकी ज़िन्दगीपर है और तीसरेकी आमदनी दस वर्षके बाद बंद हो जायगी। अगर आयकर हमेशाके लिये और नियमित लगाया गया है तो कोई ज़रूरत नहीं है कि अमृतरामकी आमदनीपर आदित्यराम और इच्छारामसे ज़्यादा दरमें कर लगाया जाय। कल्पना करो कि फ़ी रुपया ४ पाई करका दर है। अमृतलालकी आमदनी इस सूरतमें १०—६—८ दस रुपये छह आने आठ पाई सालोंसाल, हमेशा देती रहेगी। आदित्यरामकी आमदनी उसके अस्तित्व तक ३१—४—० इकतीस रुपये चार आने साल देगी और इच्छारामकी आमदनीसे दस सालतक ५२—१—४ हरसाल मिलेंगे। अगर

इन तीनोंसे यह कहा जाय कि तुम्हारा आयकर सालोंसाल जमा कर लिया जाया करेगा, तुम एक साथ रक़म देदो तो सालोंसाल देनेकी झंझट न पड़ेगी, और ये तीनों इस बातपर तैयार हो जाँय तो तीनोंको बराबर रुपया देना पड़ेगा। परन्तु आयकर थोड़ेसे समयके लिये लगाया गया हो तो चिरस्थायी और अचिरस्थायी आमदनीपर एकसा कर लगाना मुनासिब नहीं है क्योंकि उसमें अचिरस्थायी आमदनीवालोंपर ज्यादा बोझ पड़ता है। कल्पना कीजिए कि कर वही ४ पाई रुपया है। और देनेवाले भी ऊपर लिखे हुए तीनों भाई है। कर है अचिरस्थायी। ऐसे सूरतमें अमृतलाल जिसकी आमदनी स्थायी है उसे कम कर देना पड़ेगा और आदित्यराम इच्छारामको ज्यादा, क्योंकि वे ज्यादा रुपये हरसाल देंगे और थोड़े समय वाद करके उठ जानेसे अमृतलाल उतना कर देनेसे बच जायगा। अचिरस्थायी करमें नियमित करलेनेसे इस तरहकी असमानता प्रायः होती है।

अगर आयकर सदाके लिये मुक़र्रर किया जाय और उसका दर भी नियमित रक्खा जाय तो चिरस्थायी और अचिरस्थायी आमदनीपर एक ही हिसाबसे कर लेना चाहिए:—इस विषयका विचार करनेपर एक साधारण नियम यह ठहराया जासकता है कि आयकर सदाके लिये मुक़र्रर करनेकी ज़ुरूरत हो तो क्या चिरस्थायी और क्या अचिरस्थायी हर तरहकी आमदनीपर एकसा कर डालना चाहिए और जो थोड़े समयके लिये ही मुक़र्रर किया जाय तो अचिरस्थायी आमदनीकी अपेक्षा चिरस्थायी आमदनीपर दर बढ़ाकर कर लेना चाहिए। अगर आयकर

थोड़े समयके लिये डाला जाय तो अर्थशास्त्रियोंके मतमें उसका असर सबपर बराबर डालनेकी एक ही तरकीब है। वह यह है कि सबकी आमदनीको पूंजीके स्वरूपमें लाना चाहिए और फिर जिसकी जितनी पूंजी हो उसीपर २) दो रुपये सैंकड़ा, या जो कुछ उचित हो, सालाना कर लगा देना चाहिए। परन्तु इस तरकीबको अमलमें लानेसे बड़ी दिक्कतें हो जाँयगी किसकी आमदनी अचिरस्थायी है, किसकी चिरस्थायी, और उसकी पूंजी कितनी हुई इत्यादि बातोंकी जाँच पड़ताल करनेके लिये बहुतसे नोकर रखने पड़ेंगे और इनका ख़र्च इतना बढ़ जायगा कि जितनेकी ताल नहीं उतनेके मंजीरे फूट जाँयगे अर्थात् जितना कर वसूल होगा उससे ज्यादा ख़र्च बढ़ जायगा। अतएव करके नियम बनानेवालोंको चाहिए कि वे ऐसे नियम बनावें कि करका असर सबपर समान भावसे पड़े और वसूल होनेमें ज्यादा ख़र्च और कठिनाई न पड़े।

आयकर ज्यादा आमदनीवालोंकी अपेक्षा थोड़ी आमदनीवालोंको बहुत भारी मालूम होता है। कल्पना करो कि २) सैंकड़ा कर लिया जाता है। अब जिसकी आमदनी सौ रुपया साल है। उसका निर्वाह भी नहीं होता। अगर उससे २) रुपये और लेलिये जाँयगे तो उसकी आत्मा कलकलाट करेगी। उसे दो रुपये देना बहुत ही अखरेगा परन्तु जिसकी आमदनी १००००) दस हज़ार रुपये साल है वह २००) दो सौ रुपये आसानीसे दे सकेगा। उसे वैसी तकलीफ न होगी। बहुत होगा तो उसे अपने विलास द्रव्यमें कमी कर देनी पड़ेगी। परन्तु ग़रीबकी मरनेकी नोबत आ जायगी। उसे जीवन साम-

ग्रीमें कमी करनी होगी। भारतमें पहले सरकारने यह ठहराया था कि ५००) की आमदनीसे जिनकी आमदनी कम हो उनसे कर न लिया जाय परन्तु जब लोगोंको इसमें दुःख होता देखा गया तो सरकारने इस तादादको १०००) कर दिया । परन्तु इस तरकीबमें एक कमी है और वह यह है कि जिनकी आमदनी ९९९ तक है उन्हें एक पाई भी करमें नहीं देनी पड़ती और जिनकी आमदनी १०००) है उन्हें एक हज़ारकी आमदनीका करदेना पड़ता है अर्थात्, एक रुपया सालकी ज्यादा आमदनी होनेसे एकदम हज़ारकी आमदनीका कर देना पड़ता है। यह बड़ी विषमता है। इस विषमताको दूर करनेके लिये एक तरकीब काममें लाना चाहिए। ज़िन्दगीकी आवश्यकताके लिये कमसे कम एक तादाद मुक़र्रर कर लेना चाहिए और उस तादाद जितनी रक़मका कर किसीसे न लेकर ऊपरकी रक़मपर कर लेना चाहिए। जैसे सरकारने १०००) की तादाद मुक़र्ररकी है तो हज़ार तककी आमदनीका कर किसीसे न लेकर इससे ऊपर जितनी रक़म हो उसपर कर लेना चाहिए। कल्पना करो कि मदनगोपालकी आमदनी १०००) रुपया सालाना है और राधाचन्द्रकी ११००) रुपये सालाना । ऐसी सूरतमें मदनगोपालसे कुछ नहीं लेना चाहिए और राधाचन्द्रसे १००) रुपये पर कर लेना चाहिए।

आयकरके विरुद्ध एक पुकार उठाई जासकती है वह यह है कि इससे देशकी सम्पत्ति बढ़ानेके लिये उत्तेजना नहीं मिलती। इंग्लेंड जैसे देशमें जहांपर पूंजी इकट्ठा करनेकी बहुत ही इच्छा है वहांपर ऐसे कर डालनेसे कोई हानि नहीं परन्तु

भारत जैसे देशमें इसका असर अच्छा नहीं पड़ता। कल्पना करो कि नारायण सहाय और मांगीलाल १००००) हज़ार रुपया साल कमाते हैं। दोनोंको कर भी बराबर देना पड़ता है। नारायणसहाय सारा रुपया ख़र्च कर देता है और मांगीलाल कम ख़र्च कर रुपया बचाता है। इस बचतसे जो उसकी आमदनी बढ़ती है उसपर मांगीलालको नारायणसहाय से ज्यादा कर देना पड़ता है। इस ज्यादा करका आम लोगों-पर यह प्रभाव पड़ता है कि उन्हें बचानेकी जगह सारी आम-दनीको ख़र्च करदेनेकी उत्तेजना मिलती है। इसके परिणाममें देशकी सामान्य पूंजी नहीं बढ़ती और देशके उद्योग धंदोंको उत्तेजना नहीं मिलती अतएव आयकरसे देशी कारीगरीको हानि पहुँचती है। इस प्रकार आयकरके विरुद्ध बड़े ज़बरदस्त उज़्र किये जासकते हैं।

आयकर प्रायः प्रत्यक्ष कर है, किसी समय परोक्ष भी हो जाता है:—ऊपरी निगाहसे देखनेवालेको मालूम होगा कि आयकर हमेशा प्रत्यक्ष कर होता है परन्तु कितने ही प्रसंगोंमें वह परोक्ष कर हो जाता है। जब बचाया हुआ रुपया उत्पादक रीतिसे नहीं काममें लाया जाता और उसमेंसे कर देना पड़ता है तब वह प्रत्यक्ष कर होता है क्योंकि उस करका भार कर देनेवालेको ही सहना पड़ता है। परन्तु जो वह रुपया उत्पादक होनेके लिये पूंजी बना दिया गया हो और उसमेंसे कर दिया गया हो तो वह परोक्ष कर हो जाता है क्योंकि उसका असर कर देनेवालोंपर न पड़ उन कारीगरोंपर पड़ता है जिन्हें उस पूंजीमेंसे तनख़्वा मिलती। कल्पना करो कि लक्ष्मीदत्त बड़ी

भारी मिलका मालिक है। वह १००००) रुपये करके देता है। अगर यह रुपया न देता तो कारीगरोंको मजदूरी ज्यादा मिलती परंतु कर देनेसे कारीगरोंको ओछी तनख्वा मिली। यह कर परोक्ष कर है। ऐसे करोंमें भारत जैसे देशके धंदोंमें बाधा पड़ती है। क्योंकि यहांपर पूंजीकी बड़ी कमी है। जहांपर पूंजी मारी मारी फिरती हो वहांपर ऐसे करोंसे कुछ हानि नहीं होती। इंग्लेंडका ऐसा ही हाल है। वहांपर पूंजी बहुत है। वहां आयकर लगना बुरा नहीं। आयकरसे कितने ही प्रपंची मनुष्योंको प्रपंच करनेमें उत्तेजना मिलती है:—आयकरके विरुद्ध यह भी एक बात खड़ी होती है। राजके कामदारोंको यह बातभी ध्यानमें रखना चाहिए कि अमुक करके डालनेसे लोगोंकी नीयत ख़राब होगी या क्या? हम यह नहीं कहते कि आयकर प्रपंची और अविश्वासी मनुष्योंके उत्पन्न करनेका मूल कारण है परन्तु ऐसा कहे बिना नहीं रह सकते कि छल प्रपंच करनेका इससे मनुष्योंको मौक़ा ज़ुरूर मिलता है। परन्तु मौक़ा होते हुए भी जो छल करना पसंद नहीं करते नहीं करेंगे, यह उज्र आयकरको उठा देनेके लिये काफ़ी नहीं। परन्तु इतनी बात सही है कि जिनकी आमदनी सबको मालूम है वे और जो सच्चे पुरुष हैं वे ही पूरा पूरा कर देंगे, और और, जो अविश्वास पात्र (छली) हैं वे बराबर कर न देंगे। इस तरह विषमता हुए बिना न रहेगी।

चीज़ोंपर जो कर डाला जाता है वह आवश्यक चीज़ोंपर न डालकर ऐश आरामकी वस्तुओंपर डाला जाना चाहिए:—हम पहले बतला आये हैं कि जिस क़दर आमदनीसे

ज़िन्दगीकी आवश्यकता पूरी हो उसपर कुछ कर न लेना चाहिए या हरेक मनुष्यको चाहिए कि वह अपना गुज़र होनेके बाद जो बचावे उसमेंसे कुछ भाग राजमें भी दे देवे। इसपरसे यह बात निकालनी चाहिए कि जीवनोपयोगी चीज़ोंपर कर नहीं डालना चाहिए ऐश आरामकी चीज़ोंपर कर डालना चाहिए। अगर यह बात मानी जाती है कि उन आदमियोंसे कर न लिया जाय जिनकी आमदनी उनके आवश्यक कामोंमें पूरी हो जाती है तो यह बात भी मानने योग्य है कि चीज़ोंपर कर डालकर उनकी क़ीमत न बढ़ाई जानी चाहिए। दूसरी रीतिसे देखें तो जो ग़रीब ऐश आरामकी चीज़ोंको काममें लाता है जैसे:—तम्बाखू भांग, गांजा, शराब वग़ैरा वह करसे क्यों छोड़ा जाना चाहिए। अगर कोई आदमी ऐश आरामकी चीज़ोंको मोल ले सकता है, वह ऐसे विचारसे कि इसकी आमदनी थोड़ीसी है, क्यों करसे छूटना चाहिए। उसे अपनी आवश्यक चीज़ोंसे बचतमेंसे जिसे वह ऐश आरामकी चीज़ोंमें ख़र्च करता है—सरकारमें भी कुछ हिस्सा देना चाहिए।

प्रश्न.

(१) कर डालनेकी क्यों ज़ुरूरत है ?

(२) राज्यसे रक्षापानेवाले आदमी क्या करसे बचने चाहिए ?

(३) अर्थशास्त्री एडमस्मिथके कर डालनेके चारों नियम बतलाओ ?

(१७) अगर आयकर सदाके लिये नियमित हो, तो चिरस्थायी और अचिरस्थायी आमदनीवालोंसे एकसा कर लेना चाहिए, इस बातको दृष्टान्त देकर समझाओ ?

(१८) प्रत्येक आमदनीको पूंजीके रूपमें लाकर कर लगाना क्यों नहीं निभेगा ?

(१९) ज्यादा आमदनीवालोंकी अपेक्षा कम आमदनीवालोंको आयकर क्यों विशेष अखरता है ?

(२०) इस तकलीफको दूर करनेके लिये भारतमें आयकर किस तरकीबसे डाला गया है ?

(२१) उसमें क्या भूल है ?

(२२) भूलको दूर करनेका क्या उपाय है ?

(२३) आयकर भारतके समान देशके अनुकूल क्यों नहीं है ?

(२४) आयकर क्या सदा प्रत्यक्ष कर होता है ?

(२५) जब आयकर पूंजीमें ले दिया जाता है तब उसका भार ख़ास तोरपर किसपर पड़ता है ?

(२६) "कई एक छली आयकरमें प्रपंच कर सकते हैं", आयकरके विरुद्ध यह दलील देना वाजबी है या क्या ?

(२७) यह सिद्धान्त मान लिया गया है कि हरेक मनुष्य अपने निर्वाहसे विशेष आमदनीका एक अमुक भाग राजमें दे। ऐसी सूरतमें किस तरहकी चीज़ोंपर कर डालनेसे इस सिद्धान्तका अमल हो सकेगा ?

विशेष प्रश्न ।

(१) विद्वानोंका कहना है कि ज़मीन किसीकी दी हुई चीज़ नहीं है। वह दिव्य वस्तु है। वह किसीकी खानगी मालिकीकी चीज़ नहीं। मनुष्य उसी चीज़का मालिक है जो उसने अपने परिश्रमसे पाई हो। इस सिद्धान्तको नीचे लिखी हुई सूरतोंमें घटित करो।

(अ) ख़राब ज़मीनको मिहनत कर ठीक की हुई ज़मीन

(आ) जंगलके भीतरके फल वग़ैरा

(इ) ईंट बनानेकी एक गाड़ीभर मिट्टी।

(ई) उसी मिट्टीसे बनाई हुई ईंटें।

(उ) एकाएक पाये हुई सोने चांदीके ढेले।

(ऊ) मिहनत कर तैयार किये हुए बाग़के पौधे।
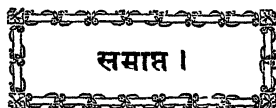
परिशिष्ट ।

विषय प्रवेश ।

इस विभागमें हमें दो बातें लिखनी हैं। अव्वल तो सामान्य स्वामित्वके विषयमें ओवनफुरियर वग़ैराकी तरकीबें और दूसरे हिन्दुस्थानकी जगातके विषयमें मिस्टर फौसटकी सम्मति ।

१ प्रकरण ।

सामान्य स्वामित्वकी योजना ।

(१) **ओवन और फुरियरकी तरकीबः**—पहले पहल ओवन और फुरियरने सामान्य स्वामित्वकी यह तरकीब बतलाई कि "जितनी सम्पत्ति पैदा हुई हो सब मनुष्योंमें बाँट देना चाहिए । इस तरकीबको काममें लानेके लिये बहुतसे कुटुम्बोंको इकट्ठा होकर, इस तरहसे रहना चाहिए कि जिसतरह एक कुटुम्बके मनुष्य रहते हैं । हरेक मनुष्यको वही काम करना चाहिए जिस कामको वह अच्छे-से-अच्छा कर सकता हो । इस तरह सम्मिलित परिश्रमसे जो सम्पत्ति पैदा हो उसे सबमें बाँट लेना चाहिए" "इस तरकीबको काममें लानेसे बहुतसी व्यावहारिक दिक़्क़तें पैदा हो जाँयगी" इस विचारके उठनेसे सेन्ट सायमोन और फुरियरने कुछ फेरफार कर सामान्य स्वामित्वकी तरकीबें निकाली हैं ।

(२) **सेन्ट सायमोनकी तरकीबः**—सेंट सायमोनका मुख्य हेतु सामान्य स्वामित्ववाले जनसमूहमें मिहनत करनेकी ठीक ठीक व्यवस्था करनेका था। अगर ऐसा न किया जाय तो सब गड़बड़ हो जाय। इस बातका कोई भरोसा नहीं होता कि प्रत्येक मनुष्य उसी कामपर लगाया जा सकेगा, जिस कामको वह अच्छे-से-अच्छा कर सकता है, क्योंकि अरुचिकर कामको कोई भी करना नहीं चाहता। इन अड़चनोंको दूर करनेके लिये सेन्ट सायमोन कहते हैं कि प्रत्येक जनसमूहमें मुखिया मुक़र्रर होने चाहिए। ये मुखिया मिहतनका वाजबी तोरपर विभागकर यह ठहरा दें कि कौनसा काम कौन करे और ये ही कमाई गई सम्पत्तिको यथायोग्य बाँट दें। ये जिसको जितनी सम्पत्ति दें वह उस सम्पत्तिको मनमाने तोरपर काममें लानेका अधिकारी समझा जाय।

(३) **फुरियरकी तरकीबः**—फुरियरने इस विषयकी तरकीब औरभी ख़ूबीसे निकाली। उसका कहना है कि प्रत्येक जनसमूहमें क़रीब क़रीब २००० दो हज़ार मनुष्य होने चाहिए। हरेक जनसमूहको एक स्थानमें पास पास ही रहना चाहिए। प्रत्येक मनुष्यकी निजकी सम्पत्ति भी रक्खी जानी चाहिए और वह उसके बेटे पोतोंको भी मिलनी चाहिए। पूंजीका बदला भी मनुष्यको मिलना चाहिये। अगर कोई मनुष्य काम करनेमें अशक्त हो तो उसे अमुक रक़म

दी जानी चाहिए। फुरियरने बतलाया कि इस जन-समूहको ऐसा समझना चाहिए कि मानो सम्पत्ति पैदा करनेकें लिये बहुतसे व्यापारियोंकी कंपनी खड़ी हुई है। हरेक मनुष्यको जिन्दगीके लिये जुरूरी इतनी रक़म देनेके बाद, उत्पन्न की हुई सम्पत्तिमें तीन हिस्से करना चाहिए-अर्थात्-परिश्रमका पलटा, पूंजीका पलटा और बुद्धिका पलटा। ये हिस्से उस उस जनसमूहके मुखियाओंको करने चाहिए। मनुष्योंको तीन भागोंमें बाँट देने चाहिए; परिश्रमी, बुद्धिका काम करनेवाले और निपुण कारीगर, किस मनुष्यको किस श्रेणीमें रक्खा जाय ये उसके साथियोंके मतसे ठहराया जाय। इन तीनों तरहके मनुष्योंको तनख्वा अमुक परिमाणमें दिये जानेका निश्चय किया जाय, मिहनतमें एकता की जाय और खाने पीनेके विषयमें सबको स्वतन्त्रता रहे। इस विषयमें एक बात और पेश हुई थी। वह यह कि जनसमूहका खर्च कम हो इस लिये एक ही बड़े भारी मकानमें सबके रहनेकी व्यवस्था की जाय।

परिशिष्ट।

२ प्रकरण।

(फौसेटकी बेरोकटोक व्यापारनीति।)

इंग्लेंड बेरोकटोक व्यापारनीतिसे कुछभी विरुद्ध चला तो

रक्षकनीतिके अनुयायिओंको अपने पक्षका प्रबल प्रमाण मिल जायगा, यह बात हम कह चुके हैं। कितने ही लोगोंका कहना है कि हिन्दुस्थानमें जो कपड़ेपर ज़क़ात ली जाती है उससे रक्षकनीतिको सहायता मिलती है इस विषयमें यहाँपर कुछ संक्षेप में कहें तो ठीक होगा। इग्लेंडके कपड़ेके व्यापारी कहते रहते हैं कि यह ज़क़ात रक्षक कर है इसलिये पार्लियामेन्टकी सत्तासे इसे एकदम उठा देना चाहिए क्योंकि जबतक वह रक्खी जायगी तबतक यह कहा जायगा कि इंग्लेंडकी सारी प्रजा रक्षकनीतिका अनुमोदन करती है। इस बातपर अभी अति ज़्यादा लक्ष्य दिया गया है क्योंकि बम्बईमें कपड़ेकी बड़ी बड़ी मिलें खुल गई हैं और उनमें वैसा ही कपड़ा बनाया जाने लगा है जैसा कि बिलायतसे आता है। अतएव ज़क़ातसे हिन्दुस्थानके व्यापारियोंकी उतनी रक्षा होती है जितना कि कर इंग्लेंडके कपड़ेपर लिया जाता है। किसी भी रक्षक करपर अर्थशास्त्रके अनुकूल इस प्रकारकी हरकतें लागू पड़ती हैं। जिस कपड़ेपर ज़क़ात ली जायगी उसकी कीमत ज़्यादा हो जायगी इतना ही नहीं, इस ज़क़ातसे हिन्दुस्थानके कपड़ेकी भी क़ीमत बढ़ जायगी। इससे सरकारमें जितना पैसा जमा होगा उससे ज़्यादा दुनियाके घरसे निकल जायगा। अतएव यह कर भी, अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे, और-और रक्षक करोंके मुआफ़िक ख़राब ही है, ऐसा कहनेमें हमें ज़रा भी हिचकिचानेकी ज़ुरूरत नहीं है। परन्तु इस विषयका निर्णय केवल अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे ही नहीं करना है। इस विषयका राजनीतिकी दृष्टिसे निर्णय करना यहाँ पर योग्य नहीं है, तथापि इतनी बात तो प्रकट ही है कि ब्रिटिश

पार्लियामेन्टको अपने आधीन देशोंमें लिये जाते करपर किस तरहकी देखरेख रखना मुनासिब और बुद्धिमत्तापूर्ण है, इस बारेमें अनेक आवश्यक राजनैतिक विचारोंपर ध्यान देना पड़ता है। प्रजाके अभिप्रायको जाने बिना कर डालने जैसी भूल शायद ही कोई दूसरी हो। कर डालनेकी जो रीति एक देशमें बहुत ही अच्छी हो वह दूसरे देशके अनुकूल नहीं भी हो सकती है। बहुतसे अधिकारी विद्वान् जो इंग्लेंडमें हमेशाके लिये इनकमटेक्स क़ायम रखनेके पक्षमें हैं, उन्हींका कहना है कि—इनकमटेक्स लिये बिना काम ही न चले तो भले ही—वरना हिन्दुस्थानमें इनकमटेक्स नहीं लेना चाहिए; क्योंकि इसके वसूल करने करानेमें बड़ा अन्याय होता है और अनीति फैलती है। हिन्दुस्थानमें कपड़ेसे ज़क़ात एकदम उठा देनी चाहिए, या, क्या इस बातका निर्णय करनेमें उस देशकी विलक्षण स्थितिको ध्यानमें रखना बहुत ज़रूरी है। वहाँके लोगोंमें कितने ही मनुष्य ऐसे ग़रीब हैं और ऐसी तंगीसे चलते हैं कि सामान्यरीतिसे काममें आनेवाली चीज़ोंमें नमकके सिवाय किसी चीज़पर कर डाला ही नहीं जा सकता और नमकका कर इतना ज्यादा बढ़ गया है कि जिसकी कोई सीमा नहीं। जब सामान्य रीतिसे काममें आनेवाली ऐसी कोई वस्तु नहीं हैं जिसपर कर-डाला जा सके, तब हिन्दुस्थानमें कर लेनेके बहुत ही थोड़े मार्ग हैं, क्योंकि करके ज्यादा वसूल होनेका मार्ग ही यही है कि जिस चीज़को सब कोई काममें लावें उसपर कर लेनेसे उसका असर सबपर पड़ता है और रक़म ज्यादा वसूल होती है। हिन्दुस्थानका ख़र्च जिस जल्दीसे बढ़ गया महसूल नहीं बढ़ा। अतएव,

इस कमीको हिन्दुस्थान कर्ज़ लेकर, बारबार पूरी करता है, उसका ऋण बढ़ता ही गया है। और एक बात है कि अख़ीरी सालोंमें अकालोंके पड़ जानेसे उसकी महसूल सम्बन्धी स्थिति और भी नाजुक होगई है। इन अकालोंमेंसे अख़ीरी दोमें १,६०,००००० एक करोड़ साठ लाख पाउंड खर्च होगया है। ऐसी स्थितिमें वर्तमान समयमें आते हुए महसूलके किसी भी मार्गका बंद करना बुद्धिमत्ताका काम नहीं है। अतएव कपड़ेकी ज़क़ात‌को दूर करदेनेकी दरख्वास्तके विचारके साथ इस बातका भी विचार होना चाहिए इसकी आमदनी किस तरह ठीक की जायगी। इंग्लेंडके कपड़ेके व्यापारी, जिन्होंने इस करके विरुद्ध बहुत कुछ कहा है, अभीतक यह नहीं बतला सके कि इस करके एवज़में किस तरहका कर डालना चाहिए, और न इस तरहका कोई कर, किसीको सूझ ही पड़ा कि प्रजाको कष्ट न हो और सरकारकी आमदनी ठीक हो जाय। हिन्दुस्थानमें जो सुधार हुआ है उससे सरकारकी इतनी आमदनी बढ़ जायगी कि कपड़ेकी ज़क़ात उठा दी जासके परन्तु कपड़ेकी ज़क़ात उठा देनेके पहले इसकी खातरी हो जानी चाहिए कि ये सुधार हमेशा कायम रहेंगे और नमक वग़ैरा करकी रीतियोंको सुधारना चाहिए।

कपड़ेकी ज़क़ात उठा देनेके लिये जो अग्रेसर हुए हैं उनका उद्देश यही सही कि वे नहीं चाहते कि इंग्लेंड प्रत्यक्ष रीतिसे या परोक्ष रीतिसे रक्षणनीतिका अनुयायी रहे परन्तु इस रक्षण करको उठा देनेकी कहनेके पहले सोचना चाहिए कि बहुतसे अंग्रेज़ी राज्य बहुत ज्यादा रक्षक कर ले रहे हैं। उनके बीचमें जब कोई दस्तन्दाज़ी इंग्लेंड नहीं करता तब यह कहना कहाँतक मुनासिब है कि

हिन्दुस्थानमें से अमुक कर वहांके लोगोंकी इच्छाके बिना उठा-दिया जाय। अगर इंग्लेंड इस तरहका काम करे तो उसे यह न कहा जायगा कि वह अंग्रेजी बनियोंके लाभके लिये हिन्दु-स्थानियोंके गले घोंटती है? अभी हिन्दुस्थानमें इसी तरहका विचार फैल गया है। इस तरहके रक्षक करसे इंग्लेंडके व्यापा-रको जो हानि होती है उसको विशेष महत्व दिया जाता है और ऐसे रक्षक करके साम्हने जो असली दलील पेश की जा सकती है कि—जितनी रक़म सरकारमें आती है उससे ज्यादा लोगोंके पाससे निकल जाती है—उसपर कोई ध्यान नहीं देता। इंग्लेंड बेरोकटोक व्यापारका पक्षपाती है इससे हिन्दुस्थानमें आते हुए परदेशी कपड़ेपर ज़क़ात न लेनी चाहिए इस कहनेमें वही भूल है जो भूल रक्षकनीतिमें है-अर्थात्-माल तैयार करने-वाले विदेशी कारीगरोंके स्वार्थको देखा जाता है; मालको काममें लानेवाले हिन्दुस्थानी लोगोंके स्वार्थको ध्यानमें नहीं रक्खा जाता।†

---

† Fawcett's Free Trade, and Protection.

श्रीमान् पंडित गिरिधरशर्म्माजीकी अन्यान्य पुस्तकें।

हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीजके उत्तमोत्तम ग्रन्थ।

हिन्दी साहित्यको उत्तमोत्तम ग्रन्थरत्नोंसे भूषित करनेके लिए इस ग्रन्थ-मालाके निकालनेका प्रयत्न किया गया है। हिन्दीके नामी नामी विद्वानोंकी सम्मतिसे इसके लिए ग्रन्थ तैयार कराये जाते हैं। प्रत्येक ग्रन्थकी छपाई, सफ़ाई, काग़ज़ जिल्द आदि सभी बातें लासानी होती हैं। स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं। जो स्थायी ग्राहक होना चाहें, उन्हें पहले आठ आना जमा कराकर नाम दर्ज करा लेना चाहिए। अबतक इसमें जितने ग्रन्थ निकले हैं, उन सबहीकी प्रायः सबही पत्रोंने एक स्वरसे प्रशंसा की है। नीचे लिखे ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं:—

१।२ **स्वाधीनता**—जान स्टुअर्ट मिलकी लिबर्टीका अनुवाद। अनुवादक, सरस्वतीसम्पादक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी इसके साथमें लगभग ६० पेज-की मिलकी जीविनी और दो चित्र भी हैं। मूल्य दो रुपया।

३ **प्रतिभा**—श्रीयुत बाबू अविनाशचन्द्रदास एम. ए. बी. एल. के कुमारी नामक उपन्यासका अनुवाद। अनुवादक, श्रीयुत नाथूराम प्रेमी। मूल्य सादी जिल्दका एक रुपया।

४ **फूलोंका गुच्छा**—ग्यारह चुनी हुई सुन्दर सुन्दर गल्पोंका संग्रह। इसे भी श्रीयुत नाथूराम प्रेमीने लिखा है। मूल्य दश आना।

५ **आँखकी किरकिरी**—साहित्यसम्राट् कविवर रवीन्द्रनाथ टागोरके 'चोखेर वाली' नामक प्रसिद्ध उपन्यासका अनुवाद। अनुवादक, पं० रूपनारा-यणजी पाण्डेय। मूल्य डेढ़ रुपया।

६ **चौबेका चिट्ठा**—स्वर्गीय बाबू बंकिमचंद्र चट्टोपाध्यायके 'कमला-कान्तेरदफ्तर'का अनुवाद। अनुवादक, पं० रूपनारायणजी पाण्डेय। मूल्य ग्यारह आना।

७ **मितव्ययिता**—डॉ० सेमुएल स्माइल्सके 'थिरिफ्ट' ग्रंथका सरल अनुवाद। अनुवादक, बाबू दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए.। मूल्य चौदह आने।